प्रकाशकीय

जैनजनताको भलीभाति विदित ही है कि समितिने 'सुत्तागमे' के रूपमे ३२ पवित्र सूत्र (मूलपाठ) जो कि अमूल्य कोशके समान हैं, प्रकाशित किए है। इसके पहले अशमे ११ अग सूत्रोका समावेश है, इसमे ३५००० श्लोक है, और १३५० पृष्ठ है।

दूसरे अश (भाग) मे १२ उपाँग, ४ छेद, ४ मूल, आवश्यक तथा परिशिष्टमे कल्पसूत्र, सामायिकसूत्र और श्रावक-प्रतिक्रमणसूत्र सन्निहित हैं। इसके १३०० पृष्ठ और ३७००० श्लोक है। इस प्रकार दोनो भागो मे 'सुत्तागम' समाप्त हुआ है। यह महाकाय ग्रन्थराज नवीन और अनुपम पद्धतिसे ऊची शैलीमे एव शुद्धिमे तो अभूतपूर्व और अश्रुतपूर्वरूपमे तैयार होकर प्रकाशित हुआ है। यह ग्रन्थ महोदधि श्रुतज्ञानके महाभडारके समान भासित होता है। इस १६ पेजी पुस्तकाकार सुदर वाईडिग 'अप टु डेट' छपाई सफाई वाले भीमकाय पुस्तकराजको तैयार करनेमे कई वर्ष लगे है। अत्यन्त प्रकृष्ट परिश्रमके वाद यह ग्रन्थ समाजके समक्ष प्रस्तुत हुआ है। इस महान् ग्रन्थकी प्रशसा देश विदेशके वडे वडे उद्भट एवं प्रखर विद्वानोने मुक्त कठसे की है यह अपूर्व ग्रन्थरत्न देश विदेशके विद्यालयो एव महापुस्तकालयोंमे भी मान, प्रतिष्ठा और शोभा प्राप्त कर चुका है। वहा से पर्याप्त सख्यामे प्रमाणपत्र और प्रशसापत्र भी आए है। और कई विद्वान मुनिराजोने भी आकंठ प्रशसा की है। इसकी अधिक प्रशसा करना सुवर्णको माजनेके समान है।

अपने प्रत्येक जैन पुस्तकालयमे यह महापुस्तकरत्न अवश्य होना ही चाहिए। हमारे प्रत्येक स्थानकवासी जैनका यह मुख्य कर्तव्य है कि वह अपने गृहपुस्तकालयके लिये इसे अवश्य मगाए और प्रतिदिन व्यवधानरहित निरतर स्वाध्याय करे, जिससे आपके सौत्रिक ज्ञानकी वृद्धि हो।

इसके मूल्यकेलिए इसी पुस्तकके १६० वे पेज पर 'श्रीसूत्रागम प्रकाशक समितिकी ओर से प्राप्तव्य साहित्य' देखे। इतना ध्यान अवश्य रहे कि पुस्तकोका मूल्य पहले भेजने वाले को ही ये ग्रन्थरत्न भेजे जाते है, वी० पी० द्वारा भेजनेका नियम नही है। इसलिए सूत्रप्रेमी महानुभाव अतिशिघ्रता करे। + + +

अपने लोक समाजका बहुभाग प्राकृत अर्धमागधी न जाननेके कारण 'सुत्तगमे' के बाद अब 'अर्थागम' का आरभ किया है। इसमें ३२ सूत्रोका हिन्दी अनुवाद 'सुतागमे' के अनुसार आपको सरस रूप से पढनेको मिलेगा। साधन सामग्री मिलनेपर आपके कर कमलोमें उन सबको यथासमय सोपनेका प्रयास चल रहा है।

साथ ही यह भी सोचा है कि जो जो सूत्र सर्वसाधारण जनताके लिए वर्णमाला की तरह प्राथमिक लाभ पहु चानेमे उपयोगी है। मनुष्य-मात्रको उनके स्वाध्यायसे चरित्र सगठन और मनोबलके विकासका अवसर मिल सकता है, जहा उनमें अधिक सूक्ष्मचर्चा न होकर बादरभावका वितान है। उनको पहले प्रकाशमे लाया जाय। ठीक इसी क्रम की अपेक्षासे कार्य प्रगति पर है।

इसके बारेमे कुछ लोगोकी यह माग आई है कि प्रतिवर्ष अष्टान्हिक पर्वाधिराजके अवसर पर कल्पसूत्रका व्याख्यान पढा और सुना जाता है। क्योकि इसमे स्थूलविषयोकी जानकारी आबालवृद्ध सबको सुनते सुनते होने लगती है। श्रोताओको भक्तिरस आनेसे उनका सुननेमे मन भी लगता है। इसीलिए हम जनता जनार्दनकी

इस आवश्यकताका पूर्ण करनेकेलिए श्रीरायचन्द कवि द्वारा रचित कल्पसूत्र हिन्दी कविताबद्ध बड़ी कठिनाईसे पाकर उसे प्रकाशित करके बडे हर्षसे स्वाध्यायार्थ अर्पण कर रहे है। आशा है विद्वद्वर्ग सतत लाभ उठानेका प्रयत्न करेगा।

'अर्थागम' मे भी सारे सूत्रोका यथाशक्य हिन्दी और पद्यमय प्रकाशन क्रमश यथासमय आपके सामने प्रस्तुत होनेवाले है। आशा है आप महानुभाव भगवानके प्रतिपादित तत्वामृतका पान स्वाध्याय तप द्वारा करके अपने श्रीमुख और जिव्हाका लाभ लेकर उन्हे सार्थक करे।

'सुत्तागमे' की तरह 'अर्थागम' के पुष्पोका भी प्रत्येक स्थानकवासी भाई की लायब्ररीमे होना आवश्यक है।

प्रकाशनकार्य—अलग अलग एव सयुक्तरूपसे अब तक सूत्रोकी १३००० प्रतिएं प्रकाशित हो चुकी है। सूत्रोकी छपाई और बाइडिंग अद्वितीय सुदर आकर्षक और 'दादा खरीद करे और पोता बर्ते' की उक्तिके अनुसार खूब मजबूत है, इनके अतिरिक्त कल्पसूत्र की प्रतिया १००० और सम्मिलित है। साथ ही अन्यान्य पुस्तके भी समितिकी ओरसे छपी है।

निवेदन—अन्तमे शासन प्रेमियोसे निवेदन है, कि आप ज्ञातपुत्र महावीर भगवानके शासनका सम्मान ध्वज ऊचा उठानेके लिए इस समितिके स्तम्भ, सरक्षक, सहायक और सदस्य बनकर श्रुतज्ञान-प्राचारमे भक्तिभाव पूर्वक साथ देनेकी उदारता दिखाए।

निवेदक—

मंत्री—श्री रामलाल जैन

प्रधान—मास्टर श्री दुर्गाप्रसाद जैन
B. A. B. T.

भूमिका

१—कल्पसूत्रसे जैन समाजके आबालवृद्ध सब ही परिचित हैं, इसका अधिक बखान करना सूरजको लालटेन दिखानेके समान है। इसके अनुवाद (और टीकाए सस्कृत-गुजराती हिन्दी आदि) कई भाषाओ में पाए जाते हैं, परन्तु आज तक इसका अनुवाद हिन्दी कविता मे नही देखा गया। आज इसे पढकर अचम्भा होता है कि सतकवि श्रीतुलसीदासकी रचनाकी पदपद्धतिका अनुसरण करके श्री रायचन्दकविने प्राकृतभाषाबद्ध कल्पसूत्रको हिन्दी कविताके साँचेमें ढालकर कमाल कर दिखाया है।

२—ये कवि महानुभाव कब हुए ? इसकी पूर्तिकेलिए हमे कोई ठोस प्रमाण नही मिला है, मात्र प्रस्तुत ग्रथके उपसहारके आधार पर इतना पता लगता है कि "राजा डालचन्द, ओसवशीय, गोखरू गोत्रज, बनारस निवासीने अपने मित्र कवि रायचन्द को इस ओर प्रेरणा देकर कल्पसूत्रकी हिन्दी कवितामे रचना करवा कर शास्त्र प्रचार और ज्ञान प्रभावनाका लाभ लिया।

३—आपकी इस रचनामें दोहे, चौपाई, सोरठे आदि छदोका विशेष प्रयोग है। १४ स्वप्न वर्णन घनाक्षरी छद मे अनूठे ढगसे करके मानो अपनी रचनाको चार चाद लगादिए हैं। सचमुच यह काव्य नौ रसोसे भरपूर है। पाठक इसे पढते पढते आनन्द विभोर हो जाता है। कभी भक्तिरससे मन भरपूर होकर शातरसमे सराबोर हो जाताहै। पाठककी नस नसमें भक्ति, वैराग्य और सद्‌भावनाका वेग प्रवाहित हो उठता है।

मुहावरेदार शब्दोका जोड यह स्पष्ट करता है कि आपने अपने समयकी जनतामे इस रचनासे नवचेतना पैदा की है।

भाषाकी दृष्टिसे आपकी जन्मभूमि शायद व्रज रही है, व्रजभूमिकी भाषा उससमय सब कवियो ने पसद की थी। इसी भाषामें आपका यह योग भी सिद्ध हुआ है। आपने कई जगह **जिनजन** शब्द दोहरा कर बडीविलक्षणता दिखाई है, जैसे—

जिनजनमनकी आनन्द भारी २१३," "जिननन गनके पूरन कामी ५०७"
जिनजन जीवनको हित कीजे ५०६, इत्यादि ।

कही कही छोटे छोटे वाक्योमे वहुत बडा गंभीर भाव स्पष्ट करके मानो 'दरियाको कूजेमें वद करनेकी उक्ति' चरितार्थ की है जैसे—महावीर प्रभुने दीक्षाके बाद ज्ञातवनखडसे विहार करते समय कविने मानो जनताके मु हसे कहलवाया है कि **"जिनवर विहरे विरहा दैकै"** अर्थात् भगवान हमे विरह वियोगमे डालकर विहार कर रहे हैं। जहाँ भगवानने अनेक यातना और परिषह सहे हैं वहाँ भगवान्‌के शातरसका वखान बडी उत्तम रीतिसे सक्षेपमे किया है।

"सहनशील जिन सब सह लीनौ ५२३" इत्यादि ।

४—प्रस्तुत ग्रथके स्वाध्यायसे हमे जो कुछ खट्टा मीठा अनुभव हुआ है हम उन्हींके शब्दोमें विचारशील ससारके सामने अपनी अनुभूति रख रहे हैं, सुज्ञजन इस पर विचार और गभीर चिंतन करें और चित्तमन्थनमे जो कुछ सार प्रगट हो उसे विश्वके सन्मुख रक्खें ।

सबसे पहले हम कविकी विचार सरणीको समझ कर भव्यभावुकोको उनका अनुभूत परिचय देते हैं—

५—**कविकी धारणाका निर्णय**—कविकी रचनाके आधार पर हमे यह अनुमान होता है कि आपकी जैनेतर धारणा थी । क्योकि 'पेटकी वातका पता वोलते समय लगजाता है' की लोकोक्ति के अनुसार आपने अपनी धारणा का परिचय पाचवें अछेरेमे दिया है। वहा आप लिखते हैं कि—

द्रौपदीका अपहरण होनेपर वुआ कु ती कृष्ण म० के पास आकर विनय करके वोली कि—कृष्ण ! किसीने द्रौपदीको चुरा लिया है । वहुत खोज करने पर भी उसका कही पता नही लग रहा है। त्रिखडी राजा होनेके कारण आपके राज्यका विस्तार असीम है इसलिए आपही कही इसका पता लगाएँ। तव कृष्ण म० ने हँसीमें एक टोना लगाकर कहा कि—

"कहा करी तुम मिल पाचो पिय, राखि न सके पांचमें इक तिय ।२८५।
सोरह सहस अठोतरसै तिय, एकाको राखत हम ज्यों जिय॥"

'तुम पाच पाडव एक स्त्रीको भी नही सम्भाल सके, तव मुझे देखो न

मैं अकेला १६१०८ रानियोको अपने जी जान की तरह वडी सतर्कतासे सभालकर रखता हूँ। यहाँ आपने कृष्णको १६१०८ रानियो का योग देकर हैंदवी धारणाका ठीक परिचय दिया है। क्योकि "रुप्पिणीपामोक्खाण सोलसण्ह देवीसाहस्सीण" "सुत्तागमे, अतगडदसाओ।" आगमकी दृष्टिसे आपके कथनका यहाँ मेल नही मिलता। किन्तु आपने अपने विचार धाराका रग इसमे भी लघुलाघवी कलासे खूब चढाया, जिसका सूक्ष्मवीक्षण से ही पता लग सकता है, अन्यथा नही। चैत्ययुगमे चैत्यवासियोने भी तो सूत्रोका रग वदला था।

६—**विलक्षण कलाकार कवि**—आपकी रचनाशैली विद्वत्तापूर्ण, सरस और इतनी रम्य है कि पाठक उस ओर आकर्षित हुए विना नही रह सकता। आपकी कृति यह साक्षी देती है कि आप अच्छे आगमज्ञ भी थे। यही कारण है कि आपने कई कठिन शास्त्रीय विषयोको वडी चतुराई से अच्छे मार्मिक शब्दोमे हल करके हिन्दी ससारके सामने एकवाक्यतासे अनूठा भाव स्पष्ट कर दिखाया है, जिसे पढकर पाठकके मनमें किसी प्रकारकी उलझन या विकल्प नही रह पाता। जैसे कि आठवें अछेरेमें गोशालककी छोडी हुई तेजोलेश्याका वर्णन बडे अच्छे ढगसे करते हुए आप लिखते हैं कि—

"तिनहि जारि वह तेजोलेसा, गयो जहां महावीर जिनेसा ॥३०२॥
दै प्रदच्छिना पाछे फिर्यो, गोसालक ही ताते जर्यो।
पै जिनवरके तनके माहीं, अरुन चिन्ह इक भयो तहा हीं ॥३०३॥
काल पाई सोउ मिटि गयो, पै जगमें यह अचरज भयो।"

गोशाला दोनो मुनियोको तेजोलेश्या द्वारा जलाकर फिर उसे भगवान् पर छोड़ता हैं और वह महावीर भगवान् को प्रदक्षिणा देकर उसीके देहमे घुस कर अन्तमे उसे जलाकर उसका नाम शेष कर देती है। इधर तेजोलेश्याकी गर्मीसे भगवानके शरीरमे एक लाल निशान पडगया और कालान्तरमें वह भी जाता रहा। कविका भाव वतानेका ढग कितना अच्छा है। भगवती सूत्र के १५वें शतकके इस प्रकरणको आपके शब्दोमें कितने अच्छे ढगसे मस्तकस्थ किया जा सकता है।

अधिक क्या लिखा जाय आप जैनेतर विचारके होकर भी जैनदर्शनकी चप्पा चप्पा बातोसे परिचित थे। कल्पसूत्रकी रचना आपकी अमर विभूति रहेगी। भाषा भाषज्ञ आपकी इस नवसर्जनकी बडी कदर करते हैं। इसके अतिरिक्त अब तक आपकी कोई और रचना हमारे सामने नही आई, यदि किसीके पास हो तो हमे सूचित करें।

७—भगवान् महावीर के शरीर पर बावनाचंदनका लेप—कविने वैसे तो सब प्रकारसे बहुत कुछ नवसर्जन किया है, मगर कही कही वह वेतुकी भी हाक गया है। परन्तु कच्चा पारा खानेपर जैसे वह न पचकर वाहर आ जाता है, इसी तरह यह समझदारोके बौद्धिकवलमे न पच कर वाहर आकर खटके बिना नही रहा है। जैसेकि भगवान महावीरके दीक्षाके समय देवोने उनके शरीरमें वावनाचन्दनका विलेपन किया था। वह सुगन्ध वहुत दिन तक उनके शरीरमें रमी रही, और नर नारी गण उस सुगधसे मुग्ध होकर उनके पीछे पीछे फिरने लगे, तथा तनिक सुगध हमें भी दो, यह याचना करते रहते थे। भगवान तो मौन थे, जहा पहुचे कि वही कायोत्सर्ग मे लीन हो गए, उन्हे तो किसीको कुछ देना लेना था ही नही। तब वहुतसे नर नारी उनके देहसे अपना देह घिसकर गधलेनेकी धृष्टता करने लगे।

"पुरतरुनी सौरभरस पागी, जिनसौं चंदन मागन लागीं।

जब जिनवर कछु ज्वाब न दीनौ, तियन सुतन जिनतन घसि लीनो ५२६"।

क्या चौथे आरेके लोग इतने अज्ञ थे, औरतें इतनी वेहया और निर्लज्ज एव मर्यादा हीन थी कि महात्माके शरीरसे अपना शरीर घिसती। क्या वहा के लोग इस अनधिकार चेष्टाको रोकने मे असमर्थ और सदाचार से इतने गिरे हुए थे। अज्ञात औरत अनजान आदमीसे ऐसी बेजा हरकत सूनी गली गलियारेमें तो क्या कही भी नही कर सकती। क्या लोगोको पता नही था कि भगवान देववद्य हैं। भला यह प्रकरण इतिहास की कसौटी पर चढे तो कैसे चढे ?

८—शूलपाणी यक्ष और महामारी—शूलपाणि यक्षके प्रकरणमें एक वैल मरकर शूलपाणियक्ष हो जाता है, और वह गांव पर कोपकरके

"मरी करी पशु नरकी घर घर ॥५३७" घर घरमें पशु और आदमियोंमें मरने वाली वीमारी फैलादी । गाँवके लोग और पशु बिना आई मरने लगे और वहाँ हड्डियोंके ढेरके ढेर दिखाई पडने लगे। उस गाँवका नाम भी अस्थिगाम वन गया । क्या इस देवताई जादूके प्रकरणसे मूर्तिपूजा जैसी अन्ध श्रद्धा नही वढती । क्या गावमे सोनकर्मी जीवोकी ही वहुलता थी। जब कि सब प्राणियोके कर्म अलग अलग होते हैं तो देव किसीके कर्ममें कैसे दखल दे सकता है ।

कर्मके पुष्टप्रमाणमे यह प्रसग याद आता है कि इन्द्रने निर्वाणके समय भगवान महावीर स्वामीसे क्षणमात्र आयु वढानेकी प्रार्थना की और बोला कि ऐसा करनेसे भस्मकग्रहका दोष उतर जायगा, तब प्रभुने कहा कि—

"तब बोले सुरपतिसौं जिनवर, सुरगिर चालन सकौं धरनिपर ।
पै यह समौ न टाल्यौ जाई, जो कर्मन थिति बाधि बताई ७०५॥"

भगवान बोले कि सुमेरुको कपायमान किया जा सकता है परन्तु किसीके कर्मके स्थितिबन्ध मे कोई दखल नही दे सकता। अर्थात् आयुके घटाने बढानेमे सब असमर्थ हैं। कहा यह भगवानका परम सत्य निर्णय और कहाँ वह कथा ? कर्ममर्मज्ञोको इसके पुष्ट प्रमाण देकर इसका ठीक स्पष्टीकरण करना चाहिए, जिससे लोगोकी मिथ्यात्वकी भ्रातधारणा अन्तरसे विलय हो।

६—गुरु शिष्यकी घटना—चडकौशिक तीन जन्म पहले साधु पर्यायमें है, उसके पीछे उसका शिष्य है, मेंडकीका कलेवर गुरुके पैरके नीचे दबकर मरने का आरोप लगाते हुए शिष्य उसकी आलोचना के बारेमें तीन बार कहता है। गुरु यह सुनकर क्रोधित हुआ और उसे रजोहरणसे मारनेके लिए चला । अघेरी रात में वह शिरसे कही टकराकर मरजाता है। मर कर तीसरा जन्म उसका चण्डकौशिक सापका होता है ।

लेखकने अहिंसाके पुजारी, महाव्रती, छठवी कक्षा(गुणस्थान)के मालिक धर्मध्वज द्वारा शिष्यको शारीरिक दड देनेका साहस किया है, उसकी अहिंसा समता और सहिष्णुता को मानो छप्पर पर रखवा दिया है। जैसे—

"अरु तापर अतिक्रोध पसार्यो, मुनि चेला ओघा दे मार्यो ॥५६५॥"

"बच्यो भाजि चेला गुरु क्रोधी, मरि तीजे भव भयो विरोधी।

कहा एक महाव्रती साधु और उसका कृष्णलेश्या जैसा आचरण वताना इन दोनो अवस्थाओका मेल नही खाता।

यद्यपि गुरुको अधिकार है कि वह शिष्यको सन्मार्ग पर लगावे, और शिक्षा देते समय यथायोग्य वर्ताव करे, परन्तु अपने महाव्रतोका तथा सल्लेश्याको सुरक्षित रखनेका भी ध्यान रक्खे। योही परभाव-विभावमें न बह जाय। वैसे शैलानेके छपे हुए उ० सू० के १ अ० में लिखा है कि हितकारी शिक्षाको पापदृष्टिवाला अविनीत(शिष्य)थप्पडरूप,गालीरूप और वधरूप मानता है परन्तु यह रूपक तो वडा विलक्षण है क्योकि चौथे आरेकी घटना है। बुधजनोको चाहिए कि ऐसी घटनाकी ठीक समालोचना करके उसमे तथ्यामृतका मथन करें।

१०—साधुओं के ठहरने विचरने के विषय में—आपने सौत्रिक नियम "गामे एगराइदियाइ नगरे पच राइदियाइ" को केवल एक ही पक्ति मे ठीक बैठा कर कितना ऊचा आदर्श कायम कर दिया —

"पांच रात नगरोंमें बसं, इक निसि गावं मांझ वसि नसं" ५८१॥

कितने अच्छे ढगसे रहने विचरने का चित्र खेंचा है, जिसे पढकर वायु की तरह अप्रतिबद्ध विहारी निस्पृह अकिंचन मुनिका स्मरण होते ही मस्तक उनके चरणोमे झुक जाता है। परन्तु यदि आज हम आधुनिक मुनिओको वडे २ शहरो में महीनो और...रहते देखते हैं, वहा के वातावरण मे वे इतने रचपच गए हैं कि गाँओ की तरफ मु ह तक नही करते। यदि यह नगर पिडोल इनमें न घुसता तो जिनशासनका प्रभाव समुद्रो पार पहुचता। वे ग्राम्यधर्मका महत्व बताकर ग्रामीणोको गृहस्थधर्मकी दीक्षा देकर उन्हे प्रामाणिक और समदृष्टि वनाते तो राजकर्मचारी प्रभावित होकर उन्हे नगरोमें लानेकी प्रार्थना अपने आप करते। परन्तु चेतें तो समय अब भी काफी है।

११—भगवान का नाम लेकर गोशालेका शाप देना—उनमे कुछ पक्तियाँ ऐसी भी जोडी गई हैं कि जिन्हे पढकर साधकको इस अनर्गल प्रलापपर खेद आए विना न रहेगा। भला कोई वात है, कि अनवन हो अकवर से और मारा

जाय रहबर। लोग छेड़ें तो गोशाले को और गोशाला भगवानके नामकी सचाईकी दुहाई देकर जलादे लोगो के मकान ! गोशालक किसी से लडता झगडता है और अप्रसन्न होकर भगवानकी दुहाई मचाकर चीखता चिल्लाता है और एक दम बिना सोचे विचारे अनर्गल हाक कर दावे से यह कह डालता है कि—

"जो मो धरमाचारज साचौ, तो तुव घर जारे अगिनाचौ ॥५८७॥

'अरे ! यदि मेरे धर्माचार्यके तपका प्रभाव सच्चा है तो तुम्हारा घर महल्ला आदि आग में जल बल कर खाक धूल हो जाय।' दुश्मन गोशालेके, और मरें या भस्म हो जाय भगवानके तपस्तेजसे निरपराध प्राणी। आदिनाथ भगवान के इतिहास से लगाकर आज तक ऐसी दुर्घटना तो कही भी नही सुनी गई। हा लोकैषणा में तो ऐसे कहते देखे गए हैं कि 'भगवान करें तेरा यो हो जाय और त्यो हो जाय' परन्तु महावीर भगवानके असख्य आत्मप्रदेशोमे अहिंसाका अनततत्व समाया हुआ था। वहा आग कैसे प्रगट हो सकती है, और ससार में वैषम्य कैसे आ सकता है। मालूम होता है पुराणपथी-चैत्यवासियोंने ये रेत के किले बनाए हैं। आजके विचारक इस पर विचार करें। और तथ्यको प्रगट करे।

१२—भगवान महावीर के पैरो पर खीर पकाना—कहीं आख मीचकर बुद्धिसे काम न लेकर भारी अतिशयोक्तिया भी ऐसी रची हैं कि जिसका सिर हो न पैर। जैसे—

"जिन पग पर धरि खीर रंधाई ॥५६०॥"

ग्वालो ने कायोत्सर्गस्थ भगवानके पैरो पर खीर पकाई और भगवान के पैरोको जरा आच तक न आई। जब अन्त्येष्टिके समय भगवानका देह भस्मसात हो गया तब इस प्रसग में उन्हे आच न आई हो यह समझ में नही आता। परन्तु जब भगवानके कानो में कीली ठोकी गई थी, फिर यथा समय खरक वैद्य के घर पधारे थे, उसके द्वारा कीलिया निकालते समय भगवान को इतनी वेदना हुई थी कि भगवान के मुह से जोर की एक चीख निकली कि जिसके तुमुल शब्द से पहाड़ोके शृग हिले और टूट कर गिरने लगे और

धरती कांपती हुई फट पडी।

"काढत सबद कियो जिन भारी, गिरि दरके घर घरकी सारी ६२६।"

यद्यपि भगवान का आत्मा अनन्तवली था फिर भी देह धर्म अपना काम कए बिना कब मानता है। भगवती सूत्र के कथनानुसार वे नित्य भोजी भी थे। ब खीर भी दो तीन घण्टे में तो पकी होगी। और तब तक आच ने अपना काम किया हो यह कब हो सकता है। तत्वज्ञो द्वारा इस पर अवश्य विचार होना ाहिए। चाहे भगवान की सहिष्णुता अनन्त है फिर भी शरीर औदारिक है।

१३—चंदनबालाके सिरके मुंडे वालोका लम्बा होना—

चदनबालाके घर भगवान का अभिग्रह फलने पर वहा पाच दिव्य प्रगट ए, और चंदनवाला के मुंडे मस्तक के "वेनी सिर पर लावी टी ६१८॥" वाल वेणी के रूपमें खूब लम्बे और वड़े हो ए। प्रकृतिके नियमके अनुसार होना तो युक्ति सगत है पर ये ादर वादर पुद्गल किसके द्वारा लम्बे हो गए ? या देवताओ ने अपना चमत्कार बताया। तब उसकी वैक्रेयिक रचना कितने दिन तक रही आदि वातो पर कुछ तो ऊहापोह होना चाहिए ?

१४—तीनदकार द्वारा इंद्रभूतिको चेतावनी—भगवान महावीरके केवलज्ञानके बादकी घटना है कि आप पावा में पधारे, वहा एक तुमुलयज्ञ हो रहा था। हजारो विद्वान एकत्र होकर यज्ञकार्य कर रहे थे। उनमे इद्रभूति (गोतम) महापडित आए थे। वे भगवान से वाद करने समवसरण में आए। भगवान ने उसका नाम लेकर 'स्वागत' किया [यह ठीक ही हुआ क्योकि भगवान तो आगम विहारी थे] आगे चल कर भगवान वोले कि गोतम ! तुम्हे वेदके—

"कह्यो तुम्हारे उर अतर जो, सो हम सव जानें सुनिए सो॥
तीन दकार चहत तुम भाख्यो, अर्थ तासु को पूछन राख्यो॥
सो हम तुमको देहि वताई, दया-दान-दम तीनों भाई॥६८१-६८२॥"

इद्रभूते ! तुम्हे तीन दकारका सशय हैं, जिसका उत्तर आज तक किसीके द्वारा तुम्हे नही मिला। अरे! तीन दकारका अर्थ दया-दान और इंद्रिय दमन ही तो होना है। परन्तु प्रश्न होता है कि तीनो दकारोके अर्थका प्रसग वेदो और उपनिषदोंमें भी

आता है। वहां दया-दान और इन्द्रिय दमनका ही अर्थ पाया जाता है। साथ ही वेद पारगम गोतमका उन्हे पढना भी स्वाभाविक है। तब लेखक भगवान के द्वारा तीन दकारकी अनभिज्ञता गौतमके मुहसे क्यो कहलवाता है ? इसका कारण जिन महिमा बढाने और वेदज्ञकी अल्पज्ञता बतानेके अतिरिक्त और क्या हो सकता है ? विज्ञजन बिचारें।

१५—भगवानके निर्वाणके समय गौतमकी अनुपस्थिति—

भगवान ने अपने निर्वाणका उत्तम समय जानकर उसे (गोतमको) किसीको प्रतिबोध देनेके लिए भेज दिया। **"मुक्ति समय निज लहि अति उत्तम, दिच्छा हित पठये हैं गौतम"** गोतम उसे बोध देकर लौट रहे थे कि उस समय—

"तिन निर्वाण समै देवनतै, पूछ्यो तुम कित जात सदनतै ७१२॥
देवन जिन निरवान सुनायो, सुनि गोतम अतिसै दुख पायो ॥"

सौत्रिक सकेत तो यह है कि भगवान महावीर स्वामीके निर्वाण होनेके बाद गोतमको दो घडी पीछे केवलज्ञान हुआ। इससे सिद्ध होता है कि गोतम वही थे। कही जाने और वापिस लौटकर आनेका विषय रात्रिविहार सिद्ध करता है। क्या गोतम रातको विचरते थे ? कहा दो घडीके बाद केवलज्ञान होना और कहाँ वापिस आते समय भगवानके निर्वाणको जानकर अन्तर्वेदना प्रगट करना। वास्तवमें दोनो बातें आपसमें न मिलकर पूर्वापर विरुद्ध सिद्ध होती हैं, प्रज्ञजनोको वस्तुस्वरूप विचारने योग्य है।

१६—भगवान पार्श्वप्रभु और मेघमालीका उपसर्ग—भगवान पार्श्व दक्षिण देशमे किसी तापसवनमें वटवृक्षके तले कायोत्सर्ग पूर्वक आत्मरसमे सलीन खडे हैं। मेघमालीने अपने पिछले वैरका अनुस्मरण करके उस समय पुष्कलावर्त मेघ बरसाकर भगवानके लिए महाउपसर्ग उत्पन्न किया। पानी इतना अधिक बरसाया कि भगवान का नौ हाथका शरीर पानी में अदृष्ट हो गया।

"चरन जानु कटि उदर उर, कंठ चढ्यो बढि वार ॥७८५॥"

उनके गले या नाक तक पानी आ चढा। इस अवसर में धरणींद्र पद्मावती

का आसन हिला और उन्होने आकर भगवान के ऊपर फणोकी छाया की, और भगवान को अपने मस्तक पर उठा लिया, परन्तु पानी तो अपने प्रलय-कारी वेगसे ऊपर ही ऊपर चढता रहा ।

भला जब भगवान के गले या नाक तक पानी चढ गया तब आस पासकी दुनियाका क्या हुआ होगा ? लेखकको दुनियाका भी तो कुछ ख्याल करना चाहिए था । पर नही उसने तो सारा बौद्धिक बल भगवानकी भक्ति मे लगा दिया । सचमुच कवि बडी बलाका प्राणी होता है, जहाँ नही पहुचे रवि, वहा पहुँचे कवि ।

१७—भगवान अरिष्टनेमिके सामने पशुपुकार—इस प्रकरणमे कविने विलक्षण अनुप्रास मिलाकर कमाल करदिया है । इस विषयको इतना स्पष्ट किया है कि किसीके मन मे भ्रांतिको स्थान ही नही मिल सकता ।

"मनिभूषण पशुपालको, दै सब पशु छुडाय ।
तोरन ही ते फिर फिरे, सब आरंभ मिटाय ॥८६८॥"

भगवान पशुओकी पुकार पर अनुकपाके विचारसे पशुपालक' को मणि और रत्नजडित आभूषण आदि देकर सब पशुओके वधन छुडवाकर तोरनसे वापिस चले जाते हैं ।

यहा लेखकने बडी दूरदर्शिता से काम लेकर अहिसा को वहुत ही ऊचा स्थान दिया है । सचमुच सूत्रकारके रहस्य को वार्तिककार वनकर इसकी ठीक विवृति करके भीतरका कितना अच्छा रहस्य वता दिया है कि अहिसाको समझनेके वाद वह क्रियात्मक कैसे होती है । इतना स्पष्ट तो उत्तराध्ययनकार द्वारा भी नही हो सका । इसने तो भाषाकोविदोको स्पष्ट समझाया है कि अहिसा को आचरण मे किस तरह लाया जाय, इस विकट मोडको ठीक करके लोगो को सुन्दर विचारनेत्र दिए हैं, वाह ! असल मे लेखक के विचार वडे ही आदेय हैं ।

"यदि मेरे कारण ये वहुतसे जीव मारे जायगे तो यह कार्य मेरे लिए परलोकमें कल्याणकारी न होगा (१९) उस महायशस्वी भगवान ने दोनो कुडल, कदोरा तथा सभी आभूषण सारथी को प्रदान कर दिए (२०) भगवान के दीक्षा के परिणाम होने पर देवता.. .. ..(उ०अ० २२ संतानेका छपा ।)"

१८—चित्तमहोदधिके मथनसे इस प्रकार जो नवनीत निकालकर आपके सन्मुख प्रस्तुत किया है, बुधजनोको चाहिए कि इसका अथसे अन्ततक मनन चितन और निदिध्यासन करते हुए यदि कोई विलक्षण सूझबूझ हो तो उसका जनता में निदर्शन कराए ।

१९—कल्पसूत्रको हिन्दी कवितामें रचकर रायचन्द कवि महानुभावने हिन्दीससार पर उपकार किया है । यदि मानव जगतने इससे लाभ उठाया तो हम अपना श्रम सफल समझेंगे ।

२०—हमारा मत है कि इस रचनाकी सदृश और सूत्रोके भी हिन्दी कवितामें ग्रथसाहबकी तरह अनुवाद हो जाए तो भाषाभाषी लोगो को जैनसिद्धान्तका परिचय सुगमता से हो सके, और जैन साहित्यके ठोस प्रचारका यही तो एक आधुनिक मार्ग है ।

यदि किसी महानुभावके पास इसढगसे किसी सूत्रका हिन्दी कवितामें अनुवाद हो तो पत्र व्यवहार करें ।

दुर्गाप्रसाद जैन

विषयानुक्रमणिका

विषय पृष्ठांक

विषय पृष्ठांक

णमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ णायपुत्तमहावीरस्स

कल्प-भाष्य

चौपाई

जय जय जैन धर्म हितकारी, सघ चतुर्विध जहाँ अधिकारी ।
साधु साध्वी श्राविका श्रावक, यही चतुर्विध संघ प्रभावक ॥१॥
नराकार वह धर्म बखाना, जाके बारह अग प्रधाना ।
वदन[1] पंच प्रानरु द्वयहाथा[2], वुधि चित आतम द्वयपद साथा ॥२॥

दोहा

रत्न त्रय जिस को कहे, ज्ञान दरस चारित्र ।
धर्म भूप नर रूप का, कहिये वदन पवित्र ॥३॥
हिंसा मिथ्यावाद अरु, चोरी मैथुन वाध ।
तथा परिग्रह का तजन, पच महाव्रत साध ॥४॥
ये कहिए ता पुरुष के, पाचो प्राण प्रमान ।
दान शील तप भावना, दोनो हाथ वखान ॥५॥
दया दान तीजो दमन, ये जो तीन दकार ।
वुद्धि चित्त आतम लहो, ता नर को आधार ॥६॥
विनय विवेक विचार युत, अरु निश्चय व्यवहार ।
ये ही ता नर धर्म के, चरन[3] वरन सुख सार ॥७॥
धर्म शिरोमणि शुभ समय, पर्व पजूसन जान ।
ताकी मति विस्तार सौ, भाखौ सुनो सुजान ॥८॥

---

१ मुख, २ हाथ, ३ पैर

चार मास चौमास के, दिवस एकसो बीस ।
उत्तम मध्यम सत्तर रु, अधम पचास बुधीस ॥९॥

क्षेत्र के १३ गुण

सुथल[1] स्वच्छ पकिल रहित, शढ[2] स्त्री बिन होय ।
सूछम जीव न उपजै, निर्जन थडिल[3] सोय ॥१०॥
तथा सुराज सुभिच्छ जहँ, भिच्छा सुलभा होय ।
वैद भलो औषध सुलभ, जहा पाइए सोय ॥११॥
गृहपति सधन सअन्न जहँ, सुजन समागम जान ।
स्वाध्याय गोरस[4] सुलभ, और रहित अपमान ॥१२॥
ऐसे तेरह गुन सहित, औगुन रहित सुदेश ।
भूमि पाय सुखवास व्है, बसै साधु धर्मेश ॥१३॥
भादौ असित त्रयोदसी, आदि आठ दिन जोय ।
सुदी पचमी अत दिन, पर्व पजूसन सोय ॥१४॥
इन आठो दिन मे मुनी, जनगण सन्मुख होय ।
कल्पसूत्रको अर्थ सब, बरनि बखाने सोय ॥१५॥
आठ दिवस विस्तार करि, येई अर्थ निदान ।
सुभ इतिहास समेत अरु, सह दृष्टात बखान ॥१६॥
आठ दिना मे पच कृत, करै करावे सत ।
जैन चतुर्विध सघ के, परम्परा कौ तत ॥१७॥
मन के थिर परनाम करि, दान शील तप भाव ।
अष्टमतप आचरन करि, यथा शक्ति चित्त चाव ॥१८॥
अठये दिनके अतमे, कल्पसूत्र सिद्धात ।
बारह सैं सोरह सहित, हितकरि सुनै नितात ॥१९॥

---

१ उपाश्रय, २ नपुसक, ३ शौंच भूमि, ४ दूध-दही-घी-छास आदि

मुनि वरसी पडिकमन करि, आपुस मे सब लोक ।
खिमे खिमावे परसपर, वरस दोष तजि सोक ॥२०॥
जैसे पूरब काल मे, नागकेत इतिहास ।
व्रत प्रभावते जिन लह्यो, अचल परम पद वास ॥२१॥

अथ नागकेत कथा

चौपाई—

चद्रकाति नगरी इक राजै, विजयसेन जहँ नृपनि विराजे ।
शात दात श्रीकात शेठ जहँ, धर्मशील गुणवत बसै तहँ ॥२२॥
जाकी शुभश्री सखी सिठानी, गुन वय रूप सील मनमानी ।
ताके गर्भ अर्भ[१] इक भयो, पूरव पुण्य आय फल दयो ॥२३॥
आनँद मुद[२] मय सेठ सिठानी, पर्वपजूसन नियरी[३] जानी ।
आपुसमे मिली भाखन लागे, पूरब पुण्य जगतके जागे ॥२४॥
हमहू अब अष्टम तप धारै, जनम मरनकौ दुख निरवारै ।
यहधुनि सुनि शिशुहू[४] चितधार्यो, जाति स्मरि तप करन विचार्यो २५
पर्व पजूसन दिन आयो जब, सेठ सिठानी व्रत कीनौ तब ।
तज्यो मायकौ पय बालक हू, लखि दुख पायो पितु पालक हू ॥२६॥
सिसु मृदुतन तप ताप न सहिकै, मुरछि पर्यो धरनीपर गिरिकै ।
सेठ बिकलव्है बैद बुलायो, चेत्यो[५] नहि उपचार करायो ॥२७॥
तब निरास ह्वै बालहि छाड्यो, पिता दुखित ह्वै मरनो माड्यो ।
सो निपुत्र घर भयो जानि नृप, अर्थ लैनकौ छाडि दई त्रप[६] ॥२८॥
क्रूर दूत धन लैन पठाए, ते सब सेठ द्वार पर आए ।
सिसु तप बल इद्रासन चाल्यो, अवधिज्ञान तब इद्र सभाल्यो[७] ॥२९॥
सिसु पूरब भवकी सब जानी, सभा प्रमुखनौ सर्व बखानी ।

बनिक पुत्र हो यह पूरब भव,अपरमातके दुःख दह्यो दव ॥३०॥
सो दुख तिन निजमित्र सुहृदसौ,कह्यो सह्यो नहिं तिन भाखी यौ।
पूरब सुकृत न सचित तातैं, यह दुख लह्यो अपर माता तैं ॥३१॥
यह सुनि तिन तप करन बिचार्यो, अति सुभध्यान हिये में धार्यो।
पर्व पजूसन नियरै आयो, ताको व्रत करिहौ मन भायो ॥३२॥
धारि ध्यान तृणगृह मे[1] सोयो, द्वेष दृष्टि तिहि माता जोयो।
दीपक बारनके मिस आई, ता तृनगृहमे आगि लगाई ॥३३॥
सो जरि मरि श्रीकात सेठ घर, पुत्र होय जनम्यो सो नरबर।
यह कहि सुरपति निजजन प्रेरे, राजदूत तिन किए अनेरे ॥३४॥
सुरपतिहू नरपति ढिग[2] आए, आय कही क्यो दूत पठाए।
राजनीतिकी नृप दै साखी, सुरपतिसौ यह भाखाभाखी ॥३५॥
जा गृहस्थ को जियै न बालक, ताके धनको राजा मालक।
सुनि सुरपति सिसु कथा सुनाई,पूरब भवकी सब बतलाई ॥३६॥
यो कहि ता बालकहि जिवायो, नागकेत तिहि नाम बतायो।
पुनि सुरपति निजधाम पधारे,नृपहू अपने जन निरवारे[3] ॥३७॥
उत्तर क्रिय पितुकी सुत कीनी,धरममरन विधि सिर धरि लीनी।
आठैं चौदस व्रत प्रतिमासा, षट व्रत चातुरमास निवासा ॥३८॥
पच अणुव्रत पालन लाग्यो, धर्मप्रभाव तासु जस जाग्यो।
इक दिन राजा इक जन मार्यो,सिर कलक चोरीकौ डार्यो ॥३९॥
सो दुर्गति लहि व्यतर भयो, अपनौ वैर नृपतिसौं लयो।
दीठ[4] अगोचर तिन निसिचारी,[5] लात एक राजाको मारी ॥४०॥
रुधिर वमन करि नृप भू[6] गिर्यो, सभा सदन करि अचरज कर्यो।
पुनि तिन व्यतर सिला सवारी, नगर मान लावी विस्तारी ॥४१॥

---

१ झोपडी, २ समीप ३ रोक दिए ४ दृष्टि, ५ व्यतर, ६ जमीन

ताहि हाथ लै नभदिसि भाग्यो, नगर लोग पर पटकन लाग्यो ।
नागकेत अगुरी पर लीनी, तप बल दूरि फेंक तिहि दीनी ॥४२॥
दूरि दुख नृपहू कौ कीनौ, व्यतर भाजि भयो बल हीनौ ।
यह प्रताप सब तपकौ लहिए, निश्चय करि तपकौ पथ गहिए॥४३॥

दोहा—

यह संवत्सरि पचमी, अन्य मती हू लोक ।
ऋषिपचमि कहि व्रत[१] करत, जगमे होय असोक ॥४४॥
आसाढी पून्यौहि तै, दिन पचासवौ जोय ।
बढै न तामै एक दिन, घटै तु घटती होय ॥४५॥

अथ ऋषिपंचमी कथा

दोहा—

धम्मिलद्विज सुत एक वर, पुष्पवती थल पाय ।
रहन लग्यौ सुखसौ समय, पाय तात अरु माय ॥४६॥
मरि जनमे सुत सदनमै,[२] एक सुनी[३] एक वैल ।
वरस भयो पूरन सुअन,[४] गही श्राद्धकी गैल ॥४७॥
ब्रह्मभोजके हित सुसुत, स्वच्छ वनाई खीर ।
ताहि सूघि अहि[५] विषवमन, करि सरक्यौ धरि धीर ॥४८॥
सो निहारि तिहि कूकरी,[६] विपुल अनर्थ विचारि ।
दौरि[७] जुठाई[८] खीर सो, लखि द्विज दीनी मारि ॥४९॥
मारि तोरि ताकी कमर, गोसाला मे वाधि ।
विप्र जिवॉए प्रीति करि, खीर दूसरी राधि ॥५०॥
ताही दिन ता वैल कौ, तिहि द्विज तेल्यौ ऐन[९] ।

---

१ उपवास २ घर, ३ कुतिया, ४ लड़का, ५ सार ६. कुतिया,
७ भागकर ८ भूठी करना ९ घर ।

वहन हेत भाडे दियो, सब दिन तिहि दुख दैन ॥५१॥
मुखमैं छीका बाधिकैं, फेर्यो कोल्हू साथ ।
साझ भए आयो सदन, बदन मलीन अनाथ ॥५२॥
आपुसमैं मिलि वृष शुनी, निज निज बिथा सुनाय ।
कथा सकल दुखकी कही, वेदन विपुल बलाय ॥५३॥
कटि[1] टूटन की उन कही, सहन भूख इन प्यास ।
लहि निरासता अन्नते, दोऊ भए उदास ॥५४॥
सुन्यो सकल सवाद यह, ता द्विजने धरि कान ।
जान आपने मात पितु, अति पछताय निदान ॥५५॥
भोजन दै तिन दुहनकौ, ऋषिन पास द्विज जाय ।
कह्यो सकल वृत्तान्त जो, सुन्यो सुअन समुझाय ॥५६॥
अरु पूछी करजोरि प्रभु, जेहि विधि कुगति नसाय ।
मात तात सदगति लहैं, सो भाषिए उपाय ॥५७॥
सुन वेदन ऋषिगन सकल, अनुकपे लखि दीन ।
दया दीठ दृग[2] भरि कहे, वचन सुधा रस लीन ॥५८॥
पूरब भव इन दुहुन मिलि, कीनी केलि अकाल ।
ताते पायो जनम इन, वृषभ शुनी कौ हाल ॥५९॥
अब भादौ सुदि पचमी, ऋषि पचमि जिहि नाम ।
ता दिन सयम सनियम ह्वै, व्रत करि आठौ जाम ॥६०॥
अनखेडी हलकी धरा, तामैं अन्न जु होय ।
आपहि तै उपजै विपन, ता दिन खैये सोय ॥६१॥
तातै इनकी कुगति मिटि, सगति लहि है जान ।
सुनि द्विज त्यौंही करि पितर, पठये[3] सुरग निदान ॥६२॥

---

१ कमर २ आख ३ पहुँचाए ।

ऐसैं या शुभ दिवस मैं, औरौ मति के लोक ।
तप करि जगत्रय ताप हरि, मुकत[1] लहत तजि सोक ॥६३॥
याते जे जिन धरमरत, साधु साधवी जोय ।
हित करि श्रावक श्राविका, व्रत करि निरमल होय ॥६४॥
कल्पसूत्रकौ पाठ अरु, अर्थ समझि सुनि कान ।
मरम धरमकौ पाय पद, लहे परम निरवान[2] ॥६५॥
तृतिय रसायन गुन सकल, कल्पसूत्र त्यौ जान ।

दृष्टान्त—

ताहू की विस्तारसौ, कहौ कथा सुनि कान ॥६६॥
भयो लाख अभिलाख करि, इक नृपकैं सुत आय ।
चही तासु आरोगता; नृप त्रय वैद वुलाय ॥६७॥
तिनमैं तैं इक वैदनैं, निज औषध गुन भाखि ।
कह्यो मातरा एक मैं, हरौ रोग यह साखि ॥६८॥
पैं[3] अरोग नर जो भखैं, यह भेषज्ञ तिहि काल ।
नख-सिखतैं सो नर सकल, होय रोग मैं हाल ॥६९॥
सुनि राजा ता बैदकौ, तुरतैं कियो विदाय ।
सोयो सिह जगावनो, भली न यह है राय[4] ॥७०॥
बैद दूसरौ पुनि कह्यो, निज औषध गुन आय ।
रोग हरै रोगीनु कौ, विन रुज[5] कछु न वसाय ॥७१॥
ताहू कौ कीनो विदा, वृथा समझि नर राय ।
अग्नि माहि हवि हौमि क्यौ, करनौ भसम नुभाय ॥७२॥
तब पूछ्यो नृप निज निकट, तीजो वैद वुलाय ।
तिन निज औषधकौ सुगुन, ऐसैं दिया वताय ॥७३॥

---

१ मोक्ष २ मोक्ष ३ परन्तु, ४ सलाह, ५. रोग

रोग हरै आरोगको, अधिक पुष्ट करि देय ।
रीझि नृपति बहुधन दियो, बैदहि औषध लेय ॥७४॥
जैसो औषध तीसरी, कल्पसूत्र त्यो मानि ।
पाप हरै दुख छ्य[1] करै, पुन्य बढ़ावै जानि ॥७५॥

कल्प महात्म्य—

संघ चतुर्विध ज्यौं सकल, तीरथ मै सुख कार ।
अभयदान ज्यों दान मैं, मन्त्रन मै नवकार ॥७६॥
ब्रह्मचर्य ज्यों व्रतन मै, विनय गुननके माहि ।
निजमन मैं सतोष तप, छमा[2] सरीखो नाहि ॥७७॥
तत्वनमै सम्यक्त त्यौ, पर्व पजूसन जान ।
चिन्तामणि सुरधेनु ज्यों, धेनु रत्नमै मान ॥७८॥
सीता सतियन माहि अरु, केवल ज्ञानन माहिं ।
छायाधर तरु माहि ज्यो, कल्पवृक्ष की छाहिं ॥७९॥
त्योंहि सर्व सिद्धात मैं, सुगम कल्प सिद्धान्त ।
सब आगम के सारको, सार निहारि नितात ॥८०॥
महावीर निरवान तै, छठै पाठ सुखसार ।
भद्रबाहु स्वामी भए, चौदह पूरव धार ॥८१॥
नवमै पूरव माहि तै, कोनो यह उद्धार ।
वर अठयो अध्यैन सुभ, दस श्रुत कथ मझार ॥८२॥

दस कल्प—

कल्प अर्थ आचार है, सो दस विधि को जान ।
प्रथम अचेल उदेस द्वै, सय्यातर त्रय मान ॥८३॥
राजपिंड कृति कर्म व्रत, जेष्ठ प्रतिक्रम आठ ।

---

१ दूर, २ शाति ।

मास कल्प पर्जूषना, यहै कल्प दस पाठ ॥८४॥
आदि अंत जिन साधकौ, दसो नियत ये कल्प।
चारि नियत जिन मध्यकौ, छह अनियत वैकल्प ॥८५॥
ते छह कहे अचेल अरु, प्रतिक्रमन उद्देस।
राजपिंड पर्जूषना, मास कल्प तजि शेश ॥८६॥
शय्यातर व्रत आचरन, ज्येष्टत्व कृतिकर्म।
बाइस जिन के साधको, चारि नियत यह धर्म ॥८७॥

अचेल—

देवदूष[1] पट इन्द्र जो, जिन काधै धरि देय।
सो गिरि परै अचैल तब, वस्त्र रहित कहि तेय ॥८८॥
यातै जीरन चैल[2] लहि, आदि अंत जिन साध।
सेत[3] वस्त्र लौ तन धरै, सोऊ[4] साध अवाव ॥८९॥

उद्देश्य

साधु हेतु उद्देग करि, करै गृही आहार।
आदि अंत जिन साधकौ, उचित न सो निरधार ॥९०॥
एकै साध विशेष हित, जो उद्देग आहार।
सो न लेय सब साधु लें, बाइस जिन विवहार[5] ॥९१॥

शय्यातर—

जो श्रावक चौमास मै, साधु रहन हित वास।
देय ताहि आगम कहै, शय्यातर परकाश ॥९२॥
ता शय्यातर सदनकौ, लेय न साधु आहार।
तृतीय कल्प आचार यह, चौविस जिन विवहार ॥९३॥

राजपिण्ड—

नृप देशाधिप[6] सदनकौ, लेय न साध आहार।
आदि अंत जिन साधकौ, अति अनुचित निरधार ॥९४॥

---

१ रत्न कंबल २ कपड़ा ३ श्वेत, ४ वह, ५ व्यवहार, ६ माण्डलिक

कृतिकर्म—

गुरुवदन अरु पडिकमन, नित्य कर्म यह होय ।
गुरु लघुता सब साधु कै, दीक्षा क्रम तै जोय ॥९५॥
करै परस्पर वदना, गुरुकौ लघु सब साध ।
गुरु लघु साधहि साधवी, यह कृत कर्म अबाध ॥९६॥

व्रत—

पच महाव्रत आचरन, आदि अत जिन साध ।
मध्य जिनेसर साधके, चारे भेद अबाध[1] ॥९७॥
मानत मैथुनकौ सकल, ते परिग्रह के माह ।
चारै व्रत ही मे गिनत, ते मैथुन की छाह ॥९८॥

जेष्ट—

आदि अत जिन नाथ के, साध सदिक्षा होय ।
मास खिमन करि पच व्रत, पाले जानौ सोय ॥९९॥
मध्य जिनेसर साध सब, दीच्छा[2] ही लै फेर ।
पच महाव्रत आचरै, जैनागम विधि हेर ॥१००॥

प्रतिक्रमण—

आदिनाथ जिन वीर के, साध साँझ अरु भोर[3] ।
दुहू[4] काल पडिकमन करि, ध्यावै आतम ओर[5] ॥१०१॥
मध्य जिनेसर साधकौ, जब कछु लागै दोष ।
ताको सभव जानिकै, करै पडिकमन पोष ॥१०२॥

पजूसरण—

दसवौ पर्व पजूषणा, प्रथम कह्यो विस्तार ।
कल्पसूत्र जामै पढै, सुनै सकल सुखकार ॥१०३॥
आदि अत जिन नाथ के, साध यथाविधि याहि ।

---

१ व्यवधान रहित, २ दीक्षा, ३ सवेरा ४ दोनों, ५ तरफ,

करै तथाविधि आज लौ, साध आचरन ताहि ॥१०४॥
आदि अंत जिन नाथ के, साध दोय विधि जान ।
सरल मूढ अरु वक्र जड, होय सुभाव निदान ॥१०५॥
बाकी जे बाईस जिन, तिनके साध सुछंद ।
सरल प्रज्ञ ने होय सब, तिनकौ ज्ञान अमंद ॥१०६॥

सरल-मूढ़ दृष्टांत

तहा प्रथम दृष्टांत सुनि, सरल मूढकौ एह ।
समझि न सरल सुभाव तैं, तिनकौ बिनु संदेह ॥१०७॥
कौकण देशी साध इक, काउसग्ग[1] तप लीन ।
गुरु पूछी तिहि विमल की, बोल्यो साध अधीन ॥१०८॥
दया चिंतवन करत हो, जब हौ गृह को बास ।
सब कारज हौ करत हौ, अब तौ भयो निरास ॥१०९॥
कृषि करि तब हौ भरत हो, सब कुटुम्ब कौ पेट ।
अब कैसे कै जियत[2] है, मो मन बडो खखेट[3] ॥११०॥
गुरु तब बोले साधु सौ, यह चिन्तौन अयोग ।
गृही कर्म कौ चिन्तवन, साधु जनन कौ रोग ॥१११॥
मिथ्या दुष्कृत दीजिए, कीजै शुभ परिनाम ।
तहत[4] मानि तैसैं कियो, पायो मन विश्राम ॥११२॥
सरल मूढ अरु वक्र जड, दोउनकौ दृष्टान्त ।
अब भाषौ विस्तार करि, तिनकौ भेद नितान्त ॥११३॥

सरल-मूढ-जड़-वक्र दृष्टांत

सरल मूढ जड वक्र द्वै, साध गोचरी हेत ।
गए विहरि फिरि राहमे, विरमि गए निज खेत ११४॥

---

१ कायोत्सर्ग-ध्यान। २ जीवित रहना, ३ खेद, ४ तथास्तु

गुरु पूछी जब बिलम[1] की, कही राहमे आज ।
नट नाटक देखत भयो, एतो बिलम समाज ॥११५॥
गुरु सुन भाषी साध को, जोग न लखिवो[2] नाच ।
सरल मूढ सुन अब न यह, ह्वै[3] है बोल्यो साच ॥११६॥
पै भाषी जड वक्र यो, यह तो गुरु की चूक ।
नट नर्तन पहिले न क्यौ, तुम बर्ज्यो करि कूक ॥११७॥
फेर नटी के नाच मै, इक दिन रह्यो लुभाय ।
गुरु सुनि दोषे तब लगे, भाषन अपनी राय ॥११८॥
सरल-मूढ बोल्यो तबै, सकुचि जोरि द्वै हाथ ।
फेर चूक हमतै भई, कीजै नाथ सनाथ ॥११९॥
दूजै बोल्यो बक्र जड, अपनी लखत न चूक ।
नट नाटक वर्ज्यो हमै, नटी कही कब कूक ॥१२०॥

जड़-वक्र दृष्टान्त

पुनि केवल जड बक्र पर, औरौ इक सवाद ।
पिता पुत्रकौ सीख दै, कह्यो याहि रखि याद ॥१२१॥
बडै कहै सो कीजिए, फेर न दीजे ज्वाब ।
वोल्यो सुत सुनि समझ कै, योही करिहौ बाब[4] ॥१२२॥
घरतै निकसत एक दिन, सुतसौ कह्यो सुनाय ।
तात वद करि राखियो, द्वार कपाट लगाय ॥१२३॥
सुनि लगाय दीने तुरत, घर के द्वार किवार ।
सोय रह्यो सुख सदन मै, जव आयो पितु द्वार ॥१२४॥
रह्यो पुकारि पुकारि अति, गरौ[5] फारि हिय हार ।
सुनी तदपि वोल्यो न सुत, खोले नाहि किवार ॥१२५॥

---

१. देर, २, देखना, ३ होगी ४ पिता, ५ गला

तब सो पितु चढि भीत पर, बढि[1] कूद्यो घर माहि ।
बैठ्यो सुत लखि क्रोध की, छई दृगनमैं छाहि ॥१२६॥
सुत बोल्यो तब ही न तव, भाषी सन्मुख होय ।
गुरुकौ ज्वाब न दीजिए, रिस[2] क्यो कीजत जोय ॥१२७॥
चौथे आरे माहि जे, बाइस जिनके साध ।
सरल प्रज्ञ ते होत है, काल स्वभाव अबाध ॥१२८॥
समझि करैं सगरी[3] क्रिया, ज्ञानवत ते होय ।
विनयवत बलवत सब, धीरजवते सोय ॥१२९॥
रहै मगन गुरु विनयमैं, तनमैं नेक न नेह ।
आतमसौ तनमैं रहै, वहै भार लौ देह ॥१३०॥

ऋजु प्रज्ञ दृष्टान्त

तिनहू पै दृष्टात यह, नट नाटककौ साच ।
गुरुमुखतै जब उन सुनी, जोग न लखिवो नाच ॥१३१॥
नट नाटक हू तिन तज्यो, नटी नाट्य हू फेर ।
नाच मात्र सब तजि दयो, गुरु वच सुमिरि सुहेर ॥१३२॥
उत्तम मध्यम अधम ये, भाव काल वस चक्र ।
सरल मूढ ऋजु प्रज्ञ अरु, तीजौ है जड वक्र ॥१३३॥

अथ ग्रंथानुक्रम

सोरठा—

प्रथम पच नवकार, अर्थ सहित या ग्रन्थ मैं ।
ता पाछैं अधिकार, महावीर कल्याण को ॥१३४॥
पुनि श्री पारसनाथ नेमनाथ अधिकार अरु ।

---

१ आगे बढकर, २. क्रोध, ३ सब

कीन्हौ ग्रन्थ सनाथ, आदिनाथ अधिकार कहि ॥१३५॥
अन्तराल विस्तार, ता पाछै थविरावली ।
कही जैन मतसार, साध समाचारी बहुर ॥१३६॥
कल्पसूत्र सिद्धान्त, ताकी ह्या लौ पीठिका ।
करन बखान नितान्त, अब निज ग्रन्थारम्भ भनि ॥१३७॥

इति पीठिका

ग्रंथारम्भ

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाण ।
णमो आयरियाणं, णमो उवज्झायाण ॥
णमो लोए सव्वसाहूणं,
एसो पच णमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो ।
मगलाण च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगल ॥

भावार्थ—

मगलीक नवकार, चौदह पूरब सार यह ।
हरन अमंगल भार, बरन मगलाचरन अव ॥१३८॥
नमो प्रथम अरिहत, भागवंत भगवत प्रभु ।
आठ कर्म जयवत, अष्टादश दूषण रहित ॥१३९॥
चौतिस अतिसय साथ, चौसठ सुरपति सेव्य जो ।
ऐसे जिन जननाथ, हाथ जोरि वदन करौं ॥१४०॥
दूजे सिद्ध प्रसिद्ध, ज्ञान प्रबुद्ध प्रवोध कर ।
सुमिरत होवत सिद्ध, तिनहि वदना कीजिए ॥१४१॥
जिन लहि पद्रह भेद, और आठ गुन ही वहुरि ।
आठ करमकौ खेद, तजि दीनौं तिनकौ नमौ ॥१४२॥
तीजे जे आचार्य, त्रिकालज्ञ त्रय ताप हर ।
छत्तिस गुण के कार्य, कारण तारण कौ नमौ ॥१४३॥
चौथे रहित उपाधि, उपाध्याइ जप तप क्रिया ।
सकल असाधहि साधि, सावधान तिनकौ नमौ ॥१४४॥
ग्यारह अग उपग, वारह जे सव शास्त्र के ।
पढै पढावै सग, द्वादश अग अभग वर ॥१४५॥

पुनि पचम नौकार, नमस्कार जासौ कहै ।
सकल साधु सुखसार, जिनकल्पी कल्पी थविर ॥१४६॥
सत्ताइस गुनवान, जेते ढाई द्वीप मै ।
चारित लै सुज्ञान, भये तिन्है वन्दन करौ ॥१४७॥
परमेष्ठी नवकार, येई जिन जन शास्त्र के ।
सकल पाप सघार, होत जाप जाकौ किए ॥१४८॥

पंच कल्यानक—

अब पाचौ कल्यान, कहि बरनौ चित दै सुनौ ।
परम धरमकी खान, भरम मिटत भवभवनु को ॥१४९॥
पच कल्यानक सार, च्यवर्न जनर्म चारित्र पुनि ।
ज्ञान मुक्ति आधार, चौबिस तीरथनाथ के ॥१५०॥
महावीर तिहि माहि, चरम तिथकर की अधिक ।
इक कल्यानक छाह, गर्भाकिर्षण इन्द्र कृत ॥१५१॥

काल परिमाण

चौपाई—

काल विभाग जैनमत जानौ, छह आरे करि भेद वखानौ ।
पहिलौ सुखम सुखम कहि नाम, ताकी अवधि सख विश्राम ॥
कोडाकोड चारि जे सागर, ताकी उपमा जोग उजागर ॥१५२

सागर मान—

पल्योपम कौ मान अव, पहिलै करौ वखान ।
लावी चौडी भूमि खनि[1] इक इक जोजनि जान ॥१५३॥
तितनी[2] ही ओडी[3] खनौ, ऐसी खात[4] वनाय ।
ठासि भरौ तिहि जुगलिया, वाल-वाल कतराय ॥१५४॥

---

१ खोद कर, २ उतनी ३ गहरी, ४. कुवाँ,

चक्रवर्त के कटक[१] तै, दाबै दबै न सोय ।
सरित[२] सलिल[३] ता पर बहै, स्रवै न जल कण जोय ॥१५५॥
बाल अग्रको परम अनु, प्रति सो बरस निकाल ।
होवै रीतो खात जब, सो पल्योपम काल ॥१५६॥
पल्यजु कोडाकोड दस, सागर मान बखान ।
जैनागम परमान कहु, एतौ सागर मान ॥१५७॥
सागर कोडा कोड जब, बीस गुनौ मिति[४] होय ।
काल चक्र तब होय सो, पूरौ जानौ सोय ॥१५८॥

चौपाई—

पहिले सुखम सुखम आरे के, कहौ सकल गुन ता वारे के।
जनै जुगलिया तहँ सब नारी, साथहि इक बारौ[५] इक बारी[६] ॥१५९॥
यद्यपि एक कूखतै उपजै, पैते दूलह[७] दुलहनि[८] निपजै ।
तीन गाउ की तिन की काया, त्रय पल्योपम आयु बताया ॥१६०॥
भूख लगै तीजे दिन तिनकौ, भरे पेट इक अरहर जिनको ।
उनचास दिन पितु अरु माता, तिनके पालन लालन राता ॥१६१॥
कल्प वृक्ष फिर तिनकौ पोषै, यथा इच्छ तिनको सतोषै ।
द्वै सत छप्पन पसुरी तनमै, पहले आरेमै यौ जनमै ॥१६२॥
दूजौ आरौ सुखमा नाम, कोडाकोड तीनको धाम ।
सागर ओपम तासौ भाषै, तिनके युगलिन की गुन माषै ॥१६३॥
कोस दोय तन द्वै पल्यायू, दोय दिवसु पाछै ते खायू ।
वेर मान आहार सभाले, मात पिता चौसठ दिन पालै ॥१६४॥
कल्पवृक्ष पुनि तिनकौ लालै, तिनकी पसुली की गुन चालै ।
इक सत अट्ठाइस ते राखै, अब तीजौ आरौ गुनि मान्वै ॥१६५॥

---

१ सेना २ नदी ३ पानी ४ प्रमाण, ५ लडका, ६ लडकी, ७ वर, ८ वधु

सुखमा दुखमा नाम अनूप, कोडाकोड द्वै सागर ओप ।
गाउमान तन जासु जुगलिया, पल्योपम इक आयु सबलिया ॥१६६॥
इक दिन अतर करै आहारा, मान आवले के तिहि आरा ।
उन्नासि दिवस मात पितु पालै, कल्पवृक्ष फिर तिनकौ लालै ॥१६७
चौंसठ पसुली तन मै जानौ, यो तीजौ आरौ परमानौ ।
दुखमा सुखमा चौथौ साधौ, काल मान ताजो कौ आधौ ॥१६८॥
पै तामै इतनौ कम चहिए, सहस बयालिस बरसै कहिए ।
जुगल धर्म इहि आरे नाही, नित्य भूख व्यापै तिहि माही ॥१६९॥
कल्पवृक्ष दैवे ते रहै, करमहि तै जीवन निरबहै[1] ।
पचम आरा दुखमा नामा, जामै नेक न सुख विश्रामा ॥१७०॥
सहस इकीस बरस जाकी मिति, बरस एकसौ बीस आयु गति ।
साढे तीन हाथ तनु माना[2], दिन द्वै[3] बेर भूख दुख नाना ॥१७१॥
अत समय इहि आरे माही, जैनधर्म थोरौ[4] रहि जाही ।
दुप्पस आचारज गच्छेसा[5], नाम फाल्गुनी साध्वी सेसा ॥१७२॥
नागिल श्रावक और श्राविका, नाम सत्यश्री बर प्रभाविका ।
चरमकाल[6] इहि आरे लहिए, चउविध सघ याहिकौ कहिए ॥१७३
छठवौं दुखम दु खमा नामा, सहस इकीस वरस मिति तामा ।
एक हाथ तन मित अरु जामै, सोरह बरस सरस वय तामै ॥१७४
लोक कुरूप कुधर्म कुकामी, अगति अलज्ज अचैल अदामी ।
नव वरसी तिय गर्भ प्रकासी, घर विन जन गिरिगुहा निवासी ॥१७
मत्स्याशी जन कुत्सित कर्मा, छठवे आरे को यह धर्मा ।
छठवै पहले दूजे आरै, जैन धर्म नहि तिनके वारै ॥१७६॥
इकतै छहलौ क्रम करि चहिए, उत्सर्पिनी काल तिहि कहिए ।

---

१ निर्वाह, २ प्रमाण, ३ दो, ४ कम, ५ गच्छाधिप, ६ अन्त का समय,

फिरि छह्तै इकलौ उलटो क्रम, अवसर्पिनी काल कौ आगम ॥१७७॥
दुहूँ काल मिलि बारह आरे, सागर बीस कोड कौ डारे ।
काल चक्र इक याकौ कहिए, जैनागम मत ऐसे लहिए ॥१७८॥
चरम काल तीजे आरे मैं, अरु चौथे पूरे वारे मैं ।
चौबीसौ जिनवर अवतरे, ज्ञान योग तप वपु[1] गुण भरे ॥१७९॥
कुल इच्छाक[2] गोत कास्सप जे, इकइस[3] जिनवर तामैं निपजे ।
अरु हरिवंश बंश के माही, गौतम गोत माहि तिहि ठाहि[4] ॥१८०॥
दोय तिथकर औरौ भए, मुनि श्रीसुव्रत नेम छवि छए ।
बरस पिछत्तर याके जबै, आठ मास साढे पुनि सवै ॥१८१॥
चौथे आरे के जब रहे, तेईसौ जिनवर निरवहे[5] ।
चरम तिथकर तब अवतरे, महावीर स्वामी गुण भरे ॥
इनहीकौ कछु करि विस्तारा, प्रथम चवन अब कहौं सुढारा[6] ॥१८२॥

ज्ञातपुत्र महावीर प्रभुका च्यवन कल्यानक

ग्रीषम ऋतु सित[7] मास असाढे, छठ तिथि निशि निशीथ न वाढे ।
देवलोकतै च्यवन विचार्यो, देव योनि तजिबो निरधार्यो ॥१८३॥
वीस सागरोपम वय सजिकै, शुभ विमान पुष्पोत्तर तजिकै ।
देव स्थित भव पूरण करिकै, मनुष योनिकौ हित चित धरिकै ॥१८४॥
जबूदीप भरत छिति माही, ब्राह्मणकुड ग्राम तिहि ठाही ।
ऋषभदत्त द्विजवर की घरनी, देवाऽऽनदा सुव्रत वरनी ॥१८५॥
मति श्रुति अवधि ज्ञान सँग लैकै, ताके गर्भ च्यवे सुखदैकैं ।
सूछम[8] च्यवन समय नहि जान्यौ, करिकै च्यवन सबै पहिचान्यौ ॥१८६॥
ताही निशि तिनि देवानदा, चौदह सुपन लखे सुख कंदा ।

---

१ शरीर २ इक्ष्वाकु, ३ इक्कीस, ४ स्थान, ५ निर्वाण होना, ६ मनरञ्जनया, ७ सुदी, ८ बारीक ।

अति उदार अति आनँदकारी, अद्भुत मगलीक हितधारी ॥१८७॥
सो लखि लहि अति मोदित[१] भई, आनँद युत व्है पति पै गई।
प्रथम जोरि कर विनय सुनायो, पुनि अजुलि सौ सीस छुवायो ॥१८८॥
पाछै सबै बिवस्था कही, जो कछु सुपन माँह उन लही।
कहि ताको फल पूछन लागी, भागवत मुहि[२] करो सुभागी ॥१८६॥
तब पति निजमति गति अनुमित करि, तिन सुपननको आशै[३] चितधरि।
अति हर्षित आनदित व्हैकै, मोद मई व्है सुख सरसै कै ॥१६०॥
प्राणप्रिये! कहि तियसौ भाख्यो, दई दयो चित को अभिलाख्यो।
बडो अलभ्य लाभ तुहि व्हैहै, मुद मगल आनँद हित पैहै ॥१६१॥
चार्यो वेद गनित गुण जेते, जोतिष के सब लहि है तेते।
अरु इतिहास पुरान ज्ञान गुण, बैदिक काव्य छद सिच्छा[४] पुन ॥१६२॥
आगम अगम निगम गुण ज्ञानी, तेरे गर्भ अर्भ मे जानी।
पियजियकी[५] तिय जब यो सुनी, मुदित भई इकतै सतगुनी ॥
आस पाय पति पास न छड्यो, हास विलास भोग वृत मड्यो ॥१६३॥

इन्द्र वैभव वर्णन

तेही समय सुखद तिहि काला, इन्द्र देव तन कौ भूपाला।
वज्र जासुको आयुध कहिए, ऐरावत गज वाहन लहिए ॥१६४॥
जाकी सभा सुधर्मा नामा, लाख वतीस विमान सुधामा।
मुख्य धर्म अवतस विमाना, तैतिस सहस देवगण नाना ॥१६५॥
सात अनीक सैन सैनापति, अप्सर गध्रप गण अगनित अति।
लोकपाल सव आगे ठाढे, बैठ्यो राज सिहासन गाढे ॥१६६॥
कुडल मुकुट कटक उर माला, अगदादि भूपण मणिजाला।
चामर छत्र वीजना राजै, नाटक गीत वाद्य धुनि छाजै ॥१६७॥
जिह तपकरि यह वैभव पाई, सो मै तोको देहु वताई।

---

१ प्रसन्न, २ मुझे, ३ आशय, ४ एक ग्रंथ, ५ पति के मन की

कार्तिक शेठ कथा

मुनि सुवृत्ति स्वामीके वारे, पृथ्वीभूषण नगर मझारे ॥१९८॥
प्रजापाल नृप ताको राजा, प्रजा सीस पर सुखद विराजा ।
तापस एक तहाँ चलि आयो, तिन तप बल सबकौ विरमायो[1] ॥१९९॥
राजा प्रजा सबै तापस घर, दरस हेत आवै नित उठ कर ।
कार्तिक शेठ एक व्रत धारी, सुबस बसै तिहि नगर मँझारी ॥२००॥
सो श्रावक नहि ताके गयो, ताते तापस द्वेसी भयो ।
पारन[2] दिन नृपसौ तिन कह्यो, कार्तिक शेठहि हम नहि लह्यो ।२०१।
सेठ पीठ[3] पायसकी[4] थारी, तौ हम पारन करै तुम्हारी ।
सुनि नृप सेठहि बेग वुलायो, कीनौ जो तापस मन भायो ॥२०२॥
सेठ पीठ पायसकी थारी, गरमागरम लायकै धारी ।
लाग्यो तापस पारन करने, लागी पीठ सेठ की जरने ॥२०३॥
तापस निजकर नाकहि छैकै, सेठहि सैन नैनकी दैकै ।
अति अपमान ठानि मुद ठायो, जानि सेठ मन अति पछितायो ॥२०४॥
जौ पहले मै चारित लहतो, तौ इतनो दुख काहे सहतो ।
ऐसे बार बार चित माही, सोचि सेठ जग जानि वृथाही ॥२०५॥
निज अपमान सेठ लहि मनमै, चारित तुरत लियो जिन जनमै ।
तिहि सँग सहस अठोतर श्रावक, भये मुनि प्रिय परम प्रभावक ॥२०६॥
सथारा लैकै तन तज्यो, सेठ सुधर्म इन्द्रपद भज्यो ।
मरि तापस ऐरापत भयो, सुरपति निज वाहन करि लयो ॥२०७॥
तब तिन गज द्वै मस्तक कीने, इन्द्रौ दोय रूप धरि लीने ।
ऐसे जेते सिर गज करै, सुरपनि हू तेते वपु धरै ॥२०८॥
यो गज गर्व हीन करि दीनो, विवस होय तब भयो अधीनो ।

---

१ वहकालेना, २ तप पूर्णाहुति, ३ कमर, ४ खीर,

सुई इन्द्र यह वैभव जाकी, सुर नर मुनि भय मानत ताकी ॥२०९॥
अवधिज्ञान करि तिन जब जान्यो, जिनवर चव मनु जोनि प्रमान्यो।
मुदित होय आनद अति पायो, आसनते उठि तिहि दिस धायो ॥२१०॥
सात पैंफ[1] चलि कियो प्रनामा, नमोऽर्हंत यो कहि सिर नामा।

इन्द्र स्तुति—

तुमहौ ज्ञान जोग के स्वामी, तप विराग करि पूरन कामी ॥२११॥
पुरुष प्रधान लोक हितकारी, दया दान समकित पर भारी।
भुक्ति मुक्ति दायक भगवाना, अभयद सरनद मगद[2] सुजाना ॥२१२॥

मेघकुमार कथा

मेघकुमारहि ज्यो जिन स्वामी, सुमग[3] दिखायो पूरन कामी।
ताकी कथा कहौ अनि प्यारी, जिन जनगनकी आनँदकारी ॥२१३॥
श्रीजिनवर स्वामी भगवता, एक समय बिहरत[4] बन सन्ता।
बिचरत स्रेनक सुतसौ भेटे, वोधि ताहि भव दुख खखेटे[5] ॥२१४॥
अत द्वार पर थल तिहि दीनौ, रहन लग्यो गुरु वचन अधीनौ।
तहाँ साधु बहु आवै जावैं, गमनागमन सघट्ट[6] वढावैं ॥२१५॥
मेघकुमार राज स्रेनक सुत, भयो गमन आगमतै दुखयुत।
तव उन अपनी विभव विचारी, सदन सेज सुख ससि मुख नारी ।२१६
हाव भाव भर भुजभरि भेटनि, सब विधिकौ सुखसार समेटनी।
एतै सुख तव नीद न आवत, सो अव ह्याँ इतनौ दुख पावत ॥२१७॥
यातै फिरि अपनौ घर लहिए, साधुपनौ दुख असह न सहिए।
यह मति चित धरि गुरु पै आए, गुरु विन भाखे मनकी पाए ॥२१८॥
कह्यो वत्स ! यह दुख नहिं सहिकै, चहत रह्यो फिर गृहसुख लहिकै
ऐसी मति कवहू नहि कीजै, यह केती दुख जाहि न धीजै ॥२१९॥

---

१ कदम, २ मार्ग दाता, ३ सन्मार्ग, ४ विचरते हुए, ५ दूर किए, ६ स्पर्ध

पूरब भव जेते दुख सहे, धरम मरम हित जात न कहे ।
सब बिस्तारि कहौं सुन मोसौं, पूरब जनम करम गुन तोसौं ॥२२०॥
गिरि बैनाढमाहि करिवर तू, भयो हजार करिन[1] कौ वर तू ।
छह रदवारौ[2] मत मदवारौ, मेरु मान अति ऊंचौ भारौ ॥२२१॥
आयो ग्रीषम भीषम काला, बनमैं लगी दवानल ज्वाला ।
दव डरतैं तब तू तह नस्यो, निर्जल सर पकिलमैं फस्यो ॥२२२॥
तहा एक अरि करिवर आयो, तिन तुहि[3] करि आघात दुखायो ।
सहन कियो तैं अति दुख ताकौ, सात दिवस नहि लहि साताकौ ॥२२३॥
इक सत बीस बरस वय भरिकैं, बिंध्याचलमैं जनम्यो मरिकैं ।
चारि दातकौ हाथी सरज्यो,[4] अरुन बरन जातैं गिरि लरज्यो ॥२२४॥
जाके और सातसैं हाथी, अनुचर ह्वै विचरैं तिहि साथी ।
पूरब भव दव दुख जो पायो, जातस्मरतैं सो सुधि आयो ॥२२५॥
सो बिचारि चित धरि तिन वर करि, भूमि एक राखी विनु तृन करि ।
इक दिन बन घन फिरि दव लागी, जन्तु श्रेणि वनकी डरि भागी॥२२६॥
भागी कहूं जब ठौर न पाई, तिहि अतृन भुव जाइ समाई ।
गजवरहू तिहिथल भजिआयो, ज्यौं त्यौं करि तहँ जाय समायो ॥२२७॥
फस्यो अनेक जीव सघटमैं, हलि चलि सक्यो न ता सकटमैं ।
ता गजकौ जब तन खुजलायो, खुजलावनकौ चरन उठायो ॥२२८॥
सो पग थल सूनौ नहि पायो, ससा एक भज तिहि थल आयो ।
ताहि देख गज अति अनुकप्यो, चरन धरनमैं जँहँ चप्प्यो ॥२२९॥
जीवदया व्रत चित प्रति पायों, फेरि न चरन धरनि पै धार्यो ।
ढाई दिन लौं त्योही रह्यो, जब लगि सो दावानल दह्यो ॥२३०॥
दव के शात जबै मस सरक्यो, पद पीडातैं गज हिय कसक्यो ।

---

१ हथनी, २. दात वाला, ३ तुझे ४ पैदा हुआ,

भूख प्यास दुख ता पर बाढ्यो,गिर्यो भूमि गज दव दुख डाढ्यो ॥२३१॥
पूरन करि सौ बरसी आयू, त्यागि दियो तन अति सत भायू ।
तिहि तप स्रेनिक राज सदन में, मेघकुमार आय तुमजनमे ॥२३२॥
ते ही पुन्य साध पद पायो, अब क्यो कातर ह्वै अकुलायो ।
एकै जीव हेतु तब तैसे, भूख प्यास दुख सहे अनैसे ॥२३३॥
सो अब जगत पूज्य साधन तै, दुखी गमन आगम बाधन तै ।
ऐसो तोहि वत्स नहि चहिए, जौ तुहि चहत परम पद लहिए ॥२३४॥
यो गुरु वच सुनि मेघकुमारा, निहचल ज्ञान लह्यो निरधारा ।
हाथ जोरि गुरु पद सिर नायो, प्रभु ! बूडत तुम ताहि बचायो ॥२३५॥
अब जिहि माहि चित्तवृति मेरी, रहै साधसेवामै घेरी [1] ।
दरस परस नित उनकौ पाऊ, निसिदिन चरन साधु के ध्याऊ ॥२३६॥
साधु चरन रज सिर पर राखौ, उनके बचन सुधारस चाखौ ।
ऐसी मति मोहि देहु दयाला, सुनि तोषे गुरु परम कृपाला ॥२३७॥
एवमस्तु तासौ गुरु भाख्यो, तब ते तिन तप व्रत दृढ़ राख्यो ।
तप प्रभाव तन तजि तिहि थाना, भयो देव लहि विजय विमाना ।२३८
पुनि विदेह थल चढि छविछायो, तप प्रतापते मुक्ति सिधायो ।
यौ गुरु कुवरहि पथ दिढायो, कुपथ कूपमे गिरन न पायो ॥२३९॥
यातै जीवदया व्रत नीकौ, पालै सफल जनम ता जी कौ ।
ऐसे गुरुजनके हितकारी, तारन तरन मरन भय हारी ॥२४०॥
काम क्रोध लोभादिक जितने, राग द्वेप ममतादिक तितने ।
जिन जीते जिनवर तुम सोई, तुम जोई चाहौ सोइ होई ॥२४१॥
ऐसे कहि फिर सीस नवायो, अपने मन सकल्प वढायो ।
भूत भविष्यत अरु अव तव ही, ऐसो अचरज भयो न कवही ॥२४२॥

---

१ गहरी ।

जो अरिहत और बलदेवा, चक्रवर्त आदिक वसुदेवा ।
भिच्छुक कुल नहि, उपजै कबही, राजादिक कुल मिलै न जबही।।२४३।।
यातै बडो अचभो नामी, जो द्विजकुल जनमे जिनस्वामी ।
कालचक्र अनगिनत बितीतै, उत्सर्पनि अवसर्पनि बीतै ।।२४४।।
हुडक नाम काल इक आवै, जो ऐसे अचरज उपजावै ।
ताही काल माहि हम हेरे, उपजत ऐसे दसौ अछेरे ।।२४५।।
सो यहि काल आय दरसाने, अति अदभुत रस करि सरसाने ।
आदिनाथ जिन आदि सुदैकै, महावीर स्वामी लौ लैकै ।।२४६।।
जिन जिन जिन वारेमे जो जो, भयो अछेरौ वरनौ से सो ।।२४७।।

प्रथम अछेरा

एक काल इक छिनमे सोई, वहू जीवन की मुक्ति न होई ।
होय कदापि तु अचरज जानो, ऋषभदेवकै वारै मानो ।।२४८।।
एक ऊन सत जिनके साधू, आठ भरत सुत रहित उपाधू ।
आप सहित इक सत अरु आठा, इक छिन मुक्ति गए सुनि पाठा ।।२४९।।
प्रथम अछेरौ यह जिय जानौ, अब दूजे कौ सुनौ वखानौ ।।२५०।।

दूजौ अछेरा

जैन धर्म चौथे आरे मै जब विच्छेदै ता वारे मै ।
असजती पूजै तब जन सब, पूछै धर्म व्रिवस्था ते तब ।।२५१।।
कहै कि सब जिन जनकौ दीजै, अनधन कन्या पूजा कीजै ।
साध वृद्धि तब उनकी पूजा, होन लगी कोउ और न दूजा ।।२५२।।
दूजौ यह अति अचरज नयो, सुविधिनाथ कै वारै भयो ।।२५३।।

तीजौ अछेरा

नरक न जाइ जुगलिया कवहू , जाय तु अचरज अवहू तवहू ।
कौसवी नगरी कौ राजा, सुमुख नाम अति सुभग विराजा ।।२५४।।

वीरा कोली इक तहँ बसै, बनमाला ताकी तिय लसै।
इक दिन नृप ताकौ लखि लई, रूप देखि सब सुधि बुधि गई ॥२५५॥
काम अन्ध व्है कछू न जानी, छल करि ताहि महल में आनी।
भोग विषय तासौ नृप मड्यौ, वीरा कोली धीरज छड्यौ ॥२५६॥
ढूँढत जहँ तहँ दुखित विसाला, हा बनमाला हा बनमाला।
बिरह दुखित तिहिं नृप लखि लीनौ, बडौ खेद पछतावौ कीनौ ॥२५७
दैव जोग नृप अरु तिय ऊपर, गाज[1] परी ताही छिन दूपर[2]।
दूजै भव मरि युगली भयो, ते हरि वर्ष खेत सुख छयो ॥२५८॥
वीरा कष्ट साधि मरि गयौ, किल्विख नाम देवता भयौ।
तब तिन युगलिहि लखि दुख पायो, पूरब जनम बैर सुधि आयो ॥२५
तिन युगलिहिं व्हाँते लै चल्यौ, चपा नगर प्रजा तै मिल्यो।
नृप हरिभद्र नाम कहि थाप्यो, रानी सहित ताहि सुख व्याप्यो ॥२६०॥
ताही पाप युगलिया मरिकै, नरक गए अचरज जग करिकै।
कुल हरिवस भयो तिनही तै, हैं प्रसिद्ध जगमे जिनही तैं ॥२६१॥
यह ई तीजा भया अछेरा, स्वामी जिन शीतल की वेरा ॥२६२॥

चौथा अछेरा

चौथौ अचरज अब सुनि कहिए, अद्भुत रस ताकौ पथ गहिए।
तीर्थंकर नहि तिय[3] व्है उपजै, जौ उपजै तो अचरज निपजै ॥२६३॥
मल्लिनाथ तिय व्है औतरे, जिनवर वपु अदभुत रस भरे।
पूरब जनम करम यह वाध्यो, ताते तिय तन मो जिय साध्यो ॥२६४॥
तिहि भव महाविदेह नगरमै, शतवल नृपके सुखद नगरमै।
कु वर महावल नामा जनमे, मात पिता अति मोदित मनमे ॥२६५॥
मित्त किए छह राजकुमारा, वय गुन सील रूप सम सारा।

---

१. बिजली, २. दोनो के ऊपर, ३. स्त्री।

नचल धरण पूरण अभिचदा, वसु वैश्रेम छह नाम नरिदा ॥२६६॥
।तौ बालमित्र मिलि पूरे, समपदवी प्रापत हित रूरे ।
मैं चारित सब तप कौ लागे, महाबली पै छिपि कछु जागे ॥२६७॥
छह तैं अधिक कपट तप कीना, तिहि प्रभावतैं तिय तन लीना ।
मेथला नगर कुभ नृप जाकै, प्रभावती तिय गर्भ सुताकै ॥२६८॥
मल्लि कुमारी इह सुभ नामा, रूप सील गुन परम ललामा[2] ।
अगहन[3] सुदि एकादस दिना, जनमी जिनवर ह्वै तिहि छिना ॥२६९॥
छहौं मित्रहू जब मरिगए, देसातरमैं राजा भए ।
सुनि गुन रूप सील मल्लीकौ, भए भवर सुनि गुन वल्लीकौ ॥२७०॥
आए तजि निज निज रजधानी, मल्ली कुमारी जिहि दिसि जानी ।
मल्ली अवधिज्ञान करि जाने, परम सनेही मीत पुराने ॥२७१॥
तिन्है देख निज रूप लुभाने, विवस[4] काम वस विकल पिछाने ।
मल्ली स्वर्न पुतली सज कीनी, तामैं निज छवि सब धरि दीनी ॥२७२॥
रत्न भूषनन भूषित कीनी, कचन मई पुतली रग भीनी ।
नितप्रति ताके मुखके माही, अन्नकौर इक इक धरि जाही ॥२७३॥
सो सडि अन्न अधिक जब विगर्यो, अति दुर्गंध भयो घर भिगर्यो ।
छहौं जनन तब सो लिहि[5] लीनी, अति विगध घनतैं घिनकीनी ॥२७४॥
तब मल्ली ते सब समझाए, अनमय तनके भेद बताए ।
अस्थि चर्म नस वस मज्जा मय, रुधिर रु मास मूत्र मल आलय[6] ॥२७५॥
ऐसो यह अन तन धन घिन[7] घर, सुनौ सनेह जोग नहि वर नर ।
बोधि छहनकौ चारित दीनौ, जनम मरन दुखतैं करि हीनौ ॥२७६॥
चौथौ अचरज यहै बखान्यौ, अति विस्मय अदभुत रस सान्यौ[8] ।२७७।

---

१ सयम, २ मनोहर, ३. मगसिर मास, ४. लाचार, ५. देखी
६ घर, ७ घृणित, ८. सने हुए,

पंचम अछेरा

मिलै न वासुदेव द्वै जगमै, जौपै मिलै तु अचरज मगमै।
खड धातुकी मै इक नगरी, कका अमर नाम गुन अगरी ॥२७८॥
वासुदेव इक कपिल सुनामा, तहा बसै सुभ लच्छन धामा।
इक दिन किहू हेत गुन मये, कृष्ण सुवासुदेव तह गए ॥२७९॥
ताकौ हेत कहौ सुन लीजै,एक समय नारद रस भीजै।
पचाली[1] के अविनय खीजै, खड धातुकी जाय पतीजै[2] ॥२८०॥
पदमोत्तर राजा पै गए, रूप द्रौपदी बरनत भए।
तीन लोकमै नाही ऐसी, सुन्दर तिया द्रौपदी कैसी ॥२८१॥
सुनि गुन राजा मोहित भयो, देव अराधि सिद्ध[3] जप कियो।
तिन सुर जाय द्रौपदी हरी, लाय नृपतिके आगे धरी ॥२८२॥
पै द्रौपदी सीलव्रत साधै, निस दिन रहै धर्म आराधै।
भोर भयो पाडव जब जान्यो, चकित थकित ह्वै अति दुख मान्यो ।२८३
ढू ढ हारि जब कछु न- बसाई, तब सुधि कीने यादवराई।
कुन्ती जाय कृष्णकौ लाई, आय कृष्ण सब बिथा मिटाई ॥२८४॥
नारद मुनि ताकी सुधि पाई, तब हँसि यौ पाडवन सुनाई।
कहा करी तुम मिल पाचो पिय,राखि न सके पाचमै इक तिय ॥२८५॥
सोरह सहस अठोतरसै तिय, एकाकी राखत हम ज्यो जिय।
यौ हँसि रिपु पै करी चढाई, सह पाडव चलि गए कन्हाई ॥२८६॥
पदमोत्तर राजा सौ लरे,[4] जीति ताहि तिय लै फिर फिरे।
तब जय सख कृष्ण धुनि कीनौ, कपिल सुवासुदेव सुन लीनौ ॥२८७॥
कपिल तहाँ तब मिलन बिचारी, मुनि सुवृत्त जिनवर जे भारी।
कह्यो न वासुदेव द्वै मिलै, मिलै तु अचरज अति जग खिलै ॥२८८॥

---

१. द्रौपदी, २ पहुँचे, ३ परिपक्व, ४. लड़े

ालौ कपिल सिधु तट आए, तौलौ कृष्ण सिधु मधि[1] पाए।
खनाद तब दुहु दिस भए, नादहिं तै मिलि निज ग्रह[2] गए ॥२८६॥
ह पाचवौ अचभौ नयो, नेमनाथकै बार्‍ भयो।

छठवौं अछेरा

ामरेदर धर्मेन्द्र लोक लौ, जाय नही जौ जाय अचभौ ॥२६०॥
रन नामा तापस एका, कियो घोर तप बरस अनेका।
ाब बिधि साधि कष्ट मरि गयो, तप बल तै चमरेदर भयो ॥२६१॥
ावधिज्ञान करि जब उन देखा, धरमेदर पद निज सिर लेखा।
ाखि अति क्रोध अगनि तन जार्यो, धरमेदर सौ लरन विचार्यो ॥२६२॥
ोजन लाख बदन बिस्तार्यो, सुरन डरावन लाग्यो भार्यो।
ानमै महावीरकी सरना, गहि धरि काहू को जिय डरना ॥२६३॥
व धरमेदर वज्र चलाया, चरमेदर भाजा[3] भय पाया।
भु पद तर[4]अनु[5]तन धर रह्यो,अवधिज्ञान करि सुरपति लह्यो॥२६४॥
हावीर की सरना लीना, तव धर्मेद्र छाडि सो दीना।
ह्यो वच्यो जिनवर की सरना, फेर न ऐसो कवहू करना ॥२६५॥
हु परस्पर दोष छिमाए, अप अपने थल दोऊ सिधाए।
ठौ अछेरौ पूरन भयो, अब आगे सुनि अचरज नयो ॥२६६॥

सातवौं अछेरा

तवौ अचरज जिन देसना, निफल न होय एक पल छिना।
ारु जो होय तु अचरज होई, यह जगमै जानै सब कोई ॥२६७॥
हावीर भगवत सुजानी, जबै भए प्रभु केवल ज्ञानी।

१ बीचमे, २ घर, ३ भागा, ४ पैरका नलिया, ५ छोटा

समोसरन सब सुरन रचायो, महावीर तब शब्द[1] सुनायो ॥
सो देसना न किनहू मानी, यह अचरज सतयौ सुन ज्ञानी ॥२९८॥

आठवौं अछेरा

भूत भविष्यत अरु अब तब ही, ऐसो अचरज भयो न कब ही।
सो अष्टम उपसर्ग बखाना, गोसालक तै जो भगवाना ॥२९९॥
सह्यो कह्यो सो सुनि चित लाई, सावस्ती नगरी सुख दाई।
तहाँ बसै इक खलमन खल[2] सुत, गोसालक तपसी इरसायुत ॥३००॥
तिन जिनवरसौ बाद मचायो, प्रभु पर तेजोलेस चलायो।
सुनखत सर्वनुभूत दोय जन, महावीर के मुख्य शिष्य तन ॥३०१॥
साधु दोय ते आडे आए, तेज लेस ते तुरत जलाए।
तिनहिं जारि वह तेजोलेसा, गयो जहाँ महावीर जिनेसा ॥३०२॥
दै प्रदच्छिना पाछे फिर्यो, गोसालक ही ताते जर्यो[3]।
पै जिनवरके तनके माही, अरुन[4] चिन्ह इक भयो तहा ही ॥३०३॥
काल पाइ सोऊ मिटि गयो, पै जगमे यह अचरज भयो।
यह उपसर्ग जिनै नही होई, यातै कह्यो अछेरो सोई ॥३०४॥

नवौं अछेरा

रवि ससि निज विमान युत आपै, जाहि न कितहू कबहू कापै।
जो पै जाहिं तुं अचरज होई, विदित बात जानत सब कोई ॥३०५॥
कौसवी नगरी के माही, महावीर स्वामी तिहि ठाही।
समोसरन देवन तहँ रच्यो, एको सुख जातै नहि बच्यो ॥३०६॥
तहाँ सूर ससि अति छवि पाए निज विमान चढि देखन आए।
नवम अछेरो यहै बखानो, अब दसवो हू सुनो सुजानो ॥३०७॥

---

१ उपदेश, २ दुर्जन के मन जैसा, ३ जल गया, ४ लाल।

दसवौं अछेरा

अब दसवो अचरज सुनि सोऊ, द्विजकुल जिनजनमें नहि कोऊ ।
देवानदा उदर मझारा, श्रीभगवन्त लियो अवतारा ॥३०८॥
दस अचरज ये सुरपति कहे, सेनाधिपहि बोलि कहि रहे ।
अरहतादिक जिन जन सबहू, भिच्छुक कुल नहिं उपजै कबहू ॥३०९॥
सो श्रीमहावीर जिन ईसा, द्विज कुल गर्भ चवे जगदीसा ।
कुल अभिमान मान मन साध्यो, नीच गोत कुल यातें बाध्यो ॥३१०॥
सो सब अब बिस्तार बखानौ, पिछले भव जिनवर के जानौ ।
सत्ताइस भव महावीर के, बरनौ सुनि गुन परम धीर के ॥३११॥
जा भवतै समकित मितजागी, मुक्त होनकी थित अनुरागी ।
ताहि आदि दै महावीर लो, सत्ताइस भव भए सुबरनौ ॥३१२॥
प्रथम भए नयसार थलीसा।[1] जिन आतिथ हित चहे मुनीसा ।
भोजन सजि मग[2] जोवन लाग्यो,मुनि आए लखि मुद मन जाग्यो ।३१३।
सादर सनमाने वहराए,[3] साध विहरि अनि आनँद पाए ।
मुनि तब कृपापात्र जन जान्यो, ताके सनमुख धरम वखान्यो ॥३१४॥
सो सुनि तिन समकित पद पायो, मुकुत जोग ताको भव भायो ।
यह पहिलो भव दूजो सुर को, तीजौ सुनि अब बरनौ धुरको ॥३१५॥
भरत चक्कवइ घर अवतरे, नाम मरीच सकल गुन भरे ।
इक दिन भरत आदि स्वामी तें, पूछयो माथ[4] नामि नामी तें ॥३१६॥
अहो जिनेसर अब इहि काला, समोसरन थल परम विसाला ।
यामें और जीव कोउ तुमसो, तीर्थंकर है कहो सो हमसों ॥३१७॥
सुनि बोले श्री आदि जिनेसा, समोसरनमें तो नही ऐसा ।
पै तापस तुव सुअन मरीचा, लहि है पदवी परम अमींचा[5] ॥३१८॥

---

१ ठेकेदार, २ राह देखना, ३ दान देना, ४ मस्तक ५ [illegible]

चौबिसवौ जिनवर सो ह्वै है, महावीर नामा जस पै है।
चक्रवर्ति हू ह्वै है सोई, नाम मित्र प्रिय ताकौ होई ॥३१९
महाविदेह खेत मै उपजै, मूका नगरीमे सो निपजै।
अरु त्रिपृष्ठ नामा वसुदेवा, भरतखेत मै ह्वै है एवा ॥३२०
ऐसे वचन भरत सुनि जिन तै, सुत मरीच पै आए छिन तै।
दै परदच्छन[1] वदन कीन्हा, भागवत अपना सुत चीन्हा ॥३२१
पुनि सुतसौ उन ऐसे भाख्यो, दै भगवन्त बचनकी साख्यो।
तेरो जीव तिथकर ह्वै है, वासुदेव पद हू सो पैहै ॥३२२
चक्रबर्तिहू ह्वै है सोई, कही बात ऐसे मुद मोई।
तोहि तिथकर पद ससुहायो[2] यातै हौ तुहि वन्दन आयो ॥३२३
सुनि मरीच अति आनँद पाग्यो, विपुल हर्ष तै नाचन लाग्यो।
कुलकौ गर्ब भयो अति भारी, मोसो सुकुल न जगत मझारी ॥३२४
तेही गर्ब नीच कुल बाध्यो, ता तै भिच्छुक कुल भव साध्यो।
कोड कोड सागर वय माही, सत्ताइस भव भयो तहा ही ॥३२५
तामै तीन प्रथम ये कहे, चौथे भव सुर तन धरि रहे।
पुनि ग्यारह भव माहि इकन्तर, इक तपसी इक विबुध निरतर ॥३२
पद्रह भव जब ऐसे गए, राजकुमार सोरहै भए।
सत्तरवै सुर ठारह माही, वासुदेव पुनि भए तहाही ॥३२७
भव उनीसवै नरक सिधारे, वीसै जनम सिह तन धारे।
गए नरक पुनि भव इकईसै, धर्यो जनम नृपकौ बाईसै ॥३२८
चक्रवर्त पुनि ह्वै तेईसै, फेर देवता ह्वै चौबीसै।
राजा नद पचीसै भए, पुनि छवीसवै सुर गुन छए ॥३२९

तीर्थंकरत्व, १ प्रदक्षिणा, २ अच्छा लगना,

"सत्ताइसवें भव भगवता, देवाऽनंदा उदर बसन्ता ।
यातें इन्द्रहि योग सुगर्भे, नृपकुलमैं सरजावैं अरभे[1] ॥३३०॥
हरिनगमेसिहि ऐसैं कहिकैं, फिर बोल्यो सुरपति सुख लहिकैं ।
अब तुम बेग जाहु तिहि नगरी, देवानंदा जहँ गुन अगरी ॥३३१॥
ताके गर्भे बेग[2] चुरावौ, छत्रियकुण्ड ग्राम मैं लावौ ।
सिद्धारथ राजा जहँ राजैं, त्रिसला रानी जहँ छवि छाजै ॥३३२॥
ताके गर्भमांहि है कन्या, ताहि तहा तैं लै गुनधन्या ।
अदलिदेहु दुहु गर्भ परस्पर, त्रिसला कूख मांहि जिनवर धर ॥३३३॥
हरिनगमेसी यह आयुस[3] सुनि, करि प्रणाम तिहि दिस चाल्यो पुनि ।
करन वइक्री[4] रूप विचार्यो, सब रतननको सार निकार्यो ॥३३४॥
वहु जोजन मिति दण्डरूप धरि, समुदघात ताकैं पाछैं करि ।
लोक उचित निज रूप बनायो, सुर उत्कृष्टी गनि करि धायो ॥३३५॥
अमिति द्वीप सागर मधि ह्वै कैं, जवूद्वीप मध्य छिति छैकैं ।
भरतछेत्र छित[5] पर जव आयो, ब्राह्मनकुण्ड ग्राम तव पायो ॥३३६॥
ऋषभदत्त द्विज वर सुभ घरनी, देवानदा सुवरन वरनी ।
ताहि स्वापिनी निद्रा दैकैं । पुदगल असुभ सवै हरि लैकैं ॥३३७॥

गर्भाकर्षण

सुभ पुदगल तहँ दए मिलाई, गर्भ उदरतैं लियो कढाई ।
छत्रियकुंड तुरत लैगयो, त्रिसला कूख मांहि धर दयो ॥३३८॥
क्वार कृष्ण तेरस ससि बासर, उत्तर फग्गुनी नखत सुखद वर ।
निसि निसीथ वीतैं तिहि वारा, कल्यानक यह गर्भऽपहारा ॥३३९॥
देवानदा उदर सहायक, रहे वयासी निसि जिन नायक ।
तिही राति तिहि देवानदा, फेर सुपन देखे अतिमदा ॥३४०॥

---

१. बालक, २ जल्दी, ३ आज्ञा, ४. देवोचित वैक्रेयिकरूप ५. पृथ्वी

चौदह सुपन प्रथम जे पाए, ते त्रिसला मनु लिए छिनाए।
ऐसो सुपन देखिकै जागी, अति सचित मन सोचन लागी ॥३४१॥
तिही राति त्रिसला रानी ने, सिद्धारथ राजा मानी ने।
सौवत तेई चौदह सुपने, लखे समात[१] बदनमैं अपने ॥३४२॥
सुखद चित्रसाला जहँ रानी, सरस सेजमैं रैन बिहानी।
ताकौ बरनन कछुक बखानौं, जहा सोय सुख सुपनौ जानौ ॥३४३॥

कवित्त

नवल धवल धाम ललित ललाम जिन,
कीनी छाम छबि छपाकर की जो छाई है,
रचित विचित्र चित्र खचित जरय जाकी,
जगर मगर होत जोत चहु ओर घाई है।
छौनी पै बिछौना छवि छाए से विछाए स्वच्छ,
छात चाँदनी की चादनी सी छटकाई है,
कोमल कमल दल रचित विचित्र सेज,
कमलासी तापै सोई त्रिसला सुहाई है ॥३४४॥
जागत कछुक पल लागत भनक नीद,
पागत से दृग मृग-छौना से छिपाए है,
उदित उदार अद्भुत रस भार भरे,
मगलीक सोभा सार सुखद सुहाए है।
चौदहों भुवन ताकी ऋद्धि औ समृद्धि सिद्धि,
साधन विना ही पाई मोद मद छाए है,
चौदहौं सुपन एक एक ते निपुन ऐसे,
अनुभव अपने श्री त्रिसला ने पाए है ॥३४५॥

१ मुखमें समाते हुए,

चौदह सुपन-गज वरनन

देखि दिग[१] दुरद बिगत मद होत जातें,
चारि रदवारौ[२] ऐसौ मत मदवारौ है,
मदर[३] सो उच्च मुख कदर सो जामैं सुठ,
सुन्दर अमद मद गति अति भारौ है ।
अमल कमल दल बिमल बरन स्वच्छ,
मानौ जिन जस पुंज मंजु उजिआरौ है,
ऐसौ गजराजन कौ राज सिरताज आज,
पहिलैं सुपन रानी त्रिसला निहार्यो है ॥३४६॥

२ वृष—

उन्नत विषान[४] छबिखान कौ बखानि सकै,
कधवधु विधिकौ प्रवल बलवारौ है,
कोमल बिमल रोम सोम[५] के बरन तम,
तोम[६] कौ हरन हार रूप निरधार्यो है ।
सुष्ट तन पुष्ट जामैं एको गुन दुष्ट नाहि,
तुष्टता मिलत लखि ललित सुढार्यो है;
ऐसो वृषराजन कौ राज सिरताज आज,
दूसरैं सुपन रानी त्रिसला निहार्यो है ॥३४७॥

३ सिंह—

केसर सिरीख के सरीखे केस केसर के,
कोमल बिमल वर बरन पियारौ है,
तीछन तिरीछे[७] नख तालु तन्न जीभ लाल,

---

१ दिग्गज २ दांत वाला ३ सुमेरु पर्वत ४ सींग, ५ चन्द्रमा, ६ समूह, ७ पैने

दीपसे[1] दिपत दृग दीह[2] देहवारौ है ।
दतुरित दतनिकी पति छबिवत स्वच्छ,
तुच्छ कटि तटि पुच्छ उन्नत उधार्यौ है;
ऐसौ मृगराजन को राज सिरताज आज,
तीसरे सुपन रानी त्रिसला निहार्यौ है ।।३४८।।

४. लक्ष्मी—

हिम गिर मांहि सर सरमै सरोज बन,
बनमै जलज एक परम सुहायो है,
वारिजमै दिव्य गेह गेह मै कनक बेल,
बेलमै कमल एक एक तै सुहायो है ।
सोहनै बदन नैन मोहनै चरन कर,
नाभि उर उरज कमल व्यूह छायो है,
कोमल कमल मुखी कमला विमल देवी,
ऐसौ चौथौ सुपनौ श्रीत्रिसलाने पायो है ।।३४९।।

५ फूलमाला—

चंपक चमेली बेल मालती सुमिल मेलि,
परिमल झेल गुन गूथी[3] मन भाई है,
सेवती गुलाव कुद केतकी मदन वान,
जुही सोनजुही पुही सोही सुखदाई है ।
मधु मकरन्द छके तुदिल मलिन्द वृन्द,
गुजिगुजि रजि मन मंजु मुद छाई है,
फूली फूलमाल सोभा सौरभकी[4] जाल बाल,
त्रिसला को पाचवें सुपन दरसाई है ।।३५०।।

---

१ दीवा, २ लम्बी, ३ गून्थी हुई, ४ सुगन्ध ।

६ चन्द्र—

राकापति रैनपति रतिपति अति मित्र,
उडपति औषधीकौ पति मन भायो है,
रोहिणी रमन राट रूपकौ सुमन तीनौ,
तापकौ समन सुमनन करि ध्यायो है।
द्विजराज जाकौ पद कोविद कलाकौ भलौ,
भाई है रमाकौ मुद कुमुदन छायो है,
पूरन अमद चद आनद कौ कद ऐसौ,
छठवौ सुपन रानी त्रिसलाने पायो है ॥३५१॥

७ सूर्य—

तेजपुज रासी सुप्रकासी तमनासी देव,
बरस छमासी दिन छिन प्रगटायो है,
कोमल कमल कलिकुल मोदकारी भारी,
कोक सोक हारी लोक लोचन सुहायो है;
प्रवल प्रताप पै हरत तीनौ ताप तातै,
तीन काल ताकौ तीन रूप करि ध्यायो है;
मारतड मडल अखडित प्रचड ऐसौ,
सातवौ सुपन रानी त्रिसलाने पायो है ॥३५२॥

८. ध्वज—

उन्नत अकास लौं प्रकास दस दिस माँहि,
छाह जाकी जौन्ह जैसी फैली छित छोर में,
लहरत पौन फहरात फरहर जामें, ।
चित्रित विचित्र सिंहचित्र बीच ठौर मैं ।
कंचन रचित दड खचित अनेक नग,

जगमग होत जग माहिं जोति जोर मे,
दिव्य तेज मई ऐसौ ध्वज रानी त्रिसलाने,
आठवें सुपन देखि लीनौ दृग दौर मे ॥३५३॥

६ कलस—

कचन रचित मनि मानिक खचित मरकत,
पुषराग हीरा मोती जडि धर्यो है,
फूलनकी मालरै बिसालरै लपेटी गरै,
भौर पुज गुजन तै लागै अति प्यार्यो है।
मगलीक द्रव्य जग जेते तेते तामै सब,
सुखद सुभग मोद भाजन सुढार्यो है,
ससर सरस परिपूरन कलस ऐसो,
नवमै सुपन रानी त्रिसला निहार्यो है ॥३५४॥

१० सरोवर—

पूरन सलिल स्वच्छ अच्छ परतच्छ तामै,
लच्छ मच्छ कच्छन कौ केलि थल प्यारौ है,
कजरुक मोद बन घन जामै फूलि रहे,
झूलि रहे भौर भौर साभा भरि ढार्यो है।
हसराज हस कुज सारस वलाक कोक,
भोक तजि रमत चहु घा सुक सार्यो है;
एसो सरवर वरसर मानसर नाहिं,
दसवौ सुपन रानी त्रिसला निहार्यो है ॥३५५॥

११ क्षीरसागर—

गगन अपार पारावार जे उदार सिंधु,
च्छ से लगत ऐसो स्वच्छ सोभा भार्यो है,

तरल तुरग अति तुगके अभग भग,
भौरन की भीर तै गभीर नीर वारो है।
तिमिसे तिमगल से नक्र वक्र दत जामै,
दीसत दगत लौ न अत पार पार्यो है,
ऐसो छीरसागर उजागर अनन्त वन्त,
ग्यारवै सुपन रानी त्रिसला निहार्यो है ॥३५६॥

१२ विमान—
मध्य दिन दिनमनि गनकौ सो तेज तेज,
मनिगन चित्र तै विचित्र चित्रकार्यो है
झझरी झरोखा गोख मोखा अगनित जामै,
दीपमान दीपमान हू ते विस्तार्यो है।
विविध विवुध वधू नाटक निपुन गन,
गधर्पन गान तान मन मोद भार्यो है,
ऐसो सो विमान कवि मान कव जानि सकै,
वारवै सुपन रानी त्रिसला निहार्यो है ॥३५७॥

१३ रत्न रास—
हीरन को हीर मानौ मानिक को मन,
पुखराग कै पराग पानी पन्ननकौ गार्यो है,
लीलकी लुनाई लालडी की ललिताई,
चन्द्रकान्ति की चमक लैकै अतर निकार्यो है।
ताही को वनाय ढेर कचन सुमेर को सो,
दृग न खुलत तीखे तेज कौ पसार्यो है;
ऐसो रत्नरास के उजास कौ प्रकास आज,
तेरवौ सुपन रानी त्रिसला निहार्यो है ॥३५८॥

१४ निर्धूमाग्नि—

जोतकी घटासी तेज पुजकी छटासी सीस,
लटाकी जटासी जाकी दीपति उज्यारी है,
बनमें दवासी नीर निधि बाडवा सी सुद्ध,
दाहक हवासी यौ अरूप रूप वारी है।
हविबीज भूमि निकलक निर्धूम जाकी
तिहू लोक धूम भूमि रही दुति कारी है,
उन्नत उदोत ऐसी अमल अगिन जोति,
चौदहें सुपन रानी त्रिसला निहारी है ॥३५९॥

ऐसे गज वृष सिंघरु रमा, फूलमाल उडपति[1] अनुमा[2]।
ध्वज घट सरवर छीर निधाना, बर विमान मनिचय[3] दुतिवाना ।३६०
निर्धूमानल चौदह सुपने, लखे जबै त्रिसला दृग अपने ।
ते सब मुखमें आइ समाने,[4] ऐसे जब त्रिसलाने जाने ॥३६१॥
जगे भाग सोवत तें जागी, अति आनंद हरष रस पागी ।
अति उत्साह मोदमय भई, अपने भागन की बलि गई ॥३६२॥
उतर सेज ते आनद भारी, गज गति ह्वै पति पास सिधारी ।
देखि दरस अति सरस ललामा, जोरि दुहू कर कियो प्रनामा ॥३६३॥
प्रिय प्रति अधर सुधारस खोले, मधुर वचन अमृत से वोले ।
पहिले सुपन व्यवस्था कही, फिर पूछी पति भाषी सही ॥३६४॥
इन सुपनन कौ फल है कैसो, होय लाभ इनतें पुनि जैसो ।
सो प्रभु मोपै वेग वखानो, अति उतकठित मोकी जानो ॥३६५॥
सुनि पिय तियमुखकी प्रिय बानी, व्है मुदमय चितन[5] करि जानी ।
हरखित व्है तियसौ तव कह्यो, यह अति आनँद जात न सह्यो ।३६६॥

---

१. चद्रमा, २. सूर्य, ३. रत्नो का ढेर, ४ समा जाना ५. विचार कर

अलभ लाभ तुमकौ बहु व्है है, तीन लोक नहिं सुजस समै है ।
धर्म धान धन तन मन जन सुख,सब मिलि है मिटि है सिगरौ[1] दुख।३६७
अति उत्तम गुननिधि सुख पै हौ, जातैं अति आनंद सुख लैहौ ।
कुलदीपक कुलमौल मुकुटमन,कुलध्वज रवि कुलकमल विमल वन ।३६८।
अति सुकुमार उदार चारु तन, रूप सील गुनवान विमल मन ।
सुदर सुघर सुहृद सुख सागर, धर्म धैर्य सौजन्य उजागर ।।३६९।।
सूरबीर नरबीर धीर गति, दानवीर परपीर हरन मति ।
जो तुम भाख्यो अपनो सुपनौ, ताको फल ऐसो सुत निपुनौ ।।३७०।।
गज सौ धीर वली वृष जैसौ, सिह प्रताप धनी श्री कैसौ ।
फूलमाल सो सौरभ साली, ससि सम मन सुभ सुजस विसाली ।।३७१।।
रवि प्रताप परसिद्ध ध्वजा सो, मगल मंगल कमल प्रभा सौ ।
सुदर बिमल कमल सरवर सौ, अति गभीर छीर सागर सौ ।।३७२।।
रत्नरासि सम गुन गन साली, अमल अगिन सम तेज विसाली ।
यह सछेप सुपन गुन जानौ, यातै सहस सहस गुन मानौ ।।३७३।।
यौ पिय पै तिय जब सुनि पायौ, रोम रोम प्रति आनँद छायौ ।
अंब कदब फूल जिमि फूले, पुलकि रोम तन मुद अनुकूले ।।३७४।।
प्रनय बिनय करि प्रिय हि निहोर्यो, प्रनय करनको कर सिर जोर्यो ।
विदा होय रँगमहल पधारी, गज गामिनि भामिनि पिय प्यारी ।।३७५।।
बैठि कुसुम सुख सेज पियारी, अपने मन तब यहै विचारी ।
मति फिर आवै नीद दृगनमैं[2] मति मन लागै असुभ सुपन मैं ।।३७६।।
यातै अब जागत ही रहीयै, गुरु पद देव ध्यान मुख लहियै ।
ह्या रानी यौ रैन बिताई, व्हां नृप अपने मन यौ ठाई ।।३७७।
अधिकारी सब विधि के बोले, तिनसौं मधुर वचन नृप बोले ।

सभावरनन

सभा सदन सद सजकर लीजै, सभा सदनकौ सजन कहीजै ॥३७८॥
प्रथम पुहुमि सब झारि बुहारौ, छौनि बिछौन बिछाय सँवारौ।
जे अति मृदुल मनोज्ञ मनोहर, मोल अमोल विचित्र विविध बर।३७९
दर दर पर दर परदा बाधौ, दिव्य कनक गुन गुनित सुनाधौ।
कनक सलाका मीनाकारी, प्रति परदा चिक लेहु सँवारी ॥३८०॥
छिततै छात छाद्य पट रूरौ, मोलन महँगौ मालन पूरौ ।
जाके चहू किनार किनारी, चपला ज्यौ चमकै जर तारी ॥३८१
ताके चहू कोर दुति दमकै, झीनी झुमडी झालर झमकै।
मनिमय दिव्य सिहासन लावौ, सभा सदनके मध्य बिछावौ ॥३८
औरौ आठ स्वच्छ भद्रासन, दिस ईसान धरौ मम सासन।
झीने चित्र ओट पट माही, एक सिंहासन धरौ तहा ही ॥३८३॥
चदन अगर मलागिर गारौ, छिरकी छोनि सौरभ विस्तारौ।
धूप दान भरि सुभग सुरूपौं, बिविध सुगधित धूपन धूपौ ॥३८४
सुरभि सुमन दस दिसनि बिखेरौ, अलि[1] अवली[2] जहँ लेहि बसेर
ऐसें जब राजा फुरमायो, अधिकारिन के मन मुद छायो ॥३८५
अज्ञा सिर धरि तुरत सिधारे, अप अपने अधिकार सुधारे।
नृपजु कही सो सब विधि कीनी, विविध विचित्र सरस रस भीनी।३
ऐसे मे निसि निघटी सारी, प्रात पूर्व पह पीरी पारी ।

प्रभात वरनन

मुनि प्रभात की भाति उज्यारी, फैलि परी दस दिस दुतिवारी ॥३८
कमल खिले कुमुदिनि कुमिलानी, सुरभि समीर मद सियरानी।

१-२ भौरो की पंक्तिया,

दीजन बरदावन लागे, सुख सज्याते नृप वर जागे ॥३८८॥
थम सरौ के सदन सिधारे, श्रमित होय फिर श्रम निरवारे ।
ोमल अमल कमल कर वारन, अग अभग करे सुकुमारन ॥३८९॥
नि उष्णोदक मज्जन कीनौ, मज्जन करि तन सज्जन कीनौ ।
टि तट अरुन वरन पट धार्यो, उत्तर पट दोउ कधन डार्यो ॥३९०॥
रन कटक कर चूरा रूरे, रहे रतन मय फवि छवि पूरे ।
ार हमेल कण्ठ कण्ठी छबि, बाजूबद रहे बाजू फवि ॥३९१॥
ाथै मुकुट जडित मनि राजै, कानन कु डल अति छवि छाजै ।
न्दर मुन्दरी अँगुरिन सोहै, पहुँचन पहुँची अति मन मोहै ॥३९२॥
सनाऽऽभरन दिब्य सुरलायक, ते सब पहर फबे[1] नर नायक ।
वै सबै सज सजि नर नाहर, रगमहलतै निकसे वाहर ॥३९३॥
त्र चमर गहि लये खवासन, बैठे आय जटित सिहासन ।
त्री सेनाधिप गन नायक, दूत भँडारी सव गुन लायक ॥३९४॥
नक[2] चिकित्सक कबिजन रूरे, एक एक तै सव गुन पूरे ।
ब कर जोरैं सन्मुख ठाढे, सव अति प्रीत भीत भय गाढे ॥३९५॥
हँ नृप सुज्ञन आज्ञा दीनी, जे सुपनज्ञ[3] प्रज्ञ अति भीनी ।
ावौ बेगि सुज्ञ सुनि धाए, आठ चतुर पाए ते लाए ॥३९६॥
ीफल कर ले नृप सौ भेटे, नृप दरसन ते सब दुख मेटे ।
हू कौते अति मन माने, सव सप्रीत सादर सनमाने ॥३९७॥
थम सजे वसु भद्रासन ते, आठौ बैठे नृप सासन ते ।
सला दिव्य ओट पद(ट) माही, बैठि वरासन ज्यौं छवि छाही ।३९८।
ऊ कर फल फूलन भरिकै, द्विज सुज्ञनकै आगे धरिकै ।
नय प्रनय अतिशय चित धार्यो, फिर सिहासन अगीकार्यो ॥३९९॥

---

१ सुन्दर लगना, २ ज्योतिषी, ३ स्वप्नविषयज्ञ ।

तब नृप सुपन बिवस्था कही, फिर ताको फल पूछ्यो सही।
चिंतन करि तिन सबन परस्पर, यथा शास्त्र बोले सब द्विज वर।
सुपनागम द्वासप्तति[1] सुपने, तामें तीस कहे अति निपुने।
ताहू मे चौदह जे कहे, जिन माता बिन और न लहे ॥४०१।
चक्रवर्त माता हू पेषै, पै अतिमद बरन सो देषै।
वासुदेव जो गर्भ आवै, सात सुपन तिहि जननी पावै।-४०२।
अरु वलदेव मडलिक माता, चार एक देखै सुखदाता।
तातै यह निहचै हम जाने, जिनवर त्रिसला गर्भ प्रमाने ॥४०३
ऐसो सुत नहिं भयो न होई, दई देहगो तुमकौ सोई।
गर्भमास नव मास व्यतीते, साढे सात दिवस पुनि बीते ॥४०
अग उपग सग गुन पूरो, मान प्रमान सुभग अग रूरो[2]।
मन रजन व्यजन लच्छन युत, तुम लहिहौ ऐसो अद्भुत सुत ॥४
चक्रवर्त दस दिस मै व्है है, अन धन जन अवनी न समैहै[3]।
सुनि राजा रानी अति हर्षे, धन मन गन सुज्ञन पर वर्षे ॥४०६।
वहु वसु वास[4] रासि तिहि दीने, आस पुराय विदा ते कीने।
त्रिसलाहू पति आयसु पाई, मुदमय अपने सदन सिधाई ॥४०
जिन अवतार जानि सुर राई[5], धन अधिकारी लये वुलाई।
तिर्यक जृंभक देवं सुनामा, तिनसौ कह्यौ इन्द्र सुख धामा ॥४०
जहँ जहँ भूमैं[6] है धन भारी, स्वामी सत्ता रहित उज्यारी[7]।
सो सव महा निधान लियावौ, सिद्धारथ नृप घर पहुँचावो ॥४
जो आज्ञा सुरपति ने दीनी, उन सिर धार यथा विधि कीनी।
अन धन जन अनमादि सवै सिधि, विविध भाँतिकी रिद्धि नवौ निधि
गज हय रथ मय सेना भारी, सेनाधिप अगिनित अधिकारी।

---

१ बहत्तर २ अच्छा ३ समाना ४ कपड़ा ५ मालिक ६ जमींन ७ उजड़ा।

ो सुख संपनि अधिकाई, दपति नृप नृपतिय घरछाई ॥४११॥
पिय तिय ऐसौ जिय धारै, जो अबकै सुत होय हमारै ।
मान धरि नाम बुलावैं, लखि अति मगल आनँद पावै ॥४१२॥
जिनवर मधि उदर विचारी, मति दुख पावै मात हमारी ।
सिसु फरकि देतदुख मातहि,मुहि[1] विशेष चहियत[2] यहि भाँतहि।४१३।
चित चित अचल व्है रहे, सो लहि मात अमित दुख सहे ।
फरक जव मात न लह्यौ, रोय तबै यो अलिसौ[3] कह्यौ ॥४१४॥
दई निधिसो कित गई, कहा करौ अव कैसी भई ।
ा हरि लीनो गर्भ हमारौ, जीव प्रानकै जीवन प्यारौ ॥४१५॥
ा क्रिया यह आडी[4] भई, गर्भ चेतना जिन हरि लई ।
कठोर विषय रस पागे, कर्म पाछले भवके जागे ॥४१६॥
बिलपति तलफति[5] रानी, छिन छिन कलप समान वितानी ।
धिज्ञान करि श्रीजिन जाना, जननी जनम मरन सम माना ॥४१७॥
भगवान अचल व्रत तजिकै, फरकन लगे मात हित भजिकै ।
छह मास गर्भ के भए, पद्रह दिन ता ऊपर गए ॥४१८॥
मनमै तब निहचै कीनौ, मात पिता हित दृढ व्रत लीनौ ।
नाहिं गुरु दिच्छा नौलौ, मात पिता जग जीवै जौलौ ॥४१९॥
ात[6] जब जननी जान्यौ, भयो मोद मन मगल मान्यौ ।
सोवत जागत हित पागी, रक्षा करन गर्भ की लागी ॥४२०॥
प अहार विहार जितेका[7], सब तजि दये एक तै एका ।
जिन वस्तन[8] मन अभिलाषै, ते सब परिपूरन करि राखै ॥४२१॥
देन मनसा उपजी ऐसे, इन्द्रानी श्रुति कुडल जैसे ।

[1] मुझे, २ उचित है, ३ सखी से, ४ बीच में, ५ तडफने हुए, ६ सुनिश्चित, ानें भी, ८ वस्तुओ मे ।

दिव्य अलौकिक सुर मन गनमैं, जो पाऊ तो करौं करनमैं ॥४२
सुरपति अवधिज्ञान करि जानी, जिन जननी हित यह मन ठानी।
क्षत्रियकुण्ड पास सुखदाई, इन्द्रपुरी इक इन्द्र बसाई ॥४२
तहाँ बसे सुरपति सम्पति लै, सुरतरु गो मनि परिपूरन कै।
नृप सिद्धारथ जब यह जान्यो, सेन साजि चढि सगर[1] ठान्यो ॥४२
सुरपति नरपति सौ भय माना, दुसह युद्ध लहि प्रथम पराना[2]।
सब वैभव सेना भट लूटा, सुरपति तिय श्रुति भूसन छूटा ॥४२
सो त्रिसला ढिग भट लै आए, ताहि पहिर मन मोद बढाए।

ज्ञातपुत्र महावीर जन्म कल्याण

गर्भ बास वासर जब बीते, सुभ नव मास आय परतीते ॥४२
साढे सात अधिक दिन तापै, चैत सुदी तेरस तिथि आपै।
नखत उत्तरा सुभ फागुनी, मुद मगल मै सुरनर सुनी ॥४२
सातो ग्रह निज उच्च स्थाना, जनम समय जिहि सुभ फल नाना।
दोष रहित सुभ समय सुहायो, जो जिन जन्म जोग जग पायो ॥४२
जिन श्रीमहावीर भगवाना, जनम लियो गुन रूप निधाना।
जिहि निसि महावीर जिन जनमे, देवी देव मुदित व्है मनमे ॥४२
देवलोक ते भू पर आए, सब देवन के भए वधाए[3]।
दस दिस विमल प्रकास प्रकास्यो, व्योम विमानन ते तम नास्यो ॥४
आनँद मगन सकल सुर वृन्दा, व्यापक कह कह सबद अमदा।
धनद निदेसित अनुचर धाए, कनक रजितकी रासैं लाए ॥४३
वसन आभरन रतन अमोले, सुरभि फूल फल अमल अतोले।
चदन चूर कपूर धूर लै, परिपूर्यो नृपनगर वृष्टि कै ॥४३
सुरभि सुसीतल सुगति वयारी, सरस परस इद्रिय सुखकारी।

---

१ लडाई २ भागना, ३ वधाइया।

थल जलरुह बन उपवन फूले, अलिकुल कल नव रव अनुकूले ।।४३३।
कोकिल केकी कूकन लागे, तरु फर[1] भर धर झूकन[3] लागे ।
चेत अचेत न तन मुद छायो, छिनक नारकिन हू सुख पायो ।।४३४।।
भूम्यो भई भार भय हीनी, वसु वसुमती प्रकट करदीनी ।
अध[4] ऊरध दिस बिदिसन वारी, आठ आठ प्रतिदिसा कुमारी ।४३५।।
अध ऊरध औ विदिसा की सब, चारि चारि सब मिलि छप्पन तब ।
दसौं दिसाते मुद मय धाई, सिद्धारथ नृप आलय आई ।।४३६।।
प्रथम प्रनत जिनवरकै पागी, अप अपने पुनि कारज लागी ।

छप्पन दिग देवी कृत उत्सव

एकन करिदृग पलक बुहारी, चहु दिस पुहमी झारि बुहारी ।।४३७।।
अतर अरगजा जल भर झारी, एकन सीची पुहमी सारी ।
एक स्वच्छ कर दरपन लीने, इक बीजन[1] करमे कर दीने ।।४३८।।
एक छत्र चामर कर धारी, इक स्नान नीर अधिकारी ।
एकन चारु दीप कर लीनो, एकन नाल बधारन[2] कीनों ।।४३९।।
नाल बधारि धारि भुअ भीतर, रत्न रासि राखी ता ऊपर ।
मोद मान करि गान परस्पर, गई असीसत अप अपने घर ।।४४०।।
ऐसो उत्सव मुद मगल मय, छप्पन दिग देविन कीनों जय ।

चौंसठ इन्द्र कृत जन्म उत्सव

सब चौंसठ इन्द्रन मिलि जैसो, कियो महोच्छौ वरनौ तैसो ।।४४१।।
जेहि छिन जनमे जिनवर स्वामी, जिन जन गनके पूरन कामी ।
सुर इन्द्रनके आसन डोले, हरिन गमेसी तुरतै बोले ।।४४२।।
घोष सुघोष घट की कीनी, वर विमान सजि साज नवीनी ।

---

१. फल, २. झूमना, ३ नीचे, ४ पत्ता, ५ झाड़ना, ६ जमीन ।

जोजन लाख जासु बिस्तारा, तापर सुरपति होय सवारा ॥४४३
पटरानी सन्मुख तिय आठा, दिब्याभरन बसन ठठि ठाठा।
बाएँ सामानिक सुरनायक, देवी देव दाहिने लायक ॥४४४
पाछे सात सेनपति सोहै, सुर समूह मुदमय मन मोहै।
अपसर गध्रप किन्नर के गन, नृत्य गान गुन ज्ञान जान जन ॥४४
सिगरे सुर समूह सग सुरपत, खत्रियकुड नगर पहु चे तत[1]।
प्रथम प्रनाम नामि[2] सिर कीना 'सबन स्वाइ[3] जिनवर कर लीना ॥४४
लै सुमेर कौ कियो पयानौ,[4] तत छिन तिहिं थल पहु चे मानौ।
देवलोक गृहपति व्यंतर के, चौसठ इन्द्र मिले सुरबर के ॥४४७
मिलि रचना कलसनकी कीनी, कनक रजत मनिमै[5] रस भीनी।
एक कोट इक लाख सवाई, तिनकी सख्या तहाँ बताई ॥४४८
ते सब नीर छीर निधि भरि भर, चौसठ इन्द्र लिए अपने कर।
उद्यत भए स्नान हित सगरे, हाथन लिए जडित मनि गगरे ॥४४६
पचम आरा आगमके गुन, ससय सरज्यौ सुरपति के मन।
सिसुतन अति सुकुमार सुभायन, क्यो सहि है यह भार अमित घन ४
सो सव मनकी जिनवर जानी, श्रुति मति अवधि ज्ञान के ज्ञानी।
चरन अंगूठा धरनी चाप्यौ, मेरु थेर सह पुहमी काँप्यो ॥४५१
जल थल अनल अनिल नभ सारौ, हल चल खल भल मच्यो पसारौ
देवी देव अहिगन गन्धर्वा, भये सवै विसमय मय सर्वा ॥४५२
अवधि ज्ञान तव सुरपति देखा, जिन प्रताप अपने मन लेखा।
निज अज्ञान जानि सुरनायक, जिनवर चरन गहे सुख दायक ॥४५
अहो नाथ ! अपराध छमीजै, मो मिच्छामि दुक्कडँ लीजै।
बार बार विनये जिन स्वामी, छमाकरी जिन पूरनकामी ॥४५४

---

१ उसी समय, २ झुकना, ३ सुलाकर, ४ प्रयाण करना, ५.. मणि

लियो उठाय अगूठ अबनि ते, मिट्यो छुट्यो सब कंप धरनिते ।
पुनि प्रनाम सुरपति तहँ कीना, स्नान क्रिया मै फिर चित दीना ।४५५।
अच्युतेंद्र पहिलै जल ढारै[1], आन[2] इन्द्र सुर पुनि पय पारै ।।
पुनि ईसान इन्द्र निज कोरैं,[3] जिनवर को बैठाय निहोरैं[4] ।।४५६।।
चारि वृषभतन धरि देविदा, आठ शृग करि सुभग तुरिंदा ।
निरमल जल जिनवर पर ढारै, करि अभिषेक भरे सुखभारै ।।४५७।।
पुनि कोमल निर्मल पट प्यारे, जिन तन पौछि अगोछि सुवारे ।
पुनि कपूर कस्तूरी केसर, चन्दन लै जिन तन लेपन कर ।।४५८।।
अमल कमल कोमल कल दलसे, पट पहराए निर्मल जलसे ।
पुनि कल कनक रचित चित चहने, रतन खचित पहराए गहने ।४५९।
फूल माल तापर पहराई, सुरभि धूप धूपै सुखदाई ।
पुनि नैवेद निवेदन कीनौ, घट सख करि नाद नवीनौ ।।४६०।।
अष्ट मगलिक सन्मुख अरचे, स्वस्तिक घट भद्रासन चरचे ।
श्रीवत्सौरु नद आवर्ता, सपुट मत्स युग्म सुख कर्ता ।।४६१।।
और आठवौ दरपन जानौ, अष्ट मगलिक ये परमानौ ।
र मनि मानिक हीरा मोती, जिनकी जगमे जगमग जोती ।।४६२।।
सब विधि रतन जतन करि जिनके, रचे मगलिक सन्मुख तिनके ।
श्रीफल पूग आदि फल नीके, सन्मुख धरि श्रीजिनवर जी के ।।४६३।।
नृत्य नाट्य गुन ज्ञान तरगा, चग मृदग उपग अभगा ।
पुनि आरती उतारै वारै, ता पर राई लोन उतारै ।।४६४।।
जिनवर मज्जन सज्जन करिकै, लाए जहँ त्रिमला सुख भरिकै ।
प्रथम स्वापिनी निद्रा हरिकै, पुनि प्रनाम जिन जननिहि करिकै ।४६५।।

---

१. डालना, २. और, ३. गोद ४. देखना,

कोरिन कचन वरषा भरिकै, कोरि[1] असीस जोरि कर करिकै।
सुर सुरपति सब सदन सिधारे, मगल मोद भरे मन भारे ॥४६६॥

सिद्धारथ राजा कृत उत्सव

भोर भए ज्यौही नृप जागे, पुत्र जनम आनँद रस पागे।
अधिकारी सब लए बुलाई, तिनसौ नृपति कहे समुझाई ॥४६७॥
बदीवान बद सव छोरौ,[2] मगत मनुते[3] मुख मति मोरौ।
जेतो जो मागै तिहि तेतौ, विन पूछे दीजौ धन वेतौ[4] ॥४६८॥
खारी पाली गज अरु बटखर, तोल प्रमान सबै बढती कर।
वीथी वगर भगर नगरी के, चौपथ चार चौक सिगरी के ॥४६९॥
चदन अगर अरगजा घोरौ, सीचि सीचि सब सौधै वोरौ।
धुजा पताका घर घर बाधौ, दर दर मगल तोरन साधौ ॥४७०॥
चदन चरचित कलस धरावौ, कदली खभन ते छवि छावौ।
कुसुम समूह माल फूलनकी, मत्त मधुप मन अनुकूलन की ॥४७१॥
ठौर ठौर सत कौरि वखेरौ, धूप द्रव्य धूपौ सत बेरौ।
नरतक नट भट भाड भगतिया, गायक आदिक जे सुभगतिया ॥४७२॥
अप अपने गुन गन विस्तारै, जिहि लखिकै रीझैं रिझवारै।
तत्र वितत्र सुपिर घन आवज, वीन बेनु कठताल पखावज ॥४७३॥
ताल तान गुन गान मान सुन, होहिं मोदमय सव जनपद जन।
आज्ञा लहि अधिकारी धाए, सजि सव सौंज खवर ले आए ॥४७४॥
नृप मुनि जगे भाग लौं अपने, सफल भए रानीके सपने।
सैन ऐन तजि सरौ मदनमै, श्रम करि हरि अति आनँद मनमै ॥४७५॥
उवटि अरगजा वासित तेलन, करि अभ्यग अग सुख झेलन।
न्हाय अगौछि पोछि तन कोमल,अमल अमोल वसन पहिरे कल ॥४७६॥

---

१ करोड, २ छोडना, ३ मनुष्य, ४ उतना,

पहिने गहने चहने जियके, मुकता हार चार छवि हियके ।
मुकट कटक कुडल कटि मेखल, कठी कठ लसत मुकताहल ॥४७७॥
मुदरी पहुँची छला बिराजै, अग अग अति फवि छजि छाजै ।
मन्त्रि मुसाहिब सेनप माथा, सभा सदन आए नर नाथा ॥४७८॥
बार[1] भँडारन के सब खोले, दान जाचकन दए अतोले ।
जातै प्रथम खबर सुनि पाई, सवालाख तिहि दई वधाई ॥४७९॥
मुद मगल मै कल व्यवहारा, जाति कर्म आदिक छवि भारा ।
कीने छठी छठै दिन कीनी, अति आनँद रँग रस भीनी ॥४८०॥
पूत[2] भए सूतक दिन बीतै, न्यौते न्यात लोग करि प्रीतै ।
रचि पचि मची सजन जिवनारा, [3]जेवन[4]लगे नगर जन सारा ॥४८१॥
मधु मेवा पकवान मिठाई, जो जाके मन भाई पाई ।
घेवर बाबर खुरमा खाजा, कहै परस्पर रुचिसौ खाजा ॥४८२॥
गुप चुप गूँझा मेव इमरती, मधुर जलेबी अमरित झरती ।
पूरन पौलि कचौरी पूरी, रूपन रूरी स्वादन पूरी ॥४८३॥
यौ अति अमित अनेक प्रकारा, कविजन वरनि न पावै पारा ।
विविध भाँति के व्यजन नीके, पटरस मिले भावते जीके ॥४८४॥
कचरी कैर करौद बखाना, अदरख नीबू विविध सयाना ।
दूध दहीकी कही न जाई, मृदु माखन अरु मधुर मलाई ॥४८५॥
और कहालौ अधिक कहीजै, पटरस व्वैचन्नि पत्र पनीजै ।
ऐसै सब जिवनार जिवाई, वर वीरा[5] पुनि दये खवाई ॥४८६॥
जामै लवँग सुपारी एला, केसर चूर कपूर सुमेला ।
छिरके सब गुलाबके पानी, सभा अतर तर करि मनमानी ॥४८७॥
पुनि पहिरावन दीनी जनकौ, भूषन वसन सुलसन[6] सबनकौ ।

---

१ दर्वाजे २. पवित्र ३ प्रीतिभोज ४ जीमना ५ पान के बीड़े ६ मच्छा लगना

रानीहू सब तिय सनमानी, दीनी जो जाके मनमानी ॥४८८
तास बास बासे मनि गहने, दै सब तियसौ लागी कहने ।
जबतै जनम्यौ सुअन हमारे, अन धन जन दिन दिन अधिकारे ॥४८९
यातै सुभ सुत नाम पियारौ, वर्द्धमान हम अबतै धारौ ।
जैसो नाम आपहू तैसौ, दिन दिन बढत लगै दिन जैसौ ॥४९०
धाय मायकौ दूध छुट्यो जब, लालन पालनतै निकसे तब ।
क्रम क्रम करि जब आठ बरसके, भए नए गुन दरस परस के ॥४९१
तब सुर एक परीछा कारन, सिसु बपु[1] धरि आए अनुहारन[2] ।
खेलन लग्यौ कुमारन माही, जिन सँग जिनवर रमत सदा ही ॥४९२
सुरमाया करि अहि बपु धरिकै, लिपट्यो इमली तरुसौ अरिकै ।
सिसु सब भय मय भये पराने,[3] अहि गहि फेंक्यौ बीर महाने ॥४९३
फिर तन सुर हय तन धरि लीनौ, तिन पर जिन आरोहन कीनौ ।
जदपि अतुल बल करि सो बाढ्यो,सहि न सक्यौ जिनवर बल गाढ्यौ४
तव परि पद[4] अपराध छिमायो, देवलोक कौ तुरत सिधायो ।
नवै वरस चटसाल विठाए, जद्यपि विद्या निधि जिनराए ॥४९५
भूषन अमल अमोल पिन्हाए, उपाध्याय के ढिग[5] तिहि लाए ।
ओ नम करि सिद्धि प्रथम ही, सुरव्यजन वर वरन मरमही ॥४९६
सकल शास्त्र विद्या जग जेती, स्वय वुद्धि जिन जानै तेती ।
आयो सुरपति धर द्विज देहा, पूछन लग्यो कठिन सदेहा ॥४९७
समाधान जिन ऐसौ कीन्हौ, उपाध्याय हू सक्यौ न चीन्हौ[6] ।
तव सुरपति मुख जिनवर महिमा, सुनि जान्यौ नहिं ऐसौ महि मा[7]४
जद्यपि उपाध्याय गुरुराई, बाल शिष्य के पकरे पाई ।

---

१ शरीर, २ समान, ३ भागना, ४ पैरो में पटकर, ५ समीप, ६ जानना
७. पृथ्वी पर,

मात पिता सुनि सुत के लच्छन, अति आनदमय भए विचच्छन ४९९
ोबन वय जब भए जिनेसा, व्याहे राजकुमारि सुदेसा।
ासुदा नाम बाम[1] सुकुमारी, तासौं विषय भोग सुखसारी ॥५००॥
ार्द्धमान जिहि भाख्यौ माता, महावीर जग समन[2] विख्याता।
सिद्धारथ राजा पितु जाकौ, त्रिसला नाम जासु माता कौ ॥५०१॥
ाई बडौ नदवर्द्धन कहि, सुपारस्व नामा चाचा लहि।
जेहि सुदर्शना नाम बहिन कौ, प्रिय दरसना सुता दरसन कौ ॥५०२॥
ारु जिनवर पुत्री की पुत्री, तासु नाम जसवती दुहित्री।
ऐसे ग्रही धर्म अनुसरि कै, वर सपति सतन सुख भरिकै ॥५०३॥
ाव अट्ठाइस वरस जिनेसा, भए मात पितु सुरलोकेसा।
अग्रज भ्राता सौ तब भाख्यौ, भई प्रतिज्ञा पूरन साख्यौं ॥५०४॥
ाब इच्छा दिच्छा की मनतै, उमडी परत रहत नही तनते।
ाग नाथ अब अज्ञा दीजै, जातै जनम सफल कर लीजे ॥५०५॥
ाव अग्रज भ्राता यो वोले, मधुर बचन अमृत के तोले।
ाद्य सोग तातरु माता कौ, जियतै दुख यह मिट्यो न ताकौ ॥५०६॥
ातक[3] दिन अब धीर धरीजे, पाछै मन भावै सो कीजै।
ानी अज्ञा जिनवर स्वामी, जिन जन गन के पूरन कामी ॥५०७॥
ोय बरस तब औरो रहे, तीस वरस पूरे निरवहे।

दीक्षा कल्याणक

व लोकतै देव पधारे, चारित समय जनावन[4] वारे ॥५०८॥
हन लगे जय जय जिन स्वामी, छत्रिय धरम नृपन मे नामी।
ातम तत्व बोध अब लीजै, जिन जन जीवन कौ हित कीजै ॥५...

१ स्त्री, २ शांति दाता, ३ ... ४ बताना।

सुनि ससारिक सुख सब जेते, जन धन अन उपवन घन तेते।
बाज ताज गजराज राज सब, तजि दीने सुख साज काज सब ॥५१०॥
कछु कुटुब कछु दासन दीने, दान छमछरी मै जे कीने।
ते अब कहौं घरी छह माही, एक कोटि बसु लाख सवाही ॥५११॥
तीन अरब अरु व्यासी कोरा, अस्सी लाख दान सब जोरा[1]।
उत अग्रज भ्राता है राजा, दिक्षा समय महोच्छौ काजा ॥५१२॥
नगर झगर[2] सब वगर[3] सिगारे, धुज तोरन कलसादि सवारे।
पुनि जिनकौ स्नान कराए, सहस अठोतर कलस ढराए ॥५१३॥
भूषन बसन सरस पहिराए, अतर अरगजनि करि सुर भाए।
चन्द्रप्रभा पालकि बैठाए, विविध भाति बाजन वजवाए ॥५१४॥
चौसठ इन्द्रन कन्ध चढाए, खत्रिय कुड गाम मझि[4] आए।
नगर लोग सब देखन धाए, यो जब नगर बाहरै आए ॥५१५॥
उपवन तजि वन घन नियराए, ज्ञातखण्ड वन घन जव आए।
अति आनन्द मोद मन छाए, तरु असोक तर[5] सोक मिटाए ॥५१६॥
पालकि तै पुहमी[6] पग धारे, तन तै भूषन वसन उतारे।
पचमुष्टि करि लोच मुकरिकै, द्वै उपवास धीर चित धरिकै ॥५१७॥
अगहन असित दसम तिथके दिन, नखत उत्तरा फागुनि तिहि छिन।
तीजे पहर सुव्रत वर वासर, विजय मुहूरत मै ता[7] तरु तर ॥५१८॥
देवदुष्य तहँ इक पट धार्यो, सव तजि चारित अगी कार्यो।
मन पर जाय ज्ञान तहँ पायो, चौथौ ज्ञान आनि मन छायो ॥५१९॥
सुर कुल कुल कुटुव जन जेते, जिन पद वदि विदा भए तेते।
पुनि अग्रज से अज्ञा लैकै, जिनवर विहरे[8] विरहा[9] दैकै ॥५२०॥

---

१ जोड लगाना, २ नगर के बाहर और भीतर, ३ दस पाच घरो का महल्ला
४ बीचो बीच, ५ नीचे, ६ जमीन, ७ उस, ८ चले जाना, ९ वियोग,

साँझ समय इक गाउ कुमारा, तहाँ जाय पहुचे सुकुमारा।
काउसग्ग करि ठाढे[1] रहे, आतम तत्व ध्यान धुनि गहे ॥५२१॥
ग्वाल एक तहँ आवत भयो, बैल एक तिहि थल धरि गयो।
बगरि[2]गयो सो चरत बिपिन मैं, ग्वाल आय पूछी वर जिनतैं ॥५२२॥
मौन दसा जब ज्वाब न पायो, जान्यो चोर क्रोध अति छायो।
बहु ताडन तर्जन[3]तिन कीनौ, सहन सील जिन सब सहि लीनौ ॥५२३॥
मनु[4] तनु धरि सुरपति तहँ आयो, तिन ग्वालहि समुझाइ छुडायो।
सिद्धारथ नामा इक देवा, छाँडि करन जिनवर की सेवा ॥५२४॥
सुरपति आपु[5]सुधाम सिधाए, द्विज बहुलालय[6] जिनवर आए।
पायस[7] पारन कीनौ जिहि घर, कुसुम वृष्टि कीनी सब सुरवर ॥५२५॥
ऐसैं आठ मास तप धारा, करि सुभ सुच्छ[8] अहार विहारा।
दोयभ्रत नामा तापस घर, पावस आदि पधारे जिनवर ॥५२६॥
सु[9] हो मित्र नृप सिद्धारथ को, अति सनमाने जिन तीरथ कौ।
भरि चौमासा रहिबे कारन, विनयो मान लियो जिन तारन ॥५२७॥
तहँ जिन तप करि ध्यान लगायो, घर महँ जे चदन तन लायो।
ताकौ सौरभ दस दिस छायो, अलिकुल चहु दिस आय लुभायो ।५२८।
सुर तरुनी सौरभ रस पागी, जिनसौं चदन मागन लागी।
जब जिनवर कछु ज्वाव न दीनो,तियन सुतन जिन तन घसि लीनौ ५२९
तिही बरस बरसात न बरस्यौ, तब सब लोग तहाँ कौ तरस्यौ।
कह्यो साध यह कित तैं आयो, जातैं भयो सकल अनभायो ॥५३०॥
लोक अहित तापसहूं मन धरि, भयो विमन तापसहू जिय करि।
सो जिय जानि जानि जिन नायक, पाच अभिग्रह लीने नायक ॥५३१॥

---

१ खडे होना, २ अपने मुहल्ले मे जाना ३ धमकाना ४ नरतन ५ [illegible]
[illegible] बहुल के घर ७ खीर ८ पवित्र ९ पुन

बिना प्रीति कहु रात न रहनौ, काउसग्ग तप करि निरबहनौ[1]।
कर तल भोजन मौनी रहनौ, नही जुहार[2] गृही सौ कहनौ ॥५३२
ऐसी पाँच प्रतिज्ञा गहिकै, दुस्सह लोग अविज्ञा[3] सहिकै।
अरध असाढहि तै थल तज्यौ, बिहरि अस्थि नामा थल भज्यो ॥५३३
सूलपानि तहँ जक्ष कुमति गति, अस्थिर चित मठ माहि दुष्ट अति
रहै तासु पूरब भव कथा, सुनौ ताहि बरनौ मति यथा ॥५३४॥
धन सारथ बाहू[4] बिहवारी, ताकौ बैल थक्यो गति हारी।
तब तिन साह बैल अपनो लै, ग्रामाधिपकौ दियौ सौपि कै ॥५३५॥
और बहुत धन ताकौ दीनौ, वृष रच्छा हित सो तिन लीनौ।
पै ता वृष की सार न कीनी, धन सब खाय करी मति हीनी ॥५३६
भूख कष्ट सहि वृष मरि गयो, सौई सूल पानि जछ[5] भयो।
पूरब बैर तहाँ तिन सुधि कर, मरी करी पशु नरकी घर-घर ॥५३७
दुपद चारि पद अगिनत मरे, लोक उपद्रव तै सब डरे।
तब इक गनक[6] तहाँ चलि आयो, नगर लोग सब पूछन धायो ॥५३८
तब तिन एक उपाय बतायो, मरन जिते नर नारिन पायो।
तिन सबहन के अस्थि मँगाओ, वृषाकार इक मठ बनवाओ ॥५३९
सकल प्रजा मिल त्यौंही कीनौ, भयो सुदेश उपद्रव हीनौं।
ना दिनत ता मठके माही, रह न सके कोऊ निसि ताहि ॥५४०
तहाँ बसे निसि जिनवर नामी, जद्यप लोगन बरजे स्वामी।
तह तिन जच्छ बडो भय दीनौ, गज अहि बीछी वपु धरि लीनौ ॥५४१
निफल भयो बल छल करि थाक्यो, जिन पद पर्यो कुमति मद छाक्यो
जोरि हाथ अपराध छमायो, ताहि प्रबोधि आप अपनायो ॥५४२॥

---

१ समय बिताना २ कुशल क्षेम ३ अपमान ४ सार्थवाह् ५ यक्ष ६ ज्योति

चरमरैन[1] कछु रहत सवारे, दस सपनै जिन नाथ निहारे।

१० स्वप्न—

प्रथम पिसाच दुष्ट इक मारा, सित कोइल पुनि असित निहारा ॥५४३॥
फूलमाल गो बर्ग सुहायो, पदम सरोवर सिंधु सुहायो।
दिनकर मेरु आँत तरु लिपटी, यो दस सुपन नीद लखि उचटी ॥५४४॥
जनपद जन जिन महिमा जानी, सब मिलि वदे पूरन ज्ञानी।
अस्थि ग्राम चौमासा रहे, मौन वृत्त सब असहन[2] सहे ॥५४५॥
गनक एक जिन सन्मुख आयो, तिन विवाद करि सोर मचायो।
मौनि प्रतिज्ञ जान सिद्धारथ, जिन तन पैठ्यो साध्यो स्वारथ ॥५४६॥
करि विवाद सो गनक हरायो, हारि दीन ह्वै विनय सुनायो।
स्वामी तुम साधन मै नामी, जहाँ रहौ तहँ पूरन कामी ॥५४७॥
पै मोको यह थल तजि दूजै, कोउ न मानै कोउ न पूजै।
यह सुनि जिन कछु बरखा रहतें, जानि अप्रीति विहारे[3] तहतें[4] ॥५४८॥
सोमदत्त द्विज मित्र पिता को, तहाँ मिले मारगमै ताको।
हाल बिहाल निहारि जिनेसा, कृपा दृष्टि चितये सुभ वेसा ॥५४९॥
तव उन अपनौ दारिद भाख्यो, जाते मुतिय[5] मान नहि राख्यो।
तब सुनि सोचे जिनवर स्वामी, हौ निग्रंथ यह अर्थी कामी ॥५५०॥
इहि थल याहि कहाधौ[6] दीजै, आस निरासी कैमे कीजे।
देव दूष पट आधौ फाड्यो, दारिद दरद हिये तै काढ्यो ॥५५१॥
ताकी कोर[7] सुधारन द्विजवर, वस्त्र गयो लै ताँती[8] के घर।
तिन ताती ताकौ कहि साधौ, जौ लै आवे दूजौ आधौ ॥५५२॥
ऐसौ साधि देहु मै सो पट, लाख मोल पावै मो नहि घट[9]।

---

१ रातका अंतिम भाग २ असह्य ३ चले गए ४ वहा से, ५ पत्निका ने ६ कुछ भी ७ कन्नी, ८ रफूगर ९ कम।

लोभ लागि सो द्विज फिर धायो, श्रीजिनवर स्वामी समुहायो ।।५५
पै अति सोच सकोचन पार्ग्यौ, माँगि सकै नहि लालच लाग्यो ।
तिहि छिन कटक वृच्छन माही, उरझ्यो देवदूष पट ताही ।।५५४
जिनवर तिहि फिरि लखि तहँ त्याग्यो, तिहि लीनौ द्विज लालच लाग्
लोभ सबल जिन जान्यो दुर्घट, क्यौं न दियो पहिलै सिगरो पट ।।५५
पचम आरौ निकट सभाल्यो, जिहि कु-समय गुन मो मन चाल्यो ।
यो विचार जिनवर जिय जाने, आगम काल साध पहिचाने ।।५५६
क्रूर लोभ मय होहि काल बस, मो मन लोभ वस्त्र कटक फस ।
कटक क्रूर दिव्य पट धार्यो, लोभ परिग्रह करन बिचार्यो ।।५५७
तेरह मास दिव्य पट सोई, जिनवर तन आच्छादन होई ।
तदनन्तर भगवन्त जिनेसा, लगे रहन विन वसन सुवेसा ।।५५८
कर तल वन आहार बिहारा, काय नेह तजि आतम धारा ।
सहै सहन असहन उपसर्गा, जो किय तिय पसु मनु सुरवर्गा ।।५५६
पुनि जिन विहरि तहाँ तै आगे, कनक बालुका भुव तट लागे ।
गाउँ कनक खल ढिग जिनवर जे, पहुँचे तहँ के लोगन बरजे ।।५६०
आगे रहै दृष्टि विप विपधर, दीठ विपहि तै जो मारत धर ।
चड कोश ता अहि को नामा, काल कराल क्रोध को धामा ।।५६१

चण्डकोसिया—

याहू की पूग्व भव भावी, भाखौ जिन अहि तन उरझावी ।
इक दिन काहू नगर मझारी, पावस रितु मुनि जिन व्रनधारी ।।५६२
गए गोचरी हेतु गृही घर, मरी मेडकी दवि मुनि पग तर ।
शिष्य देखि सो बोल्यो गुरुसौं, देहु स्वामि मिच्छामि दुक्कडौ ।।५६३
गुरु न मानि जब निज थल आए, फिर चेला सुइ भाव चिताए ।

फिरि सध्या पडिकमन समैं हू[1], गुरु न कही मिच्छामि दुक्कडू ॥५६४॥
तीन बेर चेला बर गुरु सौ, भाखि रह्यो नहि मानी धुर सौ ।
अरु तापर अति क्रोध पसार्यो, मुनि चेला ओघा लै मार्यो ॥५६५॥
बच्यो भाजि चेला गुरु क्रोधी, मरि तीजे भव भयो विरोधी ।
तापस व्है इक बाग बनायो, सो फल फूलनतै अधिकायो ॥५६६॥
इक दिन राजकुअर तिहि बारी, आय एक फल तोर्यो[2] भारी ।
तापस लखि अति तामस[3] छायो, लै फरसा तिहि मारन धायो ॥५६७॥
क्रोध छाय दृग अध सुकर्यो, अन्ध कूप मै सो गिरि मर्यो ।
मरि इह भव सो तापस तयो, चडकोश दृग विषधर भयो ॥५६८॥
अभयद निर्भय व्है जिन नाथा, ताही पै गए करन सनाथा ।
तहँ तपकरि जिन वितई[4] नीसा[5], अहि घरतै कढि[6] जिनतन डसा॥५६९
दूध रुधिर कै बदलै निकसा, बदन कमल जिनवर का विकसा ।
जातस्मर जिन अहिकौ दीना, तिन सुनि समझि चरन गहिलीना॥५७०॥
प्रान तजे तिन करि सथारा, देवलोक आठवै सिधारा ।
नाग सेठ धर पुनि जिन नाथा, करि पारन तिहि कियो सनाथा ॥५७१॥
पुनि भगवत तहाँ तै विहरे, श्वेतविका नगर मै ठहरे ।
नृपति प्रदेसी नाम तहाँ तिन, महिमा मानी जानि नाथ जिन ॥५७२॥
आगे विहरि सुरभिपुर पैठे[7], उतरन गग नाव पर बैठे ।
धरै भाव सुर नाग कुमारा, लग्यो आय तहँ बोरन बारा ॥५७३॥
पूरब भव तिन सिह सभारा, वासुदेव व्है जेहि जिन मारा ।
सबल कंबल देवन ताकौ, बरजि जताई जिन महिमाकौ ॥५७४॥
तिनहूं की पूरब भव करनी, सुनि वरनौ जो आगम बरनी ।

---

१ समय २ तोडा ३ क्रोध ४ व्यतीत ५ रात ६ निकल कर ७ प्रवेश करना

मथुरापुर जिनदास महाजन, तिन निज वृष जोरी[1] इकदिन छन ।५७५।
किहू[2] मित्रकौ मागे दीनी, तिन अति वाहि[3] करि बल हीनी ।
मरन बार नवकार सुनायो, मरि सुभ ध्यान देव पद पायो ॥५७६॥
संबल कबल तिनकौ नामा, सब देवन मै भए ललामा[4] ।
पुनि जिनवर जग बिहरन लागे, पॉच सुमति मिति के रस पागे ॥५७
क्रोध मान ममतादिक त्यागे, स्वच्छ इच्छ तजि बिहरन लागे ।
निरालब जैसे आकासा, निसप्रेही ज्यो पवन विलासा ॥५७८॥
सारद जलकी नॉई[5] निरमल, मरजादा न तजत जिमि निधि जल
खडग विषान मान[6] एकाकी, ससि सम ताप न जामे बाकी ॥५७९
गुपत सकल इद्रिय कछुवा लौ, चारित भर[7] ब्राहक बरदा लौं ।
द्रव्य न देस न भावन काला, प्रतिबधे नहि जिन जन पाला ॥५८०
ऐसै जग बिचरै जिन स्वामी, जिन जनगनके पूरन कामी ।
पचरात नगरी मै बसै, इक निसि गाव माझ बसि नसै ॥५८१॥
विप चन्दन तृन मनि सम जाकै, जीवन मरन समान सु ताकै ।
ऐसैं जिन जन पारगामी, महावीर बर भगवत स्वामी ॥५८२॥
बिहरे विचरे बिपन नगरमै, अमल अचैल अबोल डगरमै ।

घनाक्षरी छंद

मान कौ न मान अपमान अपमान को न,
रागहू सौ राग न विराग है विराग सौ ।
सूरज मे सूर पूरे सोम जैसे सोम रूरे,
धूरे है अधूरे है सहन जाकी जाग सी ॥
धराधर जैसे धीर वीर बलवीर जू से,

---

1 जोड़ी 2 किसी, 3 चलाकर, 4 मनोहर, 5 समान, 6 सदृश 7 बोझ,

छीर नीर निधिसे गभीर चीर त्याग मौ।
ऐसैं बिहरत बीतराग महाबीर स्वामी,
जाको यौ महातम है ग्रातम की लाग सौ ॥५८३॥

तदनतर दूजै चौमासे, राजगृही नगरी मै थासे[1]।
ाती मनखल[2] बासा दीना, पारन विजय सेठ घर कीना ॥५८४॥
मनखल सुत गोसालक तिहिं ठा, जिन गोहन[3] लाग्यो लखि महिमा।
जिनबर तब तिहि पूछयो भारौ, तिन भाख्यो हौं शिष्य तुम्हारौ ।५८५।
स्वर्नबालुका पुर जिन ग्राए, नदन द्विज पारन करवाए।
हो उपनद तासु को भाई, गोसालक नहँ भिच्छा पाई ॥५८६॥
कुत्सितान्न[4] लहि कोप ग्रधीनौ, स्राप ताहि ऐसौ कहि दीनौ।
जो मो धर्माचारज साँचौ, तौ तुव घर जाँ ग्रगिनाचौ ॥५८७॥
स्राप देत ताकौ घर जर्यो, क्रोध छाय ऐसौ वल कर्यो।
मनखल सुत निज कृत ग्रभिमानी, भयो छयो मद गरव गुमानी ।५८८।
चपा वृष्ट गाँवमैं ग्राए, चौथी वरषा तहाँ बिताए।
जीरन सेठ निमत्रन दीना, ग्रभिनय के घर पारन कीना ॥५८९॥
लाठ देसमै पुनि जिन ग्राए, काउसग्ग तप ध्यान लगाए।
तब तिहिं काल ग्वाल इक ग्राई, जिन पग पर धरि खीर रँधाई ॥५९०॥
बरषा रितु जिन तहाँ गँवाई, पुनि छठई वरषा जब ग्राई।
पुरी भद्रिका जिन छबि छाई, ग्राठ माम रितु तहाँ बिताई ॥५९१॥
तहाँ बहुत उपसर्ग सहे जिन, चातुरमास सातवें पुनि तिन।
ग्रालविका नगरी मै ग्राए, गोसालक उपसर्ग बढाए ॥५९२॥
पुनि तप समय साल बन थलमैं, कटपूनना व्यनरी गन तैं।

बहु उपसर्ग भए जिनवर कौ, राजग्रही पुनि गए नगर कौ ॥५६
बरप आठवॉ तहॉ बिताई, नवम अनारज थलमै छाई ।
तहा भए उपसर्ग अनेका, गाउ कुचूरन देग्यो एका ॥५६
तहँ तापस इक अति तप साधै, भारी जटा सीस पर बाधै ।
ताते जतु जूय[1] जो गिरै, तापस तिहि फिरि सिर पर धरै ॥५६
गोसालक ता तपसी बरज्यौ, सो तपसी ता ऊपर तरज्यौ[2] ।
तेजोलेस चलाई तापै, जरन लग्यो गोसालक जातै ॥५६
सहि न सके जिन परम दयाला, सीतोलेस तजी तिहि काला ।
गोसालक कौ मरत बचायौ, तब गोसाल चेत[3] चित पायो ॥५६
सिद्धारथसौ पूछि तबै उन, साधी सिद्धि तेज लेशा पुन ।
पुनि सावस्ती नगरी आई, दसई बरपा तहा बिताई ॥५६
पुनि पोढाल नगरमै जिनवर, काउसग्ग तप करि ठाढे घर ।
जिन वल प्रबल प्रसस प्रससा, इन्द्र सभामै भयो अभगा ॥५६
तहँ अभव्य सगम सामानिक, चही परिच्छा करन अचानक ।
तिहि थल आय एक निसिमै तिन, बीस किए उपसर्ग सहे जिन ॥६०
अहि गज सिह आदि तनु धरिकै, अमित उपाय किए तिन डरिकै ।
डग भर डिगे नही जिन स्वामी, भव भय जलनिधि पारगामी ॥६०
यो छ मासलौ सहि उपसर्गा, चूके नेक[4] नही तप वर्गा ।
तव तिहि इन्द्र आय अनि दूख्यौ, सो निज दोप मानि मन सूख्यौ ।६०
तीन रीत हित तिहि सुरराई, मेरु चूल कौ दियो पठाई ।
वृद्ध गुवाल तहा इक आयो, व्रत छमास पारनौ करायो ॥६०३
सुमसापुर पुनि आए जिनवर, चातुर्मास ग्यारहौ तह कर ।
चमरस्थान भयो ताही थल, कौसम्बीमै रहे महाबल ॥६०४

---

१ जुए, २ नाराज हुआ, ३ होश आना, ४ जरा भी,

तहा पोप बदि पडिवा के दिन, जिनवर लियो अभिग्रह सो सुन ।
उडद बाकला सूपकोन[१] मे, इक पग बाहर एक भौन[२] मे ॥६०५॥
राजकुमारी मूड मुडाएँ, पग बेडी औ नागै[३] पाएँ ।
दासी व्है रोवत मधि दिन मै, तीन उपास तासु पारन मै ॥६०६॥
जो ऐसैं हमकौ विहरावै, भाव भगति करि तौ मन भावै ।
ऐसैं कृत प्रतिज्ञ व्है जिनवर, पारन हित नित विचरै घर घर ॥६०७॥

चंदना कथा—

दैवजोग तै नृपति सथानिक, दधिवाहन नृप तिन कीनौ दिक[४] ।
तोरि तासुकी चपा नगरी, वद लूट कीनी सो सिगरी ॥६०८॥
धरी एक भट कर तिहि रानी, गही विकल व्है जात परानी ।
तिहि भट तिहि वद नजर निहार्यो, काटि जीभ तिन मरन सुधार्यो ६०९
बची तासु कब चदन बेटी, चदमुखी गुन रूप लपेटी ।
ताहि मूढ भट बेचन लाग्यो, धना सेठ तिहि लखि अनुराग्यो ॥६१०॥
मुह माग्यो ताकौ धन दैकै, बाल चदना मोल सुलैकै ।
आयो घरै लाय तिहि राखी, हितमित बानी तासौ भाखी ॥६११॥
मूल कुमूला सेठ सिठानी, अति कलहा तिहि लखि अनखानी[५] ।
कोपि तासुकौ मूड मुण्डायो, पग बेडी दै कैद करायो ॥६१२॥
तीन दिना लो भूखी प्यासी, कैदै माहि रही सो दासी ।
चौथे दिन निय अनत सिधाई, सेठ खवर दासी की पाई ॥६१३॥
काढि वद तै बाहिर आनी, आश्वासित करि कहि मृदुबानी ।
उडद बाकला प्रस्तुत पाए, सूप कौनमै ताहि दिवाए ॥६१४॥
आप लुहारहि बोलन धायो, वेडी काटन हित मगवायो ।

---

१ छाज, २ मकान के भीतर, ३ नगे पाव, ४ परेशान, ५ ईर्ष्या करना

ऐसें मैं जिनवर तहा आए, दौरि वदना दरसन पाए ॥६१५॥
अपनौ भाग्य विचारि सभागी, उडद जिने[1] विहरावन लागी।
तव जिन निज परतज्ञ विचारी, सब पाई जो चितमें धारी ॥६
देस काल ज्यौ के त्यो पाए, रुदन बिना सब भाव सुभाए।
यह चित धरि जिन फिरे विरागी, बाल दुखित व्है रोवन लागी।
तब फिर फिरि जिन पारन लीना, चदन तियहि कृतारथ कीना
बेडी पगन आप ही टूटी, वेनी[2] सिर पर लाबी छूटी ॥६१८॥
सकल देवगन लहि सुख हरखे, बारह कोटि सुनैया बरखे।
सो धन राजा लैंन विचारी, देव गिरा तहँ प्रगटी भारी ॥६१६
यह धन तेरे काम न आवै, जब चदन तिय दिच्छा पावै।
ताकौ होय महोच्छव जबही, यह धन खर्च होयगौ तबही ॥६२
मृगावती राजा की रानी, सो चदन की मासी जानी।
तिन चदनकौ लई बुलाई, अपने ढिग राखी सुख पाई ॥६२१॥
चातुरमास बारवें जिनवर, चपा नगरी पहु चि रहे कर।
मास तेरवें वन तप कीना, पूरव भव वैरी तिन चीना[3] ॥६२२॥
जाके कान माहि तिहि भवमें, तपत धात डारी ही दवमें।

त्रिपृष्ठ कथा—

ताकी कथा कहौं विस्तारी, वासुदेव भव जिन अरिहारी ॥६२३
एक समय नट नाटक सुनतें, आवन लगी नीद सुख गुनतें।
सेजपालसौं तब उन भाखी, इनकौं अब नाटक तै राखौ[4] ॥६
यो कहि सोए नरवर स्वामी, पै वरजे नहि उन धुनि[5]कामी।

---

१ महावीर प्रभु को, २ मस्तक के लम्बे बाल, ३ देखा ४ बन्द
५ गाना सुनने का शौकीन।

ाटक धुनि तैं प्रभु जब जागे, अज्ञा लोप लेखि रिस[1] पागे ॥६२५॥
ाके कान माहि तिहि काला, धातु औटि[2] डारी नरपाला ।
बकै तिन तन ग्वाला कौ धरि, बैर पाछिलौ सुमिर कोप करि ॥६२६॥
ीखी मेख काठकी गढिकै, जिन तप समय आय तिन वढिकै[3] ।
कान माहि गहि बल करि ठोकी, बैर बदलि सब ज्योकी त्योकी ॥६२७॥
तेन पापी ऐसो दुख दीनौ, तिन वेदन कीनौ तन छीनौ[4] ।
हतै जिनवर बिहरि सिधाए[5], वैद खरक नामा घर आए ॥६२८॥
तिन अति बल करि कीली काढी, जातै अधिक वेदना बाढी ।
काढत सबद कियो जिन भारी, गिरि दरके धर[6] धरकी[7] सारी ॥६२९॥
ह्या लौ सब उपसर्ग बदे जे, भए सपूरन ते जिनवर के ।

ज्ञातपुत्र महावीरका केवलज्ञान कल्यानक

ऐसैं बारह बरस पुराए[8], ता ऊपर छ मास वढाए ॥६३०॥
पन्द्रह दिन ता ऊपर बीते, तीन पहर हू तहाँ वितीते ।
दसमी सुदि वैसाख मास तिन, विजय मुहूरत सुव्रत नाम दिन ॥६३१॥
उत्तर फागुन नखत जोग ससि, गॉउ ज्रिभका तिहि बाहर बसि[9] ।
साल तरु तरै रिजु सरिता तट, आतम तत्व ज्ञान पूरन घट ॥६३२॥
द्वै उपास उत्तर तरु हेठे[10], चौविहार करि उकडू बैठे ।
तहँ अति उत्तम ज्ञानन माही, केवलज्ञान लह्यो तिहि ठाही ॥६३३॥
ता दिन तै अरिहन्त कहाए, सुर मुनि मनु मन जान सुहाए ।
भीत ओट की नहि कछु छानी, ऐसे जिनवर केवल ज्ञानी ॥६३४॥
जीव गतागत भव काया थित, मन वच काय करमकी परिमित ।
गुपत प्रगट सब जानन हारे, यो विचरै जिनवर भय डारे ॥६३५॥

---

१ गुस्सा २ गर्म करा कर ३ आगे आ कर ४ क्षीण ५ पहुँचे ६-७ धरती-तल
८ पूर्ण होना ९ ठहरना १० नीचे

समवसरन बर्णन

जबै भए जिन केवल ज्ञानी, सब जीवनकी छानी[1] जानी।
तब त्रिभक नगरी मै आए, सब देवनके भए बधाए ॥६३६॥
चौसठ इन्द्र चार विधि के सुर, महिमा लागे करन जान गुर[2]।
समवसरन जिनवर हित रच्यौ, एकौ सुख जातै नहीं बच्यौ ॥६३७
आदि जिनेसर हित हू ऐसै, सुरन रच्यौ हौ बरनौ तैसें।
बारह जोजन मिति ही ताकी, द्वै द्वै कोस ऊन की बाकी ॥६३८
बाईसौ जिन लौ या क्रम सौ, रच्यो समोसरन अनुपम सौ।
तेईसौ पारस जिन तारन, पाँच कोस कौ रचि तिन कारन ॥६३९
महावीर स्वामी जिन हेता,[3] चार कोस कौ कियो निकेता।
सुथल समान स्वच्छ अति नीकौ, परिधाकार[4] भावतौ जीकौ ॥६४०
पुनि वैमानिक सुर तहँ आए, तिहि थल पर गढ तीन बनाए।
प्रथम रजित[5] दूजौ कचन कौ, तीजौ जोत मई रतनन कौ ॥६४१
रजित दुर्ग मै मृगकुल[6] जितने, बैर भाव तजि बसै सु तितने।
दूजै कचन दुर्ग मझारी, सुबस बसै खग[7] कुल अविकारी ॥६४२
रतन मई तीजे गढ माही, सुर मुनि नर नारी तिहि ठाही।
बारह विधि के ते सुभ साखे, जाहि परखदा बारह भाखे।
आठ जात के सुर सुर नारी, चारि सघ मो मुनि विस्तारी ॥६४३
वैमानिको भुवनपति व्यतर, अरु जोतिकी चारि विधि सुर वर।
चारि जातिकी तिनकी नारी, साध माधवी अरु व्रतधारी ॥६४४
और श्राविका श्रावक मिलि सब, भई परखदा बारह तहँ तब।
ते सब रतन कोटके माही, अप अपने थल बसे तहाही ॥६४५
इक दिन साधु साधवी सुर तिय, सुर श्रावक श्रावकतिय दिस विय।

१ शुप्त २ पूरे गुण ३ लिए ४ गोलाकार ५ चादी ६ पशु गण ७ पक्षी

ोतकि ग्रहपति व्यतर तीजै, तिनकी तिय चौथी दिस धीजै ॥६४६॥
ो बारहौ परखदा सिगरी, मनिमै दुर्ग वसै गुन अगरी।
नन तीनौ गढ के सुभ साजा, चारि चारि चहु दिसि दर्वाजा ॥६४७॥
ोरनकी तोरन तहँ सोहै, सुर मुनि मनु गन के मन मोहै ।
रन गन नगकी जगमग जोती, खचे सदन मनि मानिक मोती ॥६४८॥
गाँति भाँति फूली फुलवारी, पचरँग रगनि चुरतिसी क्यारी।
सौ दिसा सौरभ भरि उमडी,चहु दिसि तै अलि[1]अवली[2]झुमडी[3] ६४९
ार सरवर तरवर घन माही, ठौर ठौर सुठि[4] स्वच्छ तहा ही ।
चहु दिसि जाके मनि सोपाना, फूले विमल कमल कुल नाना ॥६५०॥
भौर झौर जिनके रस राते, मधु मकरद छके मदमाते ।
राजहँस के बस अनेका, कुज पुज मजुल गन भेका ॥६५१॥
अच्छ प्रतच्छ स्वच्छ जल माही, मच्छ कच्छ परतच्छ दिखाही ।
निसि दिन दिनमनि गन दुति चहिकै,कोक सोक छाडत सुख लहिकै६५२।
यो अनेक जलचर जल पच्छी, वर वलाक सारस छवि अच्छी ।
सुख समाज कारज जग जेते, नृत्य नाट्य गध्रप गुन तेते ॥६५३॥
विवुध बधू अपसर किन्नर बर, मिलि नाचत गावत मधुरे सुर ।
तत्र वितत्र सुषिर घन आवज, वीन वेनु कठताल पखावज ॥६५४॥
इन्हैं आदि दै जेजे वाजे, ते अगिनत तहँ वाजि विराजे ।
और कहा लौ कविजन वरनै, होय न अमित गुनन की निरनै ॥६५५॥
सुरन रच्यौ ऐसो सुखदायक, थल अनूप जिन नायक नायक ।
जिन जिनके अतिसै चौतीसा, सो बरनौ अब विस्वावीसा ॥६५६॥
तन विन सेद[5] विमल विन छाया, सुरभि सुरूप सुलच्छन काया ।
छीर[6]वरन स्रोनित[7]रग जिनको, समचतुरस्र सस्थ[8]नन तिनको ।६५७॥

१ भौरे २ पंक्ति ३ भूम जाना ४ श्रेष्ठ ५ पसीना ६ दूध ७ खून ८ संस्थान

अमित वीर्य अति प्रिय हित बानी, वज्र नराच रिषभतन मानी।
छेम[१] सुभिच्छ आठसैं कोसा, गगनगामि जन मित्र अदोसा ॥६५८॥
चतुरानन सब जिय बध बारक, सब उपसर्ग रहित जिन तारक।
वर विद्वेश केश नख समता, भव्य सुजीवनके हित गमता ॥६५९॥
अनमिंख अरध मागधी भाखा, फूलि फले सब रितु तरु साखा।
दरपन सम भुवजन मुदकारी, बहै सुरभि अनुकूल वयारी[२] ॥६६०॥
भुव कटक रज काकर हीनी, सुरभि सलिल बरसन रस भीनी।
कनक कमल रचना जिन पगतर,[३]नमित सकल अनतरु बर फर भर६६१॥
अमल अकास और दस आसा, सुरगन आकारन गुन खासा।
धर्मचक्र आगें चलि राजै, अष्ट मगलिक सन्मुख छाजै ॥६६२॥
चौतीसौ अतिसय ये जिनके, कहौ अष्ट प्रतिहारज तिनके।
तरु अशोक त्रय छत्र विराजनि, भामडल सुर दुदुभि वाजनि ॥६६३॥
चँवर सिघासन दिव्य धीर धुनि, कुसुम वृष्टि सुर करत अचित पुनि।
येई आठ कहे प्रतिहारज, चारि अनत सुनौ सुख कारज ॥६६४॥
ज्ञान अनत अनते दरसन, बल अनत त्योही सुख बरसन।
ऐसे जिन जिनके है ये गुन, तिनकी महिमा बरनौ सो सुन ॥६६५॥
समोसरनकी मध्य मही मैं, जाकी महिमा प्रथम कही मैं।
कनक दड मनिखचित विराजै, अति ऊँचो सुदर छवि छाजै ॥६६६॥
तापर पचरग धुजा विराजै, इन्द्र धनुप जाकौ लखि लाजै।
तहँ अशोक सब सोक निवारै,तिहिं तर[४]रतन सिंहासन ढारै ॥६६७॥
छत्र तीन सिर ऊपर सौहै, वदन प्रभा भामडल मोहै ॥
ता थल महावीर जिन स्वामी, वैठे कनक सिघासन नामी ॥६६८॥
चार्यो दिस करि चार वदनतै, मेघगिरा गभीर सघनतैं।

१ कुशल २ हवा ३ पैरो तले ४ नीचे

-में बखान बखानै[1] जामें, सब समझै अपनी भाखामें ॥६६९॥
- यह धर्म देसना बानी, सुनी सबन पै किहूँ न मानी।
-ो जग माहिं अचभौ[2] भयौ, प्रथम अछेरन मे सो कह्यो ॥६७०॥
-जनवर सो थल हीन[3] विचार्यो, पापापुरी नाम तिहि धार्यो।
-ही राति तहँ ते जिन बिहरे, मध्यम पापसेन वन ठहरे ॥६७१॥
-ंभक नगरीमें तिहि काला, सोमल द्विज ऋतु[4] कियो बिसाला।
-यारह द्विज वेदज्ञ विचच्छन,जिनके शिष्य अनेक सुलच्छन ॥६७२॥
-न्द्रभूति आदिक तिहि नामा, विद्यासागर गुन गन धामा।
-ौरौ द्विज अनेक तहँ पागे,[5] अप अपने अधिकारन लागे ॥६७३॥
-ज्ञ करन लागे सब द्विजमिल, समोसरे जिनवर तब तिहि थल।
-अष्ट महाप्रतिहार तीन गढ, मिली परखदा बारह वर वढ ॥६७४॥
-ेवदुदुभी बाजन लागे, सुर गन सब आए गुन पागे ।
सुर आवत लखि द्विजन विचारी, इहा जज्ञ आवत अमुरारी ॥६७५॥
जब तह तै सुर अनत[6] सिधारे, द्विजवर कोप भरे अति भारे।
इन्द्रजालि यह कोऊ भारी, जिन वचे अनगन असुरारी ॥६७६॥
यातै याके तट अब जैये, विद्या वाद विवाद हूजैये ।
ऐसै कहि तहँ से द्विजनायक, सग पाँच सै शिष्य सुलायक ॥६७७॥
समोसरन थल पहुचे आई, जहा मिले सब सुर समुदाई।
जिनवर महिमा लखि भय पाए, लखि प्रभुता अदभुत रस छाए।६७८।
तबतै द्विज मन यहै विचारै, जौं जिन मन सदेह निवारै ।
तौ हम इनकी महिमा जानै, जिनवर महावीर करि मानै ॥६७९॥
ऐसै जब उन हियै विचारी, जिनवर मनकी जानी सारी ।

---

१ व्याख्यान २ आश्चर्य ३ अनधिकारी ४ यज्ञ ५ प्राप्त हुए ६ अनन्त।

पहिले स्वागत करि सतकारे, पुनि सन्मानि मान दे भारे ॥६८
कह्यो तुमारे उर अन्तर जो, सो हम सब जानै सुनिए सो।
तीन दकार चहत तुम भाख्यौ, अरथ तासुकौ पूछन राख्यौ ॥६८
सो हम तुमको देहिं बताई, दया दान दम तीनौं भाई।
इन्द्र भूति सुनि बिस्मित भयो, चकित होय अद्‌भुत रस छयो ॥६
जिन महिमा उन निहचै जानी, जैनी दिच्छा लै सनमानी।
औरौ दसौं विप्रजे रहे, शिष्यन सहित जैनपथ गहे ॥६८३॥
भए ग्यारहौ गनधर नामी, सब प्रतिबोधे जिनवर स्वामी।
एक मुहूरत माहिं पढे सब, द्वादश अँगी चौदह पूरब ॥६
तिनमैं इन्द्रभूति जो रहै, तिनहीको गौतम जिन कहैं।
सो गौतम स्वामी महिमा सुन, अद्‌भुत रूप उदार चार गुन ॥६
जावजीव जिन छट तप कीना, लब्ध अठाइस जिन आधीना।
आठ सिद्धि अरु चार ज्ञान जुत, इक केवल बिन सब गुन सयुत ॥
इक दिन जिनसौ पूछयो गोतम, क्योकरि केवल मिले महातम
वीतराग गौतम सौ 'भाख्यौ', तुम मोपै अति राग जु राख्यौ ॥६
ताहि तजौ तौ उपजै ज्ञाना, बिन त्यागे कछु परै न जाना
तब गौतम भाख्यौ बर जिनसौ, छुटै न राग तुमारौ मनसौं ॥
सुनि मन मानि कह्यो गौतम से, तुमहू अँत होय हौ हम से
ऐसै कहि कहि अति हित पोखे, गोतम स्वामी हू सतोखे ॥
चातुरमास जिते जहँ जिनवर, रहे सु अब भाखौ इकठे कर।
अस्थि गाँव पहिलै चौमासे, महावीर जिनवर तहँ थासे ॥६
चपा पृष्टि चप चित दीने, तहाँ तीन चौमासे कीने।
वानिजगाँव विसालै माही, बारह बरखा रहे तहाँ हीं ॥६
राजग्रही नगरी तब आए, चौदह चातुरमास बिताए।

मिथिलामें छह कीने स्वामी, दोय भद्रिकापुरी सुधामी ॥६६२॥
आलभिका मै एकै बरखा, सावस्ती इक वितई वरखा ।
एकै देश अनारज माही, चौमासा भरि रहे तहाँ ही ॥६६३॥
हस्तिपाल नृप राज सभा मैं, अंत एक बरखा वसि तामें ।

ज्ञातपुत्र महावीर मोक्ष कल्यानक

बयालीस बरसात बितीतैं, याकौ पाख सातवां वीतैं ॥६६४॥
तीस बरस ग्रह आश्रम गहिकैं, साढे वारह चारित लहिके ।
रहि छद्मस्त पने पुनि पायो, केवल वत्सर तीस वितायो ॥६६५॥
बरस बहत्तर पूरे भए, उत्सर्पनी काल वय भए ।
दुखम चौथे आरे के, कोडाकोड एक वारे के ॥६६६॥
सहस बयालिस बरस ऊन मैं, तीन बरस चौमास दूनमें ।
ता ऊपर पन्द्रह दिन रहतैं, पावानगरी माहिं निवहतैं ॥६६७॥
हस्तपाल नृप थल मँडही मैं, स्वाति नखत संगम ससिही में ।
कातिक कृष्ण कुहू निस रहतैं, चन्द्रनाम संवत्सर कहतैं ॥६६८॥
प्रीतवर्द्ध नामा जहँ मासा, पाख नदवर्द्धन कहि खासा ।
अग्निवेश दिन देवानदा, तिही निसाकौ नाम अमंदा ॥६६९॥
चौविहार द्वै वास सुधारे, सूर उदय तें प्रथम सकारे ।
पदमासन सुन आसन ठाने, पंचावन अध्यैन वखाने ॥७००॥
सुख विपाक मगल फल भाखै, पचावन अध्यैन सुनावें ।
दुखविपाक ताकौ फल कहते, वत्तिस ध्येनन पूछे वहते ॥७०१॥
तिहि छिन ताही काल वसंता, जिनवर महावीर भगवना ।
मुक्ति जानकौ सुसमय लह्यो, तब नहँ इन्द्र आन यों कह्यो ॥७०२॥
जै वयोहू करि यह छिन वीतै, घनी दोय यह काल बितीतैं ।
[illegible] दृष्ट भस्म गह छै है, सकल अनुभफल यन दल मैंहै ॥७०३॥

याकौ फल द्वै सहस बरस लौ, साधु साधवी श्राद्ध सतीकौ।
अधिक मान सनमान न होई, जब लौ बरस न बीतै सोई ॥७०४॥
सुनि बोले सुरपति सौ जिनबर, सुरगिर चालन सकौ धरनि पर।
पै यह समौ न टाल्यो जाई, जो करमन थिति बाँधि बनाई ॥७०५॥
यो कहि सब बँधन तजि दोने, आठौ करम तजे स्वाधीने।
सिद्धि बुद्धि जुत मुक्ति सिधारे, सकल भीम भव भय निरवारे ॥७०६॥
तब सुर चदनमय चय[1] कीना, अगिनकुमार अगिन रचि दीना।
वायुकुमार अगिन पर जारी, मेघकुमार सीचि चय डारी ॥७०७॥
उत्तर ससकार बर जिनकौ, ऐसै भयो भयो दुख जनकौ।
नव मल्ली नव लच्छ आदि दै, मिले अठारह नृप ता थल पै ॥७०८॥
तिन सब तिहि निरबान रैन दिन, पोसा करि बितयो सो दिन छिन।
ज्ञान जोत जिन सिद्ध सिधारे, फैलि गए जगमै तम भारे ॥७०९॥
तब सब लोगन दीवा वारे, नाम दिवारी[2] तबतै पारे।
पुनि भगवत मुक्ति तदनतर, सुच्छम जीव कुथुआ धर[3] पर ॥७१०॥
उपजे तिहि लखि प्राय साधु जन, त्यागि आप अन त्यागि दये तन।
शिष्यनसौ गुरु कहन लगे यौ, अब चारित दु साध्य भयौ त्यौ ॥७११॥
मुक्ति समै निज लहि जिन उत्तम, दिच्छा हित पठये हे गौतम।
तिन निरवान समै देवन तै, पूछ्यौ तुम किन जात सदनतै ॥७१२॥
देवन जिन निरवान सुनायो, सुनि गौतम अतिसै दुख पायो।
मोह महातम जानि महानम, जिन अनुराग तज्यौ जिन गौतम ॥७१...
तजत राग उपज्यौ पद केवल, वैठे जिनवर पाट महावल।
अव सब तप सख्या जिनवर की, वरनि वखानि कहौ वर नर की ॥७१...
द्वै छमास तप किए प्रवीने, तामै एक पाँच दिन हीने।

---

१ चिता २ दिवाली ३ पृथ्वी

चौमासी नव दोय तिमासी, ढाइ मास द्वै छह द्वै मासी ॥७१५॥
बारह डेढ मासि तप कीना, मास छपन अस्सी वसु हीना ।
बारह पाष[1] पाष व्रत धारा, द्वैसै उनतीस अठवारा[2] ॥७१६॥
प्रतिमा भद्र दोय दिन कीने, महाभद्र दिन चार प्रवीने ।
भद्र सर्वतो दिन दस कीने, इक दिन से जिहि दिच्छा लीने ॥७१७॥
इक दिन ऊन[3] तीनसौ साढे, पारन दिन सब गिनती वाढे ।
औरौ वहुत तपस्या दिन भल, साढे वारह वरस भए मिल ॥७१८॥
ये सब दिन छद्मस्त[4] बिताए, तीस बरस केवल पद पाए ।
तीस बरस गृह आश्रम कीना, आयु बहत्तर सब भरि लीना ॥७१९॥
अब सब महावीर परिवारा, कही साध दस चारि हजारा ।
बत्तिस सहस साधवी जानौ, अब जिन जन श्रावक परमानौ ॥७२०॥
इक लख उनसठ सहस सुनाऊ, अब सब जे श्राविका गिनाऊ ।
लाख तीन अरु सहस अठारा, यह सब जिन जन घन परिवारा ॥७२१॥
तेरह सै जह अवधि ज्ञान धर, केवलज्ञानि सातसै वरनर ।
त्रयसठ चौदह पूरबज्ञानी, वयक्रीय सै सात बखानी ॥७२२॥
ऐसे विमल बुद्धि सौ पाचा, मन मनसा समझै जे साचा ।
जे काहू तै कबहु न हारै, ऐसे वर वादी सैचारै ॥७२३॥
जिन जन जिनतै दिच्छा लही, मुकत गए मु सातसै सही ।
चौदह सै साध्वी जिन हाथा, चारित लैकै भई सनाथा ॥७२४॥
अनउत्तरिय आठ सै भए, जिन परिवार कहे मुन छए ।
भूमि अनकृत दुइ प्रकारा, कहियत जिनवर कै अवतारा ॥७२५॥
इक युगतकृत भूमि कहावै, दूजी परियायात बनावै ।
मुकत अनन्तर तीन पाटसो, चल्यो मुकत पथ कहि युगात सो ॥७२६॥

---

१ पाक्षिक उपवास २ आठ ३ कम ४ केवलज्ञान होने से पूर्व की अवस्था,

चारि वरस केवल ज्ञानंतर, चल्यो मुकत मारग तदनन्तर ।
सुपरियातकृत भूमि कहीजै, दुहू भूमि जिनवरहि पतीजै ।
तदनन्तर नौसै अस्सी सन, भयो बडौ दुरभिच्छ भयावन ॥७२९
सत्र विच्छेद भयो लखि जिन जन, लिखन लगे पुस्तक तब ते धन
नवसैं नवति बरस त्रय बीतैं, कई कहैं तब लिखे सप्रीतैं ॥७२१
इक वाचन वलभी नगरी है, देवडगन[1] छम[2] समन करी है ।
दूजी वाचना मथुरा नगरो, करो कदिलाचारज सिगरी ॥७२
जिनवानी गुरु तैं निरधार, पूर्ण कियो जिनबर अधिकार ।
सुनै पढै चितै जे भवि जन, सकल अभीप्सित पाव तिन मन ॥७

श्रीज्ञातपुत्र वर्धमान महावीर भगवान् का अधिकार समाप्त ॥

---

१. ज्ञात २ युगांतकृतभूमि ३ पर्यायांतकृत भूमि ४ देवर्द्धिक गणी ५. क्षम

अथ पारसनाथ अधिकार

अथ श्री पारसनाथ के, पाँचौ जे कल्यान ।
च्यवन जनम चारित्र अरु, परम ज्ञान निरवान ॥७३१॥
जब जब इन पाचौनको, भवमें भयो सजोग ।
तब तब नखत बिसाख ही, माहि रह्यो ससि जोग ॥७३२॥
पारस पूरब दस जनम, जे जे भए निदान ।
तिन तिन को बरनन करो, कछु संछेप[1] बखान ॥७३३॥

पूर्व भव—

पोतनपुर अरबिन्द नृप, बिप्र पुरोहित तासु ।
कमठ और मरुभूत द्वै, पुत्र पुरोहित जासु ॥७३४॥
मरु सुदरी बसुंधरा, नाम बाम छवि जान ।
तासौ कमठ कुपूतने, करी कुरीत कुचाल ॥७३५॥
सो सुनि मरु मरु भूमि लौ, भयो प्रीति रस हीन ।
करी कठिनता उन भयो, मन करि कमठ मलीन ॥७३६॥
सकुचि सोचि ससार तजि, तिन तप किनो जाय ।
सहज सरल मन मरु गयो, तिहि तट[2] दोष छिमाय ॥७३७॥
पै तिन तापस कमठने, मार्यो मरु करि क्रोध ।
यहै बिप्र सुत दुहनको, भयो प्रथम भव बोध ॥७३८॥
सो मरु मरि हाथी भयो, कमठ भयो मरि सर्प ।
वैर सुमिर ता दुरद[3] को, डस्यो सर्प करि दर्प ॥७३९॥

---

१ सक्षेप, २ समीप ३ हाथी ।

यह दूजो भव फेर गज, मरि सुर भयो सुजान ।
कमठ जीव अहि मरि भयो, नरक निवासि निदान ॥७४०॥
यह तीजौ चौथो भयो, मरु विद्याधर रूप ।
निकसि नरकतै कमठ फिरि, भयो भुजगम भूप ॥७४१॥
डसि विद्याधरकौ बहुर, नरक निबास्यो सोय ।
विद्याधर मरि बारवै, सुरपुरको सुर होय ॥७४२॥
भयो पाचवौ भव यहै, पुनि मरु मरि नृप होय ।
बज्रनाभि नामा लियो, चारित तिन मल धोय ॥७४३॥
भयो भील भव कमठ तिन, नृपहि मारि मरि भील ।
नरक गयो भव सातवै, नृप सुर भयो सुसील ॥७४४॥
चक्रवर्त मरु जीव पुनि, भयो भये भव आठ ।
कमठ जीव ह्वै सघ पुनि, हन्यो ताहि सुनि पाठ ॥७४५॥
पुनि मरु सुर व्है कमठ लहि, नरक नवै भव फेर ।
मरु जिय पारसनाथ व्है, प्रगट्यो दसवै हेर ॥७४६॥

पारसनाथ प्रभुका च्यवन कल्याणक

जबुदीप थल भरतमै, पुरी बनारस धाम ।
अस्वसेन नृप राज घर, रानी बामा नाम ॥३४७॥
तासु कूषमै चैत बदि, चौथ भए अधरात ।
दसम देवता लोक तै, मरु जिय चवै विख्यात ॥७४८॥
नृप तिय बामा तिहि समय, कछु सोवत कछु जाग ।
नखत विसाखै जोग ससि, सुपन चोदहों लाग ॥७४९॥
सुर सवधी आउ नजि, तजि अहार विवहार ।
गर्भरूप त्रय ज्ञान जुत, भयो गर्भ आधार ॥७५०॥
च्यवन समय जान्यो नही, चवि जान्यो जिन जान ।

वामा सो सुभ सुपन फल, कह्यो सुजान न आन ॥७५१॥
वाम सुपन फल सुनि समुझि, मोदानद वढाय ।
करन लगी निज गर्भकी, रच्छा अति सुख पाय ॥७५२॥
गर्भवास के मास जब, गए सवा नव बीत ।
पूस[1] असित[2] तिथि दसमि को, नखत विसाख प्रतीत ॥७५३॥

पारसनाथ प्रभुका जन्म कल्यानक

निस निसीथ बीते विदिन, श्रीजिन पारसनाथ ।
प्रगटि जन्म लै मात की, कीनी कूष सनाथ ॥७५४॥
छप्पन दिसा कुमारि अरु, चौसठ इन्द्रन आय ।
महावीर जिन लौ कियौ, जनम महोच्छौ चाय ॥७५५॥
अश्वसेन नृप हू कियो, मगल मोद वढाय ।
जैसे सिद्धारथ नृपति, कियो महोच्छव चाय ॥७५६॥
गुन वय बिद्या विनय वर, रूप सील सुघराय ।
जुत श्री पारसनाथ जिन, प्रगट भए सुभ भाय ॥७५७॥
तीन ज्ञान करि सहित जिन, श्रुति मति अवधि अधार ।
हरित वरन नव हाथ वपु, भुक्ति मुक्ति दातार ॥७५८॥
सिसु पौगड कुमार वय, क्रम क्रम भई वितीत ।
तव तरुनाई तरनि की, भई उदय परतीत ॥७५९॥
नगर कुशस्थ प्रसेन जित, नृपति सुता सुभ जासु ।
प्रभावती इहि नाम जिन, पारस व्याहो तासु ॥७६०॥
दम्पति सुख सम्पति भरे, करि गृहस्थ विवहार ।
विषय भोग सुख भोगि सव, चारित पर मन धार ॥७६१॥

१-२ पोह वदी ।

इक तापस पचाग्नि तप, साधत लखि जिन जान।
ताहिं कह्यो रे मूढ ! क्यो, साधत तप अज्ञान ॥७६२॥
यौ कहि गहि ता अगिन ते, जरत निकासे दोय।
सर्प सर्पिनी अधजरै, मरन लगे लखि सोय ॥७६३॥
आदि पाच नौकार के, पाँचौ वरन सहेत।
अ सि आ उ सा बिचारि चित, तुरत उतायल हेत ॥७६४॥
दीने तिन्हे सुनाय ते, वोधि देव पद पाय।
धरन इन्द्र अहि मरि भयो, पदमावति तिय चाय ॥७६५॥
सो तापस हो कमठ जिय, लज्जित व्है सकुचाय।
मेघमालि सुर मरि भयो, धारि बैर हिय भाय ॥७६६॥
दिच्छा समय चितावने, नव लोकातक देव।
आय जिनेसर की करी, जय नन्दा कहि सेव ॥७६७॥

पारसनाथ दीक्षा कल्यानक

जिनवर ससार तजि, दीने बरसी दान।
धन पूरन पुहमी करी, अर्थी रह्यो न आन[1] ॥७६८॥
पुनि एकादस पूस बदि, दुपहर दिन तजि राग।
दिव्य पालकी चढि पहरि, भूषन बसन सभाग ॥७६९॥
चौसठ इन्द्रन आदि दै, विबुध बिबिध की भीर।
नर नारी सब नगरके, सग चले धरि धीर ॥७७०॥
पुरी वनारस वीच व्है, निकसि विपिन घन पाय।
उतरि असोक सुतरु तरे, दीनो सौक मिटाय ॥७७१॥
चौविहार उपवास द्वै, सकल सिंगार उतार।
पाय विसाखा जोग ससि, तजि सब सुख ससार ॥७७२॥

---

१. कोई भी।

सहित प्रहित बर नीनिसै, उत्तम राज कुमार ।
देवदूष पट युत लियो, चारित पद निरधार ॥७७३॥
रहे फेर छदमस्थ दिन, रैन असी अरु तीन ।
देव मनुस पसु कृत सहे, अति उपसर्ग नवीन ॥७७४॥
दिच्छा कै दिन दूसरै, कियो बिहार आहार ।
पच द्रव्य वर्षा करी, देवन महिमा भार ॥७७५॥
पुनि जिन देस कलिगमे, काउमग्ग तप धार ।
रहे गुहा गिर की गहै, आतम नत्व विचार ॥७७६॥
मेरतुग नामा तिहा, एक महा गजराज ।
जिन दरसन लहि ज्ञातिसर, पायो समकित साज ॥७७७॥
लै अनसन सो सुर भयो, पुनि विदेह अवतार ।
पामी नर भव जायगौ, मुकति पुरी मझार ॥७७८॥
पुनि जिनवर तहतै कियो, दच्छन देस विहार ।
तापस थल वट वृक्ष तर, साझ काउसग धार ॥७७९॥
आय मेघमाली तहा, कमठ जीव अवतार ।
करन लग्यो उपसर्ग अति, पूरब वैर विचार ॥७८०॥
अहि बिच्छी बैताल गज, सिघरूप धरि दुष्ट ।
बहुविधि जिन भगवत सो, करी दुष्टता पुष्ट ॥७८१॥
तौऊ[1] जिन दृढ ध्यानकी, छुटी न सहज समाधि ।
सो लखि पुनि कोप्यो अधिक, बाधन लग्यो असाध ॥७८२॥
प्रलय मेघ वपु धरि लग्यो, वरसन मूसल धार ।
भयो घनो घन घिरि घुमरि, सूची वेध अँधार ॥७८३॥
करकन[2] लागी बीजुली, तरकन[3] लागी भूम ।

---

१ तब भी, २ कड़कना, ३ फटना,

धरकन[1] लागे सकल जिय, परी-भूमि नभ धूम ॥७८४॥
नदी कूप सर बावरी, भरि उमड्यो जल भार ।
चरन जानु कटि उदर उर, कठ चढ्यो बढि बार ॥७८५॥
तऊ अचल आतम सुरस, मगन महातम भूप ।
तजी न नेकौ लय लगन, जिनवर अभय सरूप ॥७८६॥
तब धरैन्द्र पद्मावती, अवधिज्ञान करि जान ।
आय तहा जिनराज को, कध चढाय निदान ॥७८७॥
सहस फणनको छत्र सिर, धरि जिनकै दिन तीन ।
रहिं ऐसै निदस्यो[2] बहुर, मेघमालि बलहीन ॥७८८॥
सो तव हारि बिचारि चित, परि[3] पारसके पाय ।
बिनय सुनाय बचाय जिय, लीने दोस खिमाय ॥७८९॥
ता दिन ते ता भूमि पर, नगरी एक सुधाम ।
सुवस वसी सोभा लसी, जिहि अहिछत्रा नाम ॥७९०॥
पुनि जिन गुपत सुतीन अरु, सुमति पाच लै साथ ।
साध रूप विचरन लगे, जिन जन करे सनाथ ॥७९१॥
छदमस्थाऽवस्था रही, असी तीन दिन रैन ।
चौरासीवी रातमैं, पायो आतम चैन ॥७९२॥

पारसनाथ ज्ञान कल्याणक

चैत्र कृष्ण तिथि चौथ ससि, नखत विसाखा पाय ।
लहि अपराण्हर[4] धाह तरु, तरे समाधि लगाय ॥७९३॥
पायो केवलज्ञान पद, चौदह राज प्रतच्छ ।
इन जिनके चौथे भए, गनधर आठ सुगच्छ ॥७९४॥

---

१ धडकना २ धमकाना, ३ भुकना, ४ एक पहर दिन शेष

सुभ अरु घोष बसिष्ठ पुनि, ब्रह्मचारि अरु सोम ।
बीरभद्र श्रीधर सुजस, गनधर आठ अजोम ॥७९५॥
साध सम्पदा शुभ तहा, सोलह सहस वखान ।
सहस आठ जुत तीस अब, सुभग साधवी मान ॥७९६॥
एक लाख चौसठ सहस, जिन जन श्रावक जान ।
तीन लाख सुभ श्राविका, सहस अठावन मान ॥७९७॥
पचासत सत सात युत, चौदह पूरब जान ।
अवधिज्ञान ज्ञानी गने, चौदह सै सुज्ञान ॥७९८॥
केवलज्ञानी सहस इक, छसै वइक्रीवान ।
साध मुक्तगामी सहस, दूनी साध्वी जान ॥७९९॥
बिपुल सुमति धर आठसै, वादी छसै सुजान ।
सर्वारथ सिधि जे गए, वारहसै ते मान ॥८००॥
दुहु विधि भूमी अन्तकृत, इक जुगाँतकृत होय ।
दूजी है परयातकृत, प्रथम कही सब सोय ॥८०१॥
तीस बरस गृहवास दिन, न्यासी निस छदमस्थ ।
कछु कम सत्तर बरस कुल, केवल ज्ञान समस्त ॥८०२॥
सरब आयु सौ बरस की, पूरन करि जिन जान ।
लह्यो परमपद मोखको, सो अव कहीं निदान ॥८०३॥

पारसनाथ मोक्ष कल्यानक

तिथि सावन सुदि अष्टमी, निसि निसीथ जिन नाथ ।
परवत सिखर समेत पर, तेइस साधन साथ ॥८०४॥
नखत विसाखा जोग ससि, चौविहार अन साथ ।
काउसग्ग तप लय लगे, पायो मुक्ति अबाध ॥८०५॥

इति पारसनाथ अधिकार समाप्त

अथ अरिष्टनेमिनाथ अधिकार

अब बरनौं श्रीनेम के, पाचौ बर कल्याण ।
च्यवन जनम चारित्र अरु, परमज्ञान निरबान ।।८०६।।
इन पाँचौं कल्याण को, जब जब भयो सजोग ।
तब तब चित्रा नखत ही, मांहि भयो ससि जोग ।।८०७।।

अथ च्यवन कल्यानक

कातिक बदि बारस सुतिथ, नेमनाथ अरिहत ।
सुर सबधी आयु थित, तजि सो जिय जयवत ।।८०८।।
समुद विजय यादव नृपति, सोरीपुर के माँह ।
सिवा देवि ता नृपति की, रानी अति छबि छाँह ।।८०९।।
निसि निसीथ में चवि कियो, गर्भ मांहि तिन वास ।
क्रम क्रम करि बीते जवै, गर्भ सवा नव मास ।।८१०।।
सुपनादिक जैसे प्रथम, जिन जननी जे पाय ।
वरनि वखाने ते सकल, त्योही भए सहाय ।।८११।।

श्री नेमनाथ जन्म कल्यानक

सावन सुदि तिथि पचमी, सिवा देवि के कूप ।
जिन जनमे श्रीनेम प्रभु, सु दर सगुन अरूप ।।८१२।।
छप्पन दिसा कुमारि अरु, चौंसठ इन्द्रन आय ।
त्यो ही मगल मोदमय, कियो महोच्छौं चाय ।।८१३।।
समुद त्रिजय जयवत हू, मोद उछाह[1] वढ़ाय ।

---

१ उत्साह ।

सिद्धारथ नृप लो कियो, जनम महोच्छौ चाय ॥८१४॥
एक समय जिन जोर[1] की, महिमा सुरपति गेह ।
होत सुनी सुर एक तिन, करी परिच्छा एह ॥८१५॥
लखि जिन पौढे पालने, आय अंक[2] भरि तासु ।
बहुतक जोजन वह उड्यो, ऊचौ चढ्यो अकासु ॥८१६॥
जानि जान जिन ज्ञानपथ, बल करि मारी मुष्ट ।
कइ जोजन धर मे धस्यो, फस्यो देव सो दुष्ट ॥८१७॥
सुरपति आय छुडाय तिहि, पायन पारि[3] खिमाय ।
तौ अपने सुरपुर गयो, भयौ मोद मै जाय ॥८१८॥
समुदविजय जिनके पिता, सोरीपुर के राय ।
उग्रसेन मथुरा नृपति, तिनके गोती भाय ॥८१९॥
तिन इक दिन इक तापसी, न्योत्यो पारन हेत ।
न्योति भूलि बैरी कियो, सो मरि नृप तिय[4] खेत[5] ॥८२०॥
गर्भ वास बसि मातको, प्रकृति दुष्ट करि दीन ।
गर्भ जनम लहि मात पित, मन अति भये मलीन ॥८२१॥
दूषित सुतहि सँदूष[6] में, मूदि[7] मुदरी[8] हाथ ।
दै यमुनाजल बोरि[9] तिहि, दीनो मथुरा नाथ ॥८२२॥
सो वहि[10] सोरी नगर में, पाई बनिक सुभद्र ।
खोलि देखि सुदर सुअन, मानि आपको छुद्र ॥८२३॥
सो सौप्यो वसुदेवको, उग्रसेन सुत कस ।
समुद्र विजय नृपको अनुज, सो वसुदेव प्रसस ॥८२४॥
राजग्रही नगरी तहां, तव तिहि काल अनूप ।

---

१ बल, २ गोद, ३ डालना, ४ रानी की, ५ कुक्षि ६ पेटी, ७ बंद करना मुंदी, ९ डुबा देना या बहा देना, १० बहती गई ।

जरासंध यादौ प्रबल, ता नगरी को भूप ॥८२५॥
सो यादवपति प्रति सहित, वासुदेव पद पाय ।
भयो सुप्रबल प्रताप जुत, सब यादव को राय ॥८२६॥
जीवजसा ताकी सुता, बुधि गुन रूप प्रसंस ।
ब्याहि दई ताकौ पिता, उग्रसेन सुत कंस ॥८२७॥
ब्याहि ताहि तिन पाय बल, करि निज बापहि[1] बंद[2] ।
मथुरापति पितु राज पर, बैठि भयो स्वच्छंद ॥८२८॥
तिन देवक नृप की सुता, नाम देवकी जासु ।
ब्याहि दई वसुदेवको, अति हित चित करि तासु ॥८२९॥
लघु भ्राता इक कंस को, अइमत्तौ[3] इहि नाम ।
तजि गृहबास अवास सुख, भयो साध अभिराम ॥८३०॥
तिन इक दिन निज ज्ञान करि, होनहार की जान ।
जीवजसा भाभी निकट, कही बात यह आन ॥८३१॥
गर्भ देवकी बहिन को, होय सातवौ जोय ।
सो तेरे भरतार को, मारन हारो होय ॥८३२॥
यह सुनि उन पति पास चलि, विथा सुनाई जाय ।
सुनि सचिंत व्है कंस तब, लै वसुदेव बुलाय ॥८३३॥
बंचि[4] वचन कहि कपट के, वाचा लै दै साखि ।
सात गरभ तुम आपने, देहु हमैं यह भाखि ॥८३४॥
सत्य संधि वसुदेव तहँ, वचन बंध व्है नीठ[5] ।
दए गर्भ सातौं नही, दई वचन को पीठ ॥८३५॥
जब जब प्रसवी देवकी, तब तब लै सो गर्भ ।
सिला पटकि मारे सकल, एक भाँति छल अर्भ ॥८३६॥

---

१ पिता को, २ कैद करना ३ अतिमुक्त, ४ ठगना, ५ कठिन ।

भयो सातव गर्भ मे, जब श्रीकृष्ण निवास ।
सुपन सात लखि देवकी, पूरी आसा थास ॥८३७॥
सिंह सूर ससि अगिन गज, धुज[1] विमान विख्यात ।
वासुदेव माता लखत, एई सुपने सात ॥८३८॥
गर्भकाल पूरन भयो, भादौ वदि वुधवार ।
तिथि आठै अधरात को, लियो कृष्ण अवतार ॥८३९॥
सोइ गए सब पाहरू,[2] खुलि गए सकल किवार ।
कृष्ण हि लइ बसुदेव तब, उतरे यमुना पार ॥८४०॥
नन्द गोप घर तासु की, घरनि[3] जसोदा नाम ।
जनमी पुत्री तिहि समैं, ताके अति अभिराम ॥८४१॥
पहुँच तहाँ बसुदेव धरि[4], सुत लै सुता उठाय ।
फिरे उतरि इह बार पुनि, निज घर पहुचे आय ॥८४२॥
भोर भए पहरू[5] जगे, नृपति सुनाई जाय ।
नृप सुनि त्योंही सो सुना, लीनी तुरत मगाय ॥८४३॥
देखि सुता ताके तबै, छेदे नाक रु कान ।
भयो कस मुदवत[6] अति, व्है निर्हिचित[7] निदान ॥८४४॥
वासुदेव श्रीकृष्ण अब, नन्द सदनके माँझ ।
नवससि लौं नित नित निपट, बढन लगे दिन साँझ ॥८४५॥
बाल चरित अदभुत करत, हरत मात पित चित्त ।
लखि दृग हियो सिरात अति, वारत तन मन वित्त ॥८४६॥
इक दिन इक भविसज्ञ को, पूछ्यो कस नुचाहि ।
कहि को मेरो शत्रु है, जाते मुहि भय आहि ॥८४७॥
उन भाखी खर मेख अरु, केसी वृपभ अरिष्ट ।

१ ध्वजा २ पहरेदार ३ गृहिणी ४ [illegible] ५ पहरेदार ६ [illegible] ७ [illegible]

जो इन सबको मारिहै, मारे तोहि सपष्ट ॥८४८॥
सुनि नृप त्योही तुरत तेइ, इक इक दए पठाय।
ते सब मारे सहज ही, बाल चरित्त यदुराय ॥८४९॥
जानि कस जिज्ञसा[1] बढि, भयो सोच मय सोय।
अनहोनी होनी नही, होनी होय सो होय ॥८५०॥
बहन सुभद्रा कसकी, ताको रच्यो विवाह।
दिस दिस तै आए नृपति, जानि स्वयबर चाह ॥८५१॥
सुनि मुदमय श्रीकृष्ण हू, मथुरा चले उताल[2]।
जद्यपि बलि[3] बरजे[4] विपुल, रहे नाहि नदलाल ॥८५२॥
चलत बाट काली उरग, नाथ्यो पुनि गज मारि।
मुष्टिकादि चानूर सब, मारे मल्ल पछारि ॥८५३॥
पुनि गहि केस पछारिकै, मार्यो भूपति कस।
सतभामा ताकी सुता, ब्याही रूप प्रसस ॥८५४॥
बरस अधिक तिन बाम बय, सोरह बरसी श्याम।
तदपि रूप गुनवत बर, दम्पति अति अभिराम ॥८५५॥
सब यादव मिलि आय तहँ, पाट[5] बिठाए स्याम।
ह्वै[6] सब सेवा धर्म पर, अनुचर भए सकाम ॥८५६॥
जीवजसा तिय कसकी, तब अति दुखके भार।
जरासंध पितु गेह चलि, गई सहित परिवार ॥८५७॥
ताहि देखि पितु दुखित व्है, चढन चह्यो करि क्रोध।
कालकुमारन आय तहँ, नृपहि सुनायो बोध ॥८५८॥
छतै[6] सेवकन उचित नहि, कष्ट करे जो भूप।
मारि शत्रु आवै तुरत, तुव आज्ञा अनुरूप ॥८५९॥

---

१ जिज्ञासा २ शीघ्र ३ बलभद्र ४ रोकना ५ सिंहासन ६ होते हुए

यो कहि आयसु पाय ते, सिगरे राजकुमार ।
चढे युद्ध हित राहमे, यदुकुल देवि निहार ॥८६०॥
स्राप[1] पाय ता देविको, भए सकल जरि[2] छार ।
मथुरा तजि जदु कुल गए, सोरठ देश मझार ॥८६१॥
तहाँ बसाई द्वारिका, धनद करी धनवृष्ट ।
कनक रचित मनि गन मई, भई सुपुरी वरिष्ट ॥८६२॥
तहाँ बसे परिवार लै, श्रीजदुनायक वीर ।
सहसंपति सन्तत सतत, बाढी[3] जादव भीर[4] ॥८६३॥
रतन कबलनको तहाँ, व्यापारी इक आय ।
बेच कछुक कछु लैगयो, राजग्रही मैं लाय ॥८६४॥
बेचन लाग्यो लखि लयो, जीवजसा ललचाय ।
मोल पूछि विस्मित भई, सवालाख सुनि भाय ॥८६५॥
उन जो बेचै द्वारिका, सो सब कही सुनाय ।
सुनि पूरब दुख जगि उठ्यो, पितुसो कह्यो दुखाय[5] ॥८६६॥
सो पितु सब भट कटक लै, गज रथ तुरग पदात[6] ।
अमित फौजकी मौज सो, कोपि चढ्यो विख्यात ॥८६७॥
उनहू ते श्रीकृष्ण सुनि, जदुकुल कटक समेत ।
चढि पहु चे मिलि परस्पर, रच्यो मच्यो नर खेत ॥८६८॥
सैन रेनु व्है एक तहँ, भुव उडि नभ करि वास ।
आप छोनि छह रहि गई, कोने आठ अकास ॥८६९॥
किधौ सैन खुर रेनु उडि, भई द्योसको रैन ।
कृष्णचन्द मुखचन्द तहँ, मनि गन उडगन ऐन ॥८७०॥
किधौ धूरि धूघर घने, घन घुमडे चहु वोर ।

---

१ शाप २ भस्म ३ बढना ४ समुदाय ५ [illegible] ६ पैदल सेना

असि लरजन तरजन तडित, गज गरजन घन घोर ॥८७१॥
सरस परसपर बानबर , बरसन अमित अपार ।
सो अखड जलधारकी, झरी भरी भय भार ॥८७२॥
स्रोनित सरिता कढि[१] बडी, सर भरि उमडि अपार ।
रुड मुड मडित रुधिर, जल जलचर अनुहार ॥८७३॥
प्रबल बली बलि बीर लखि, जरासधि करि क्रोध ।
जरा नाम बिद्या प्रवल, प्रेरित करी प्रबोध ॥८७४॥
सो विद्या कारन भई, रुधिर वमन कै हेत ।
कृष्ण अनीक अनेक जन, जादव भए अचेत ॥८७५॥
नेम निदेशित कृष्ण तब, अष्टम तप आराधि ।
देव कहै नेमी न्हवन, तिहि प्रछाल जल साधि ॥८७६॥
सेचन करि सेना सकल, लीनी मरत जिवाय ।
अति उछाह करि कृष्ण तब, दोनौ सख बजाय ॥८७७॥
तहा सखके शब्द सैं, भई समाधी सोय ।
फेर परस्पर युद्ध हित, सजि सन्मुख व्है दोय ॥८७८॥
चक्र चलायो जोर करि, जरा सधि हरि ओर ।
कृष्ण बचाय सुताहि फिरि, अरि मार्यो वर जोर ॥८७९॥
चारि कोटि जदु नृप सहस, वत्तिस महल समेत ।
महाराज श्रीकृष्ण यो, बसे द्वारिका खेत ॥८८०

नेमिबलवर्णन—

एक समय जिन अतुल वल, चरचा सुरपति लोक ।
चली भली सुर एक सुनि, दई परिच्छा झोक[२] ॥८८१॥
वास्यो[३] गिर गिरनार ढिग, मुग्धागपुर एक ।

---

१ निकली २ आरम्भ ३ वास करना

करन लग्यौ सो बसि तहाँ, अति उतपात अनेक ॥८८२॥
द्वारवती के द्वार तै, निकसि बाहरै जोय।
जाय ताहि राखैं पकरि, जकरि देवता सोय ॥८८३॥
एक समैं बलभद्र अरु, कृष्णहिं राखे घेर।
मच्यौ कुलाहल नगर मैं, बगर बगर भय ढेर ॥८८४॥
तब रुकमिनी श्रीनेम सो, भाख्यो सन्मुख हेर[1]।
कहा भयो कैसो सुन्यो, कौन करत यह फेर[2] ॥८८५॥
तुमसे पुरुख अनत बल, छतै उपद्रव एह।
होय बडो अचरज यहै, छुटे न मन सदेह ॥८८६॥
सुनि श्रीजिन रथ चढि चले, पहुच नगर गढ तोरि[3]।
जुटे जुद्ध ता देवके, सनमुख आयुध जोरि[4] ॥८८७॥
अनिल अनल जल प्रबल सर, दुहू ओर तैं छोरि[5]।
अत मोह[6] सर मारिकैं, सुर मोह्यो वर[7] जोरि ॥८८८॥
सुरपति आय खिमाय तब, पाय पारि सो देव।
विदा भयो सो विबुध[8] वर, बिविध भाति कर सेव ॥८८९।
तब श्रीजिन भगवत बर, नेमनाथ अरिहत।
भए तीनसौ बरस के, क्रम क्रम वढि भगवत ॥८९०॥
तऊ न तिनके जीय[9] मै, इच्छा ब्याहन काज।
मात पिता करि सोच तब, अति विनये[10] जिनराज ॥८९१॥
सतभामा अरु रुकमनी, तिनहू निपट निहोरि।
कसबहिन राजीमती, तासु सगाई जोरि ॥८९२॥
सावन सुदि छठ सुभ लगन, मंगलमैं ठहराय।

---

१ रोककर २ खरावी ३ तोडकर ४ तानकर ५ छोडना ६ मोहन बाण ७ लाचार होकर ८ देवना ९ मन १० निवेदन

चढी जान जादौं मई, मथुरा पहुची जाय ॥८९३॥
गाजन बाजन साज सब, फूल बाग बर ख्याल ।
कल कौतुक नट नाट्य भट, चटकीले छबि जाल ॥८९४॥
तास बास बासे अतर, भूषन मनिगन भार ।
सजन समूहन संग लें, उग्रसेन के बार ॥८९५॥
तहँ घेरे पशु हेरिकै, सारथि पूछयो नेम ।
बोल्यो वह तुम व्याह के, गौरव हित यह नेम ॥८९६॥
गौरव हित पशु पुज[1] कौ, घात तहाँ जिन हेर ।
तिनकी हिंसा सुमिरि[2] जिय, दया आनि मति फेर ॥८९७॥
मनि भूषन पसुपाल कौ, दै सब पसुहि छुडाय ।
तोरन ही तै फिर फिरे, सब आरम्भ मिटाय ॥८९८॥
मोद मई राजीमती, गोख चढी यह देष ।
खाय पछार मही गिरी, लहि मुरछात विसेष ॥८९९॥
अलिन आय करि बीजना, छिरक गुलाव जगाय ।
करि सचेत झँपकेत की, दई आगि भडकाय ॥९००॥
विरह विथा[3] बाढी विपुल, वितन बान विष वाय ।
रोम रोम सब रमि गई, रोय रोय विललाय ॥९०१॥
नीर हीन जिमि मीन अति, दोन छीन विललात ।
तलफि तलफि विलपति विपुल, नेम प्रेम उत्पात ॥९०२॥
तजि भूपण दूपण दये, चीरे चीर अधीर ।
छटपटात लोचत लटनि, हियें अटत नहिं पीर ॥९०३॥
अलि अगजो चहु ओर ते, अलि अगुज के भाय ।
विरि म्मभफागत कुअरि को, क्यों ऐसे अकुलाय ॥९०४॥

---

१ समूह २ जानकर ३ पीडा

अज्यौं अरंभ[1] न ब्याह कौ, क्वारी कन्या तोहि ।
कहा इतौ[2] दुख दूसरौ, दूलह[3] लावे जोहि ॥९०५॥
यह सुनि धुनि सिर फिरि कह्यो, ऐसे फेर न भाखि ।
मन बच क्रम मो पति वहै, इहि भव रवि ससि साखि ॥९०६॥
जो उन छाडी मोहि तौ, छाडौ कहा विचार ।
हौ नहिं तिनको छाडिहौ, मन बच क्रम निरधार ॥९०७॥
उत श्रीनेम उदास व्है, ज्यो पहुचे निज गेह ।
नव लोकातिक देवता, दिच्छा समयो जेह ॥९०८॥
आए ताहि चितावने[4], मधुर वचन करि सोय ।
कहन लगे कल्यान मय, जय जयवता होय ॥९०९॥
सुनत सुमिर समयो तुरत, कीने वरसी दान ।
भुव ऊरिन पूरन करी, भरी सकल धन धान ॥९१०॥

श्री अरिष्टनेमि भगवान का दीक्षा कल्यानक

सावन सुदि छठ तिथि सुदिन, दुपहर चढि सुखपाल ।
चौसठ सुरपति सुर सकल, सहित जिनेस दयाल ॥९११॥
पुरी द्वारिका वीच व्है, निकसि बाहरै आय ।
पहुचे गिरि गिरिनार पै, रेवत शिखरहिं पाय ॥९१२॥
निकट घनी अवराइ तह, तरु असोक तर आय ।
उतरि तहा सुखपाल ते, ससि चित्रा मे पाय ॥९१३॥
भूषन वसन उतारि सब, पञ्च मुष्टि करि लोच ।
चौविहार उपवास द्वै, करि धरि आतम सोच ॥९१४॥
देवदूष पट राखि इक, छाँडि सकल गृह साज ।
राजकुमार सहस्र सँग, लिय चारित जिनराज ॥९१५॥

---

१ शुरू २ इतना ३ वर ४ याद दिलाना ।

अथ श्री अरिष्टनेमिजिनका ज्ञानकल्यानक

चव्वन निसि चारित्र पद, पालि पचपनी रात ।
आसिन वदि मावस भए, निसि निसीथ विख्यात ॥६१६॥
वर गिरनार पहार[1] पर, वत वृक्ष नर आय ।
चित्रा ससि उपवास द्वै, चोविहार करि चाय ॥६१७॥
परमज्ञान कल्यान मै, पायो केवलज्ञान ।
चोदह राज समाज जन, मन परनामहि जान ॥६१८॥
राजमती हू आय तहँ, दिच्छा लै जिन हाथ ।
तजि ससार असार सव, वृत लै भई सनाथ ॥६१९॥
तब पूछयो श्रीकृष्ण यह, एक ओर को प्रेम ।
कैसो सो भापन लगे, श्रीजिननायक नेम ॥६२०॥
आठ जनमकी प्रीत यह, अव क्यौ छूटै भ्रात ।
देवलोकमे चारि भव, चारि और सुनि बात ॥६२१॥
नृप धनभूत रु धनवती, प्रियमति अपराजीत ।
सख यशोमति चित्रगति, रत्नवती सम प्रीत ॥६२२॥
नीमे भव राजीमती, नेमनाथके साथ ।
जनम जनम को वध क्यो, छुटे छुटाए हाथ ॥६२३॥
अव इनको परिवार सुन, गनधर गच्छ अठार ।
सहस अठारह साधुकी, सम्पति करि निरधार ॥६२४॥
चालिस सहस सुसाधवी, वर श्रावक इक लाख ।
ता पर उनहत्तर सहस, अव श्रावक तिय[2] भाख ।६२५॥
तीन लाख उत्तर सहस, वत्तिस गनती जान ।
चौदह पूरव धरि कहे, ते सौ चारि[3] वखान ॥६२६॥
पन्द्रहसै ज्ञानी अवधि, तिते वडक्री धार ।

---

१ पर्वत २ श्राविका, ३ चारसो,

सहस विपुलमति सातसै, बादी वडे विचार ॥९२७॥
डेढ सहस बर साधु अरु, शुभ साध्वी सै तीन[1] ।
जिन कर दिच्छा पायकैं, भए मुक्तपद लीन ॥९२८॥
दुंहू अन्तकृत भूमि ते, इक युगान्तकृत जान ।
अरु दूजी परियान्तकृत, नेमनाथ परिमान ॥९२९॥
आउ मान जिननाथको, अब सब करौ बखान ।
बरस तोनसे नेमिजिन, रहे कुमार सुजान ॥९३०॥
छ दिन ऊन द्वै मास पुनि, रहे नाथ छदमस्थ ।
बरस सातसै तिन सहित, केवलज्ञान समस्त ॥९३१॥

अरिष्टनेमिका मोक्ष कल्यानक

बरस सहस सब आउ के, पूरन करि जिनराय ।
तिथि असाढ सुदि अष्टमी, चित्रा जुत ससि पाय ॥९३२॥
मध्य रात गिरनार पर, उद्यन्तक गिर नूक[2] ।
चौबिहार उपवास जुत,[3] धरि सुभ ध्यान अचूक ॥९३३॥
मुकत पधारे नेम प्रभु, तदन्तर तह जान ।
सहस असी अरु चार पर, महावीर निरवान ॥९३४॥
सहस पचासी बरस पर, नवसै बरस बितीत ।
और असी बीते लिख्यो, सुसिद्धान्त करि प्रीत ॥९३५॥
नेम चरित पूरन भयो, छठी वाचना नून ।
होहु सकल कल्यान जुत, जिन जन मन अनुकूल ॥९३६॥

२४ तीर्थंकरों का मुक्तान्तर काल

चौविस तीरथ नायके, मुक्तान्तर को काल ।
सो वरनौ सछेप करि, परम पुन्य को जाल ॥९३७॥

---

१ तीन हजार प्रमाण २ शिखर ३ सहित

अरु तिन जिन चौबीस के, तात मात को नाउ [1]।
चिन्ह काय मित तन बरन, उमर जनम थित गाउ [2] ॥६३८॥
तिथ पाचौ कल्यानकी, मुक्त थान कुल गोत ।
चवे जासु सुरलोक तैं, ताको नाँव सजोत ॥६३९॥
साध साधवी सकल अरु, गनधर देवी जच्छ[3] ।
चौबीसौं जिन नाथ के, कहौं प्रथम परतच्छ ॥६४०॥
नेमनाथ मुनिसुवृत को, कुल जदुकुल हरि बस ।
गोतम गोत सजोत ये, प्रगटे कुल अवतस ॥६४१॥
अरु सब को इक्ष्वाकु कुल, कश्यप गोती जान ।
मुकत थान जिन बीसको, सिखर समेत बखान ॥६४२॥
शेष चारि के मुक्ति थल, प्रथक प्रथक सुनि सार ।
महावीर पावापुरी, नेमनाथ गिरनार ॥६४३॥
वासपूज चम्पापुरी, अष्टापद सुभथान ।
आदि जिनेसर सार वर, रिषभदेव निरवान ॥६४४॥
अब सबको संछेप करि, सुनिए सब विस्तार ।
वरन चिन्ह परिवार वपु, थित थल अन्तर सार ॥६४५॥
तहाँ प्रथम वरनौं विदित, महावीर अधिकार ।
परम पुनीत प्रताप जुत, आगम मत अनुसार ॥६४६॥

अथ महावीर अन्तराला

चरम तिथकर स्वामिवर, महावीर भगवान ।
वर्त्तमान जिनसौं कह्यो, त्रिसला मात निदान ॥६४७॥
सिद्धारथ जिनके पिता, हाथ सात मितिकाय ।

---

१ नाम २ ग्राम ३ यक्ष

सुबरन बरन बखान तन, लक्षण सिह सुनाय ॥९४८॥
बरस बहत्तर आउथित, तजिकै विजय विमान ।
खत्रिकुड चबि अवतरे, कश्यप गोत निधान ॥९४९॥
चवन साढ सित छठ असित, आसिन[1] तेरस सार ।
देवानदा कूषतै, भयो गर्भ अपहार ॥९५०॥
चैत सिता तेरस जनम, बर चारित अरु ज्ञान ।
अगहन[2] बदि बैसाख सुदि, दसमी क्रम करि जान ॥९५१॥
कातिक बदि मावस सुदिन, दीपमालि जिहि नाऊं ।
महावीर निरबान लहि, पावापुर को गाऊ ॥९५२॥
बीर साध चौंदह सहस, सुभग साधवी सार ।
छत्तिस सहस बखानिए, जैनागम निरधार ॥९५३॥
ग्यारह गनधर जानिए, गौतमादि पर तच्छ ।
देवी जहँ सिद्धायिका, ब्रह्मशान्त जहँ जच्छ ॥९५४॥

पारसनाथ अन्तराल

महावीर निरबान तै, श्रीपारस निरवान ।
वरस अढाई सै प्रथम, भयो सुजानि सुजान ॥९५५॥
अस्वसेन पारस पिता, वामा देवी माय ।
सर्प चिन्ह नव हाथ वपु, हरित वरन वर काय ॥९५६॥
सकल आउ सौ वरस थित, प्रानत जो सुरलोक ।
तजि ताको वारानसी, जनम निवार्यो सोक ॥९५७॥
चौथ चैत वदि च्यवन अरु, ताही तिरगे ज्ञान ।
जनम पोप वदि दसम अरु, ग्यारस दीक्षा जान ॥९५८॥

---

१ आश्विन, २ मार्गशीर्ष ।

आठै सावन शुक्ल को, लह्यो मोष निरबान ।
सुभ थल सिखर समेत पर, इक्ष्वाकी भगवान ॥६५६॥
पारस मुनि सोरह सहस, और साधवी सार ।
कही सहस अडतीस गनि[1], जैनागम बिस्तार ॥६६०॥
जिनके गनधर आठ कहे, धरन इन्द्र जहँ जच्छ ।
दीपमान देवी कही, पदमावती प्रतच्छ ॥६६१॥

नेमनाथ अन्तराला

सहस असी अरु चारि मे, ढाईसै कम जोय ।
श्रीपारस ते नेम की, प्रथम मुक्त कहि सोय ॥६६२॥
समुदविजय जिनके पिता, शिवादेवि जिहि माय ।
सख लछन दस धनुप वपु, नील बरन जिहि काय ॥६६३॥
सहस बरस थिति आयु की, देव विमान जयन्त ।
तजि जनमे हरिवस कुल, सोरीपुर वरसन्त ॥६६४॥
कातिक वदि बारस च्यवन, जनम सुदिक्षा जासु[2] ।
सावन सुदि तिथि पचमी, अरु छठ कम करि तासु ॥६६५॥
ज्ञान अमावस आसनी[3] मोप साढ सित आठ ।
गिर गिरनार सुथान पर, ऐसे आगम पाठ ॥६६६॥
नेम अठारह सहस मुनि, और साधवी सार ।
जैन धर्म के मरम करि, कहि चालीस हजार ॥६६७॥
देवी जिनकी अम्बिका, गोमेधक है जच्छ ।
ग्यारह गनधर नेम के, आगम कहे प्रतच्छ ॥६६८॥

---

१ गिननी करना २ जिनका ३ आश्विन

नमिनाथ अंतराला

श्रीनमिको जिन नेम ते, प्रथम परम निरबान ।
पाच लाख पूरो कह्यो, वर आगम परमान ॥६६६॥
विंजय तात नमिनाथ के, बिप्ला माता जान ।
कमल लछन पद्रह धनुष, काया मान बखान ॥६७०॥
कनक बरन दस सहस थित, सर्वारथ सिधि थान ।
तजिकै सुभ मिथिला पुरी, चवि औतरे सुजान ॥६७१॥
आसिन पून्यो चव जनम, सावन आठैं श्याम ।
सुभ असाढ नवमी असित, चारित दिन अभिराम ॥६७२॥
अगहन सित एकादसी, भए ज्ञान आधार ।
लह्यो मोष बैशाख वदि, दशमी सिखर मझार ॥६७३॥
बीस सहस नमिनाथ के, साध-साधवी फेर ।
गिननी इकतालिस सहस, जैनागम विधि हेर ॥६७४॥
पगधाई देवी कही, जिनके भृगुटी जच्छ ।
गनधर श्रीनमिनाथ के, सतरह कहे प्रतच्छ ॥६७५॥

मुनिसुव्रत अन्तराला

श्री जिनवर नमि तैं प्रथम, मुनिसुव्रत निरवान ।
वर आगम अनुमित कह्यो, छह लख पूरो जान ॥६७६॥
तात सुमित्र सुव्रत्त के, पदमावती सुमाय ।
कच्छप लच्छन स्याम तन, बीस धनुष की काय ॥६७७॥
तीस सहस वर उमर तजि, प्रानत जो सुर लोक ।
राजगृही हरिवंस कुल, चवि जनमे अनशोक ॥६७८॥
सावन सुदि पून्यो च्यवन, जनम जेठ वदि आठ ।
फागुन की द्वै द्वादशी, सितासिता भ्रम पाठ ॥६७९॥

चारित ज्ञानरु जेठ बदि, नौमी पायो मोख ।
कीनो सिखर समेत पर, भवभय तजि सतोख ॥९८०॥
जानौ मुनि मुनिसुव्रत के, तीस सहस विस्तार ।
सहस पचासै साधवी, यहै जैनमत सार ॥९८१॥
नरदत्ता देवी कही, बरुन नाम जह जच्छ ।
गनधर श्रीमुनिसुव्रतके, अठ्ठारह परतच्छ ॥९८२॥

मल्लीनाथ अन्तराला

तिनहू ते पहिलै मुकति, मल्ली जिन की जान ।
ताकी मिति आगम भणित, चउवन लाख बखान ॥९८३॥
मल्ली के पितु कुभ नृप, प्रभावती निहि माय ।
हरित बरन लच्छन कलस, धनु पचीस मिति काय ॥९८४॥
बरस सहस पचपन सुथित, तजि अपराजित लोक ।
मिथिलापुर चवि अवतरे, कुल इक्ष्वाक असोक ॥९८५॥
च्यवन चौथ सित फागुनी, जनम चारितरु ज्ञान ।
अगहन सित एकादशी, ए तीनो कल्यान ॥९८६॥
फागुन सित वारस बहुर, सिखर समेत सुखेत ।
लह्यो परम निर्बांन पद, आतम तत्व समेत ॥९८७॥
मल्ली प्रभु के साध सब, कहे सहस चालीस ।
पचपन सहस सुसाधवी, जानि लेहु बुधि ईस ॥९८८॥
धरनप्रिया देवी जहा, कहि कुबेर वर जच्छ ।
गनधर मल्लीनाथ के, अट्ठाइस परतच्छ ॥९८९॥

अरनाथ अन्तराला

नव लख कम इक कोटि मिति, बरस प्रथम परवान ।
मल्लिनाथ ते मुक्ति वर, अरहनायकी जान ॥९९०॥

श्रीअर जिनकी मात श्री, देबि अर्जना नाम ।
पिता सुदर्शन चिन्ह जिहिं, नन्दावर्त ललाम ॥६६१॥
कनक रग धनु तीस बपु, चौरासी सहसाय ।
छाडि जयत विमान निधि, गजपुर प्रगटे आय ॥६६२॥
चवि फागुन सित दूज सित, कातिक बारस ज्ञान ।
अगहन सुकला दसमि को, जनम और निरवान ॥६६३॥
ग्यारस अगहन सुकल मे, तज्यो गृहस्थावास ।
सिखर समेती मुकत थल, कुल इक्ष्वाकी तास ॥६६४॥
अरहनाथके साधु सुभ, कहे पचास हजार ।
साठ सहस जिहिं साधवी, जैनागम अनुसार ॥६६५॥
बरनी देवी धारनी, जच्छराज जह जच्छ ।
अरहनाथ जिननाथके, गनधर तीस प्रतच्छ ॥६६६॥

कुंथुनाथ अन्तराला

अरहनाथ ते प्रथम श्री, कुथुनाथ निरवान ।
लख इक्यानवे वरस कम, पाव पल्यमे जान ॥६६७॥
पल्योपम सागर प्रमित, पहिले कही बखान ।
आरन के अधिकार मे, काल मान परवान ॥६६८॥
श्रीमति काँता मात के, कुथनाथ सुत जान ।
सूरसेन जिनके पिता, छाग चिन्ह पहिचान ॥६६९॥
पैंतिस धनु कचन वरन, तन हजार सत माह ।
पाच सहस कम आउ थित, छांडि नर्व सिध छाह ॥१०००॥
चवि गजपुर मे औतरे, कुल इक्ष्वाक मझार ।
सावन कृष्णा नवमि तिथ, चवन तासु निरधार ॥१००१॥
पहली बदि वैसाख की, पचम चौदस फेर ।

क्रम करि मोख बखान अरु, दिच्छा जनम सुहेर ॥१००२॥
ज्ञान चैत सुदि तीज को, पायो केवल जान ।
पाँचौ तिथ कल्यान की, येई जान सुजान ॥१००३॥
आठ सहस मुनि कुथ के, और साधवी सार ।
जानो साढे तीनसै, साठ रु पांच हजार ॥१००४॥
बाला देवी भाषिए, अरु गधर्व सुजच्छ ।
कुथनाथ गनधर कहे, सुभ पैंतीस प्रतच्छ ॥१००५॥

शांतिनाथ अंतराला

कुथनाथ तैं प्रथम श्री, शाँतिनाथ निरबान ।
पल्योपम की अर्ध मिति, ताही के परमान ॥१००६॥
विश्वसेन जिनके पिता, अचिरा मात बखान ।
मृग लछन चालीस धनु, कनक काय पहिचान ॥१००७॥
लाख बरस थित आउ की, तजि सर्वारथ सिद्ध ।
हस्तनपुर चवि औतरे, कुल इक्ष्वाक प्रसिद्ध ।१००८॥
असित सत्तमी भादवी, चवन जेठ वदि फेर ।
तेरस जनम वखान सुनि, मोषौ तामें हेर ॥१००९॥
जेठ वदी चौदस लियो, चारित तापर ज्ञान ।
भयो पोस सुदि नवमिको, जासु मिग्वर निरवान ॥१०१०॥
शाँत साध बासठ सहस, और साधवी सार ।
इकसठ सहस रु दोयसै, जैनागम अनुसार ॥१०११॥
वानी देवी जासु की, गरुड नाम वर जच्छ ।
शातनाथ गनधर कहे, तीस रु छह परतच्छ ॥१०१२॥

धर्मनाथ अन्तराला

शांतिनाथ तैं प्रथम श्री, धर्मनाथ निरवान ।

पौन पल्य मिति ऊन करि, सागर तीन बखान ॥१०१३॥
धर्मनाथ श्रीभानु पितु, जासु सुवृत्ता माय ।
बज्र चिन्ह कंचन बरन, पैंतालिस धनु काय ॥१०१४॥
आउ बरस दस लाख थित, तजि सर्वारथ सिद्ध ।
रतनपुरी चबि, औतरे, कुल इक्ष्वाक प्रसिद्ध ॥१०१५॥
सित सातैं बैसाख चबि, जनम माघ सुदि तीज ।
ताही की तेरस रहे, सुभ चारित रस भीज ॥१०१६॥
केवल पून्यो पोस सित, जेठी पचम मोख ।
अरु समेत गिरि सिखर पर, पायो परम सतोख ॥१०१७॥
धर्म साध चौंसठ सहस, और साधवी सार ।
बासठ सहस रु चारिसैं, जैनागम विस्तार ॥१०१८॥
जहँ देवी कन्दर्पिनी, कहिए किन्नर जच्छ ।
गनधर जासु बखानिए, तेतालीस प्रतच्छ ॥१०१९॥

अनन्तनाथ अन्तराला

धर्मनाथ ते प्रथम पुनि, जिन अनन्त भगवान ।
मुक्ति मान तिनकौ कह्यो, सागर चारि बखान ॥१०२०॥
सिंहसेन जिनके पिता, सुजसा जिनकी माय ।
चिन्ह सिचान रु कनक तन, धनु पचास मिति काय ॥१०२१॥
तीस लाख बरसी उमर, लोक सोलहो त्याग ।
अवधि बस इक्ष्वाक में, चवि औतरे सभाग ॥१०२२॥
असिता सातैं सावनी, चवन वदी बैसाख ।
तेरस चौदस चौदसरु, ये तीनो क्रम साख ॥१०२३॥
प्रथम जनम दीक्षा बहुर, तीजं केवल ज्ञान ।
बहुर चैत सित पचमी, सिखर नृपल निरवान ॥१०२४॥

मुनि अनन्त छासठ सहस, और साधवी सार ।
बासठ सहस रु चारिसै, जैनागम निरधार ॥१०२५॥
जिनकी देवी चाकुशा, पाताला जिहि जच्छ ।
गनधर नाथ अनन्त के, कहे पचास प्रतच्छ ॥१०२६॥

विमलनाथ अन्तराला

जिन अनन्त तै विमल जिन, मुक्त्यन्तर परमान ।
नव सागर पूरो कह्यो, लेहु सुजानि सुजान ॥१०२७॥
विमल पिता कृतबर्म अरु, स्यामा जिनकी माय ।
कनक वरन सूकर लछन, साठ धनुष मिति काय ॥१०२८॥
आयु साठ लख बरस चवि, लोक वारहो त्याग ।
कपिलपुर अवतार लै, कीने लोक सभाग ॥१०२९॥
बारस सित वैसाख चवि, पोस सुदी छठ ज्ञान ।
तीज चौथ सित माघकी, जनम रु चारित जान ॥१०३०॥
पुनि असाढ साते असित, ध्याय पाय सुख ध्यान ।
सुभ गिरि 'सिखर' समेत पर, पायो पद निरवान ॥१०३१॥
विमल साध अडसठ सहस, और साधवी सार ।
एक लाख पूरी कही, जैनागम अनुसार ॥१०३२॥
विदिता देवी वरनिए, पनमुख जिनके जच्छ ।
विमल नाय गनवर विमल, कहि पचपन परतच्छ ॥१०३३॥

वासुपूज्य अन्तराला

विमलनाथ तें प्रथम जिन, वासपूज निरवान ।
अन्तर दोनो मुकत की, सागर तीस वखान ॥१०३४॥
वासुपूज वसुपूजि पितु, जाय माय रंग लाल ।
धनु सत्तर तन थित वरस, लाख वहत्तर काय ॥१०३५॥

महिष चिन्ह चपापुरी, छाडि दसम सुरलोक ।
जेठ सुकल नौमी चवे, हरे जनन के सोक ॥१०३६॥
फागुन बदि चौदस जनम, मावस दिच्छा तोष ।
ज्ञान माघ सुदि दूज सित, साढी चौदस मोष ॥१०३७॥
चम्पापुर मैं साध सुभ, सत्तर दोय हजार ।
तीन सहस अरु एक लख, सुभग साधवी सार ॥१०३८॥
चद्रा देवी बरनिए, अरु कुमार जहँ जच्छ ।
बासपूज गनधर कहे, बर छासठ परतच्छ ॥१०३९॥

श्रेयांस अन्तराला

बासपूज ते प्रथम पुनि, जिन श्रेयास सुजान ।
मुक्त्यन्तर इन दुहुन कौ, चौव्वन सागर जान ॥१०४०॥
विष्णुसेन जिनके पिता, विष्णा जिनकी माय ।
खडग चिन्ह कचन वरन, अस्सी धनु की काय १०४१॥
चौरासी लख वरस थित, तजि सुरगानक लोक ।
सिघपुरी चवि अवतरे, कीर्न लोक असोक ॥१०४२॥
जेठ वदी छठ चव जनम, अमिना वारस फाग ।
ताही की तेरस तहाँ, चारित लह्यो सभाग ॥१०४३॥
माघी मावस ज्ञान वदि, तीज सावनी मोष ।
सिखर समेत हि मैं भयो, जनम मरन सतोष ॥१०४४॥
कहे साध श्रेयास के, अस्सी चार हजार ।
छह हजार इक लख कही, सुभग साधवी सार ॥१०४५॥
वरनी देवी मानवी जच्छराज जहँ जच्छ ।
सतहत्तर गनधर कहे, जिन श्रेयांस प्रतच्छ ॥१०४६॥

सीतलनाथ अन्तराला

अब श्रेयांस जिनेस तै, श्रीसीतल निरबान ।
घट बढ करि संख्या कहौं, सो सुनि लेहु सुजान ॥१०४७॥
छासठ लख छब्बिस सहस, तीस बरस बसु मास ।
पन्द्रह दिन गनि जोरि सब, दस सागर मै तासु ॥१०४८॥
सब सख्या यह ऊन करि, सागर कोटि मझार ।
सो सीतल श्रेयांस को, मुक्त्यन्तर निरधार ॥१०४९॥
सीतलके दृढरथ पिता, नन्दा जिनकी माय ।
श्रीवत्सी लछन कनक, तन धनु नव्वे काय ॥१०५०॥
एक लाख पूरब उमर, तजि सुरगांतक लोक ।
भद्दलपुर चवि औतरे, हरे जनन के सोक ॥१०५१॥
चवन बदी वैसाख छठ, जनम रु चारित दोय ।
माघ वदी वारसहि को, सुतिथ एक ही सोय ॥१०५२॥
चौदस असिता पोस की, दूज वदी वैसाख ।
ज्ञान और निरवान तहँ, क्रम करि राखी साख ॥१०५३॥
एक लाख पूरे कहे, सीतल साध सुढार ।
कहिए तिनकी साधवी, इक लख वीस हजार १०५४॥
कही असोका देवि जहँ, ब्रह्मा जिनके जच्छ ।
श्रीसीतल गनधर कहे, इक्यासी परतच्छ ॥१०५५॥

सुविधनाथ अन्तराला

जिनसीतल निरवान तै, प्रथम सुविधि निरवान ।
कहि सागर नवकोटि मिती, वर आगम परमान ॥१०५६॥
सुविधि तात सुग्रीव अरु, रामा जिनकी माय ।

मकर चिन्ह सित बरन तन, सौ धनु ऊंची काय ॥१०५७॥
दोय बरष पूरब सुथित, तजि प्रानत सुरलोक ।
काकदी चवि औतरे, हरे सकल जन सोक ॥१०५८॥
फागुन बदी नौमी च्यवन, जनम माघबदि पाच ।
ग्रह तजि अगहन छठ बदी, लीनौ दीक्षा साच ॥१०५९॥
कातिक सुकला तीज सुदि, नौमी भादव मास ।
ज्ञान और निरबान पद, पायो क्रम करि तासु ॥१०६०॥
लाख दोय मुनि सुविधि के, और साधवी सार ।
तीन लाख पूरी कही, जैनागम अनुसार ॥१०६१॥
देवी कही सुतारिका, अजित नाम जहँ जच्छ ।
सुविधिनाथ गनधर कहे, अट्ठासी परतच्छ ॥१०६२॥

चन्द्रप्रभ अन्तराला

सुविधिनाथकी मुक्ति तै, चन्द्रप्रभ निरवान ।
सागर नब्बे कोटि कहु, मुक्त्यन्तर परमान ॥१०६३॥
महासेन जिनके पिता, और लछमना माय ।
ससि लछन सित वरन अरु, धनुक डेढसै काय ॥१०६४॥
दस लख पूरव आउ थित, तजि जयन्त सुरलोक ।
पुरी चँदेरी औनरे, हरे जनन के सोक ॥१०६५॥
चवन चैत वदि पचमी, पोस वदी के माह ।
वारस तेरस जनम अरु, चारित की क्रम छाह ॥१०६६॥
फागुन अरु भादों वदी, असित सत्तमी जोय ।
ज्ञान और निरबान को, क्रम करि तिथि सो होय ॥१०६७॥
सहस पचास रु दोय लख, चन्द्रप्रभके नाथ ।
तीन लाख अस्सी सहस, सुभ साधवी मनाथ ॥१०६८॥

भृकुटि देवि जिनकी कही, विजय नाम बर जच्छ ।
गनधर कहे तिराणवे, चन्द्रप्रभ परतच्छ ॥१०६९॥

सुपारसनाथ अन्तराला

चन्द्रप्रभकी मुक्ति तै, प्रथम सुपारस नाथ ।
सागर नवसै कोटि मिति, मुक्त्यन्तर की गाथ ॥१०७०॥
सुप्रतिष्ठ जिनके पिता, पृथिवी सेना माय ।
कनक बरन स्वस्तिक लछन, द्वैसै धनु की काय ॥१०७१॥
बीसलाख पूरब उमर, पच ग्रीव तजि लोक ।
पुरी बनारस औतरे, हरे सकल जन सोक ।,१०७२॥
भादौ वदि आठै चवन, जेठ वदी के माँह ।
बारस तेरस जनम अरु, दीक्षा की क्रम छाह ॥१०७३॥
छठ सातै फागुन वदी, ज्ञान और निरवान ।
यथासख्य कल्यान की, क्रम करी लीजे जान ॥१०७४॥
साध सुपारसनाथ के, तीन लाख मिति जान ।
तीन सहस अरु चारि लख, सुभ साधवी वखान ॥१०७५॥
वरनी देवी शानता, अरु मातग सुजच्छ ।
वर गनधर पचानवे, जिनके परम प्रतच्छ ॥१०७६॥

पद्मप्रभ अंतराला

मुकत सुपारस नाथ तै, पदमनाथ निरवान ।
नव हजार जे कोटि मित, सागर पहले जान ॥१०७७॥
पद्म पिता श्रीधर कहे, और सुसीमा माय ।
अरुन वरन पकज लछन, धनु ढाईसै काय ॥१०७८॥
तीस लाख पूरब उमर, अन्तग्रीव तजि लोक ।
कोसबी चवि औतरे, हरे जनन के सोक ॥१०७९॥

माघ बदो छठ चवन अरु, कातिक बदि के माह ।
बारस तेरस जनम अरु, दिच्छा की क्रम छाह ॥१०८०॥
चैती पून्यौ ज्ञान बदि, ग्यारस अगहन मोष ।
पुनि गिर सिखर समेत पर, कह्यो पद्म जिन तोष ॥१०८१॥
तीस सहस अरु तीन लख, पदम साध निरधार।
बीस सहस अरु तीन लख, कही साधवी सार ।१०८२॥
श्यामा देवी बरनिए, कुसम नाम जहँ जच्छ ।
गनधर पदम जिनेश के, इक दस सत परतच्छ ॥१०८३॥

सुमति अन्तराला

पदमनाथतें सुमति जिन, मुक्ति मान परमान ।
सहस कोटि नव्वे इते, सागर पहले जान ॥१०८४॥
सुमति नाथ पितु मेघरथ, और मगला माय ।
क्रौच चिन्ह कचन वरन, धनुप तीनसै काय ॥१०८५॥
चालिस लाख पूरव उमर, छाडि जयत्त विमान ।
अवधि पुरी चवि औतरे, ज्ञान अवधि भगवान ॥१०८६॥
दूज सुदो सावन चवन, सुकल पच्छ बैसाख ।
आठै अरु नौमी जनम, चारित की नम साख ॥१०८७॥
ग्यारस नौमी चैतकी, शुक्ला क्रम करि जान ।
सुमतिनाथ भगवान को, परम ज्ञान निरवान ॥१०८८॥
तीन लाख दस सहस कहु, सुमतिनाथ के साध ।
तीस सहस अरु पाच लख, सुभ साधवी अबाध ॥१०८९॥
महाकालि देवी कही, तुवर नाम सु जच्छ ।
सुमतिनाथ गनधर कहे, सत दस छह परतच्छ ॥१०९०॥

अभिनन्दन अन्तराला

सुमतिनाथ तैं प्रथम पद, अभिनन्दन आनन्द ।
सागर नव लख कोटि मिति, कह्यो परम निरदंद ॥१०६१॥
सुमतिनाथ तैं आदि दै, ह्या लौं अन्तर काल ।
छह् जिन नायक कौ कह्यो, दस दस गुनकी चाल ॥१०६२॥
संबर अभिनन्दन पिता, सिद्धारथा सुमाय ।
कनक बरन कपि चिन्ह् धनु, साठ तीनसै काय ॥१०६३॥
लख पचास पूरव उमर, तजि कै विजय विमान ।
पुरी अयोध्या औतरैं, अभिनन्दन भगवान ॥१०६४॥
चवन चौथ वैसाख सुदि, माघ शुक्लके माह् ।
दूज और बारस जनम, दिच्छा की क्रम छाह् ॥१०६५॥
ज्ञान पोस चौदस सिता, आठैं सिन बैसाख ।
अथ गिर सिखर समेत पर, मोख परम पद साख ॥१०६६॥
अभिनन्दन मुनि तीन लख, और साववी सार ।
कहि छ लाख छत्तिस सहस, जैनागम निरधार ॥१०६७॥
देवी काली वरनिए, जच्छ नायक रु जच्छ ।
अभिनन्दन गनधर कहे, इक सत तीन प्रतच्छ ॥१०६८॥

संभव जिन अंतराला

अभिनन्दन तै प्रथम पद, सभव जिनको जान ।
सागर कोटि सुवीस लख, ताकी सख्या मान ॥१०६६॥
सभव तात जितारि नृप, और सुसेना माय ।
हय लछन कचन वरन, धनुप चारिसै काय ॥११००॥
साठ लाख पूरव सुथित, छाडि आदि ग्रीवेक ।
सावसती चवि औतरे, राखि धरमकी टेक ॥११०१॥

फागुन मित आठै चवन, अगहन सितके मांह ।
चौदस पाचै जनम अरु, चारितकी क्रम छांह ॥११०२॥
कातिक बदि अरु चैत सुदि, सुतिथ पचमी जोय ।
लह्यो ज्ञान निरबान यह, सभव क्रम करि सोय ॥११०३॥
जिन सभव मुनि दोय लख, और साधवी सार ।
तीन लाख छत्तिस सहस, जैनागम निरधार ॥११०४॥
बर देवी दुरितारिका, और त्रिमुख जहँ जच्छ ।
जिन सभव गनधर कहैं, पांच रु सत परतच्छ ॥११०५॥

अजितनाथ अंतराला

संभव ते जिन अजित हूँ, तिनकौ अन्तर काल ।
कह्यो तितोई बीस लख, कोटि सागरै हाल ॥११०६॥
अजित तात जितसत्रु अरु, विजया देवी माय ।
कनक रंग गज चिन्ह धनु, साठ चारिसै काय ॥११०७॥
लाख बहत्तर पूर्व थित, तजिकै विजय विमान ।
पुरी अयोध्या औतरे, अजित नाथ भगवान ॥११०८॥
तेरस सित वैसाख चव, माघ सुदी के मांह ।
आठै नौमी जनम अरु, दीक्षा की क्रम छांह ॥११०६॥
ग्यारस सुकला पोस सित, चैत पचमी जोय ।
लह्यो ज्ञान निरवान पद, अजितनाथ जिन सोय ॥१११०॥
अजितनाथ मुनि एक लख, और साधवी नार ।
तीन लाख आगम कहै, ता पर तीस हजार ॥११११॥
देवी बाला अजित जहँ, और महाजक्ष जच्छ ।
अजितनाथ गनधर कहे, नव्वे परम प्रतच्छ ॥१११२॥

आदिनाथ अंतराला

अजितनाथ तै प्रथम अब, ऋषभदेव जिन नाथ ।
सागर कोटि पचास लख, लखि लिखि होहु सनाथ ॥१११३॥
एई प्रथम जिनेस ते, चौबिस जिनलौ सार ।
मुक्त्यन्तर भाखे सकल, प्रथक प्रथक बिस्तार ॥१११४॥
चरम तिथकर लौ कह्यो, जो सबको परमान ।
प्रति जिन इक इक जोरिकै, लेहु सुजानि सुजान ॥१११५॥
ऐसै जो सब जोरिए, अन्तर काल निदान ।
ऋषभदेव मुक्तादि ते, महाबीर निरवान ॥१११६॥
कोटि कोटि सागर अवधि, माह ऊन करि तासु ।
सहस बयालिस त्रय वरस, अरु साढे वसु मास ॥१११७॥
तापर नवसै अरु असि, वरस जोरि जौ लेहु ।
कल्पसूत्र पुस्तक चढ्यो, तासु मान कहि देहु ॥१११८॥
नाभिराय जिनके पिता, अरु मरुदेवी माय ।
वृषभ चिन्ह कचन वरन, धनुष पाँचसैं काय ॥१११९॥
लख चौरासी पूर्व थित, सर्वारथ सिधि लोक ।
छाँडि अयोध्या अवतरे, हरे जनन के सोक ॥११२०॥
असित असाढी चौथ चव, जनम रु चारित जोग ।
चैत वदी आठैं भयो, दोनो को सजोग ॥११२१॥
असिता ग्यारस फागुनी, माघी तेरस श्याम ।
लह्यो ज्ञान निरवान क्रम, अष्टापद अभिराम ॥११२२॥
मुनि चौरासी सहस अरु, विमल साधवी सार ।
तीन लाख पूरी कही, आदिनाथ परिवार ॥११२३॥
देवी वर चक्केसरी, गोमुख नामा जच्छ ।
आदिनाथ गनधर कहे, चौरासी परतच्छ ॥११२४॥

इति अन्तराला समाप्ता

अथ आदिनाथ अधिकार

अब कछु विस्तरकै सुनौ, ए पाँचौ कल्यान ।
तीजे आरेके रहे, इते बरस जब आन ॥११२५॥
लख चौरासी पूर्व तब, भयो ऋषभ औतार ।
जिनके अब विस्तार करि, कहौ सकल अधिकार ॥११२६॥
जिनके चारि कल्यानते, उतराषाढा माँह ।
अभिजित मै पद पाचवै, कल्यानक की छाह ॥११२७॥
असित असाढी चौथ तिथ, तजि सुर थित विवहार ।
जबुदीप थल भरथ भुव, कुल इक्ष्वाक मझार ॥११२८॥
अवसर्पिनि जो काल जिहि, तीजो आरौ जोय ।
कोड कोड सागर कह्यौ, सुखम दु खमा सोय ॥११२९॥
पल्योपम अष्टाँश मै, नगर अजोध्या जोय ।
गुरुकुल उपजे सात तहँ, प्रथम जुगलिया सोय ॥११३०॥
दूजो चक्षुष्मान ये, दोनो नीति हकार ।
पुनि तीजौ जसमित्र अरु, अभिनँदा जे च्यार ॥११३१॥
इन दोउनके पाट लौं, नीति कही मक्कार ।
चारि पाट लौं यह कही, नीत हकार मकार ॥११३२॥
पुनि प्रसेनजित पांचवौ, अरु छठवौ मरुदेव ।
नाभराज जे सातवे, इन तीनो के भेव ॥११३३॥
नीति कही धिक्कारनी, धनुप पाचमै देह ।
सातो गुरुकुल की कही, सकल विवस्था एह ॥११३४॥
नाभ नाम गुरुकुल विपै, मरुदेवी की रूप ।

निसि निसीथके काल श्री, ऋषभदेव अनदूष ॥११३५॥

आदिनाथ च्यवन कल्यानक

सुर सबधी आयु तजि, अरु अहार बिहार ।
छाँडि चवे सुरलोक तें, गर्भवास आधार ॥११३६॥
अब इन जिन श्रीऋषभके, तेरह भव वपु नाम ।
वरनि बखानौं प्रथम धन, सारथबाहु ललाम ॥११३७॥
भए जुगलिया दूसरे, तीजै सुरवर फेर ।
चौथे राजा महाबल, फेर पांचवै हेर ॥११३८॥
भए देव ललितांग पुनि, वज्रजघ नृप फेर ।
छठे सातवै जुगलिया, पुनि सुर अठये हेर ॥११३९॥
जीवन दायक नाम पुनि, वैद्य नवै भव सोय ।
दसवै भव वर देवता, जनम होय सुख मोय ॥११४०॥
चक्रवर्त पुनि ग्यारवें, वजूनाभ इंहि नाम ।
सर्वारिथ सिधि बारवें, भए परम अभिराम ॥११४१॥
जनम तेरवै रिषभप्रभु, आदि जिनेसर सार ।
तिन जिनके अधिकार अव, कहौं सकल विस्तार ॥११४२॥
तीन ज्ञान सह च्यवन जिन, कीनो गर्भ निवास ।
कुजरादि चौंदह सुपन, मरुदेवी लखि तासु ॥११४३॥
ऐसें ही बावीस जिन, जननि प्रथम गज देखि ।
और लखैं नहि वृष लखै, प्रथम कह्यो या लेखि ॥११४४॥
रहे नही तिहि काल मैं, जे पडित सुपनज्ञ ।
यातें सुपन विचार तहँ, कियो नाभि भविसज्ञ ॥११४५॥

आदिनाथ जन्म कल्याणक

गर्भकाल वीत्यो जबै, सकल सवा नव मास ।

चैत बदी आठै नखत, उत्तरषाढ प्रकाश ॥११४६॥
मरुदेवी की कूख तै, जन्मे श्री भगवान ।
ऋषभदेव भगवत बर, आदि जिनेसर जान ॥११४७॥
आदि तिथकर आदि नृप, भिक्षाचर पुनि आदि ।
आदि केवली ऋषभ ए, पाँचौ नाम अनादि ॥११४८॥
छप्पन दिसा कुमारि अरु, चौसठ इन्द्रन आय ।
कियो महौच्छौ प्रथमवत, धन बरखा वरषाय ॥११४९॥
तोलन तोला सेर मन, बाटन गज तिहि काल ।
रीति जाति कर्मादि नहि, और दसूठन चाल ॥११५०॥
ते सब अब नव रीत करि, सब अचार विवहार ।
करे हरे दुख दुद[1] सब, श्रीजिनराज कुमार ॥११५१॥
दीन दुखी दारिद्र जुत, हीननको तिहि काल ।
बन्द[2] न कोऊ बदि मै, सब अनन्द सुखहाल ॥११५२॥

वशस्थापन —

एक बरसके जब भए, आदिनाथ भगवान ।
इन्द्र आय इक ऊख[3] तहँ, लायो जिन हित जान ॥११५३॥
अरु जिन कर अँगूठ मै, अमृत कियो सचार ।
चारित समयावधि लियो, सुर सवधि अहार ॥११५४॥
एक समय नर जुगलिया, लहि फल ताल अघात ।
मर्यो तासु की जुगल तिय, लई नाभि नृप तात ॥११५५॥
लै राखी निज महल मै ऋषभ ब्याह कँ देन ।
अति सुदरि मरि जरि मनो,[4] रति छाडी झक फेन ॥११५६॥
कोटि लाख सत्तर बरस महन जानके मान ।

---

१ झगडा २ कैदी ३ गन्ना ४ मानो ।

संख्या पूरबकी कही, इते बरस पहिचान ॥११५७॥
बीस लाख के अकसौं, गुनि यह अक सुजान ।
बीस लाख पूरब ऋषभ, रहे कुमार सुजान ॥११५८॥
जोबन वय मय समय बर, विषय भोग रस सार ।
जोग भये जिननाथ जब, तिहि वर वय कौमार ॥११५९॥
इन्द्र इन्द्रतिय धारि चित, जिनवर ब्याह विचार ।
आय अवास निवास हित, रचौ ब्याह विस्तार ॥११६०॥
धुज तोरन मगल कलस, रभा खभ वितान ।
तानि सुबस मँगाय कैं, चौरी रची सुजान ॥११६१॥
बहिन सुनदा ऋषभ की, अरु सुमगला दोय ।
जुगल धर्म करि इन्द्र तिहिं, जुगल ब्याहि हित सोय ॥११६२॥
पीठी उबटि[1] नन्हाय[2] पुनि, सकल सिंगार सिंगारि ।
कोरी[3] वसन पिन्हाय तिन, चौरी माहिं बिठारि ॥११६३॥
पुनि सुरपति भगवंत कौ, पीठी उबटि नहाय ।
तास बास वासे अतर, वर बागौ[4] पहिराय ॥११६४॥
सुर समूह सब साथ लै, सजि सब साजि वरात ।
हय चढाय जिनराय वर, मुद वढाय विख्यात ॥११६५॥
मोर[5] मौर[6] सिर सेहरा, चामर छत्र डुलाय ।
मिली इन्द्रानी इन्द्र जिन, मडहे तर पधराय ॥११६६॥
सुर तिय मगल गाय मनि, मानिक चौक पुराय ।
हथलेवा मिलवाय पुनि, चारौं फेर फिराय ॥११६७॥
सकल कर्म करि चाय सौं, विधिवत ब्याह कराय ।
पाय सकल सुख सुर सहित, सुरपति भए विदाय ॥११६८॥

---

१ उबटन २ स्नान ३ कोरा कपडा ४ पोशाक ५-६ माथे पर मुकुट ।

छह लख पूरब अवधि लगि, विषय भोग गृहवास ।
बिलसि सुनन्दा कै भयो, प्रसव जुगलिया जासु ॥११६९॥
भरत बिरामी नाम तिहि, अरु सुमगला नारि ।
जनो बाहुबल सुदरी, प्रथम जुगलिया सार ॥११७०॥
पुनि जनमी यह जुगल सुत, दोइ ऊन पचास ।
यह सतत[1] भगवत की, भई गृहस्थावास ॥११७१॥
तीजे आरे के रहे, जब थोरे दिन आय ।
कल्पबृच्छ थोरे रहे, भुव मै जुगलि न पाय ॥११७२॥
लरन[2] लगे ते परस्पर, इक तरु तर ह्वै वैठि ।
हक्क मक्क धिक्कार ते, तिहूं तीनि मै पैठि ॥११७३॥
तिनके न्याय निबेर ही, नाभि नृपति चित चाहि ।
चह्यो राज के पाट पर, सुतहि बिठावन ताहि ॥११७४॥
आय इन्द्र सुरलोक तैं, कियो महोच्छौ चाय ।
राज पाट अभिषेक की, सौंज[3] समारी[4] आय ॥११७५॥
पुरी अयोध्या आय के, धनद करी नृप काज ।
राज साज सुरपति सजे, वाजि ताज गजराज ॥११७६॥
त्रेसठ लख पूरव बरस, ऋषभदेव करि राज ।
सकल कला तिनही करी, प्रकट जगत के काज ॥११७७॥
लिखन पढन अरु गिनन पुनि, सुगुन सुपन को ज्ञान ।
शस्त्र शास्त्र धनु बानकी, विद्या आदि सुजान ॥११७८॥
गान ज्ञान गुन मान मिति, तान तान के भेद ।
नृत्य नाट्य अरु वाद्य के, चारौं भेद अभेद ॥११७९॥

---

१ सतान २ झगड़ा करना ३ परिपाटी ४ सुधारना ।

कामकला रस रसगिता[1], सोरह सजन सिगार ।
बसीकरन मोहनकला, आदि अमित परवार ॥११८०॥
जोतक[2] बैदक[3] अश्व गज, रथ आरोहन ज्ञान ।
चित्र चितेरन[4] चतुरई, अरु विचित्रता जान ॥११८१॥
सकल सिल्पकी स्वल्पता, सूछम थूल प्रकार ।
सब सिखराई[5] जनन कौ, सजि तिनके हथियार ॥११८२॥
त्रेसठ लख पूरब बरस, जब यो भए बितीत ।
दिक्षा समय चितावने, आए सुर करि प्रीत ॥११८३॥

आदिनाथ दिक्षा कल्यानक

जेजैनन्दा कहि कह्यो, जै भद्रा जिन जान ।
कोउ न लै तिहिंकाल पै, दियो समछरी दान ॥११८४॥
चैत वदो आठैं सुदिन, पहिर पाछलै पाय ।
वैठि सुदरसन पालकी, सुर मनु सह समुदाय ॥११८५॥
पुरी विनीता वीच ह्वै, निकसि वाहरै आय ।
तरु असोक तर सोक तजि, भूषन वसन बढाय ॥११८६॥
सुरपति हित इक मूठ तजि, चारि मुष्टि करि लोच ।
चौविहार द्वै वास जुत, तजि ससारी सोच ॥११८७॥
उत्तरषाढा जोग ससि, चारि सहस नर साथ ।
देवदूष पट जुत लियो, चारित जिन जन नाथ ॥११८८॥
तदनन्तर जिन आदि प्रभु, लागे करन विहार ।
पै विहरावन विधि न कोउ, जाने देन अहार ॥११८९॥
फिरे गोचरी करत जिन, वीत गए अय मास ।
भिक्षा लाभ न होय कहु, सहे भूख अरु प्यास ॥११९०॥

---

१ रस का ज्ञान २ ज्योतिष ३ वैद्यक ४ चित्रकला ५ सिखाना ।

साथ सग भगवन्त के, जे हे चारि हजार ।
सहि न सके प्यास रु छुधा, पाएँ विना अहार ॥११९१॥
जाय सुरसरी तीर तव, बन तरु दल फल फूल ।
पाय खाय बन छाय कै, गह्यो तपस्या मूल ॥११९२॥
एकाकी जिन होय तव, तहँ तै कियो विहार ।
पालक सुत द्वै नमि विनमि, तहाँ मिले हित धार ॥११९३॥
परे पाय मुद छाय पुनि, लगे करन जिन सेव ।
जिन तन पास अदृष्ट हो, कह्यो सुरनके देव ११९४॥
वर दै पुनि दीनो तिन्हैं, वेतढ[1] परवत राज ।
गौरि आदि विद्या दई, अडतालिस सुख साज ॥११९५॥
तातै विद्याधर भए, छए महासुख चैन ।
उत्तर दच्छन श्रेय[2] के, भए धनी धन ऐन[3] ॥११९६॥
पुर मताल नगरी गए, तहँ तै श्रीभगवान ।
छुधा पिपासा सहन करि, रहे तहाँ जिन जान ॥११९७॥
मनि मोती रथ गज तुरग, कन्या सब कोउ देय ।
पै अहार विहरायवो, काहू को नहिं गेय ॥११९८॥
पिछले भव इक वरद मुख, वारह पहर जिनेम ।
छीका वाध्यो हो सु तिहि, कर्म उदै अवधेन ॥११९९॥
लह्यो न बारह मास लौं, ताही देन अहार ।
अन्तराय पूरे भए, तव अहार विवहार ॥१२००॥
ऋषभ पौत्र श्रेयांस तहँ, देखि नाथके रूप ।
जिनवर को घर लै गयो, भिक्षा हित हित भूप ॥१२०१॥
अब जब जिन माडन[4] लगे करि भिक्षा पै हेत ।

---

१ वैताढ्य पर्वत । २ श्रेणी ३ परिपूर्ण ४ हाथ माडना ।

दहनौं बाँएँ सौ लग्यो, कहने भाई चेंत ॥१२०२॥
हौं सेवा जप लिखन अरु, जीमन दान हि जोग।
यातैं तू ही इह समय, लेहि प्रतिग्रह भोग ॥१२०३॥
दहने सौ कहने लग्यौ, सुनि बायौ यौं बैन ।
भलो नही ऐतो[1] गरब, चुप रहि कहै, बनैन ॥१२०४॥
तूं ज्वारी तू चोर तूं, करत कुकर्म अनेक ।
जुद्ध माहिं पीछै भजै, हौ ही राखौं टेक ॥१२०५॥
सुन झगरौ[2] कर दुहुन कौ, श्रेयँस बोले बैन ।
भलौ न जिन पारन समैं, यह झगरौ दुख ऐन ॥१२०६॥
यातैं तुम दोऊ मिलौ, मिलि विहरौ आहार।
सुनि जिन दोउ कर मिले, सनमुख दए पसारि ॥१२०७॥
तब विहराए ऊख रस, श्रेयँस सरस जिनेश ।
सुर दुदुभि नभ बजि करी, अति धन वृष्टि सुरेश ॥१२०८॥
नाही दिनतै यह भयो, अखय[3] तीज तिहिवार।
विहरावन लागे तबै, जिनवर कौ आहार ॥१२०९॥
तक्षसिला नगरी गए, विहरत आदि जिनेस ।
काउसग्ग तप करि रहे, तहाँ ऋषभ ज्ञानेश ॥१२१०॥
तहाँ बाहुबल जिन सुअन, आयो वदन हेत ।
तहाँ न जिनदर्स्सन भए, विचरि गए अन खेत ॥१२११॥
मरुदेवी जिनजननि जब, सुमरै जिनके हाल ।
भूख प्यास तप कष्टकी, सहत होय बेहाल ॥१२१२॥
रोय कहै सुत भरत सौं, राज काज बस लाल।
क्यौं भूली सुधि तातकी, भली नही यह बात ॥१२१३॥

---

१ इतना २ गृह कलह ३ अक्षय तृतीया।

रोय रोय यौ रैनदिन, दीनै नैना खोय ।
होत जात छिन छीन तन, मरुदेवी दुख मोय ॥१२१४॥
सहस बरस सहिसहि सकल, सुरमनुकृत उपसर्ग ।
तज्यौ जिनेसर गेह अरु, देह नेह सुख बर्ग ॥१२१५॥

आदिनाथ का ज्ञान कल्यानक

फागुन बदि एकादशी, नखत उत्तरासाढ ।
तीन मास पानी रहित, चौविहार करि गाढ ॥१२१६॥
दुपहर दिन पुरतै निकसि, बन बसि वट तरु हेठ ।
पायो केवलज्ञान पद, परम सिद्ध मे पैठ ॥१२१७॥
भरत करी महिमा महत[१], आदिनाथ की आय ।
पुनि मरुदेवी माय को, हाथी पर बयठाय[२] ॥१२१८॥
तिन पूछी तब भरत सौ, देव वाद्य सुनि कान ।
भरत सुनायो लाभ बर, आदिनाथ कौ ज्ञान ॥१२१९॥
सुनि अति छायो मोद[३] मन, मरुदेवी कै सोय ।
उघरि गए दृगपटल[४] जे, खोए दुख करि रोय ॥१२२०॥
मरुदेवी हू को तहां, उपज्यो केवल ज्ञान ।
एक मुहूरत माहि पुनि, पायो पद निरवान ॥१२२१॥
सुरन आय तहँ समुद मे, दीनी काय वहाय ।
भरत कियो अति सोक पुनि, हरषे मोद बढाय ॥१२२२॥
भरत जाय छह खंडमे, राजनीत दरसाय ।
चक्रवर्त की रिद्धि लै, फिरे अयोध्या आय ॥१२२३॥
भरत भ्रात अट्ठानवै, तेऊ बोधहि पाय ।
चारित लीनो तिन सवन, ऋषभदेव ते चाय ॥१२२४॥

बड़ी २ बिठलाकर ३ प्रसन्नता ४ पर्दे ।

सुदरि आदिक तियन हू, पुनि लीनौ चारित्र ।
एक बाहुबल बिन सकल, सेवक भए पवित्र ॥१२२५॥
सुमुख नाम इक दूत तहँ, भरत पठायो जाय ।
तक्षसिला पुर बाहुबल, निकट सदेस सुनाय ॥१२२६॥
कह्यो वुलायो प्रीत करि, तुमहिं भरत भूपाल ।
मिलन हेत उतकठ अति, औसेरत अरिसाल ॥१२२७॥
सुनि सदेसा बाहुबल, कह्यो बाहु बल जोर ।
सब भाइनकौ राज लै, अब आए इहिं ओर ॥१२२८॥
सो तो ह्यॉं बनिहै नही, कहो रहै चुप साधि ।
न तौ वेग सजि होइ कहु, उठिहै बडी उपाधि ॥१२२९॥
दूत विदा व्है चलि पहुंचि, निज पुर कही सुनाय ।
सुनि कोप्यो चकवै[1] भरत, सहसेना[2] समुदाय ॥१२३०॥
चढ्यो बढ्यो चतुरग लै, सग निसान बजाय ।
उत तै वहऊ[3]बाहुबल, चढि चलि आयो धाय ॥१२३१॥
मिले मध्यमगमें दुऊ, जुरे जुद्ध समुहाय ।
सुभट भिरे[4] घिरि दिसन मै, तनतै मोह छुडाय ॥१२३२॥
मच्यो घोर सग्राम अति, जच्यौ जुद्ध वर सोय ।
ऐसे ही वीते बरस, बारह लच्यौ[5] न कोय ॥१२३३॥
लरे मरे दुहु ओरके, भट गज़ तुरग अनेक ।
पै दोउन भाईन मे, किनहू तजी न टेक ॥१२३४॥
तब सुरपति तहँ आयकै, समझाए दोउ भाय ।
जीवन कौ क्यौ छै करौ, लरत न दुद बनाय ॥१२३५॥
पांच भेद है द्वंद्व के, एक वचन इक दृष्ट ॥

---

१ चक्रवर्ती २ साथ में सेना ३ वह भी ४ भिड़ना ५ पीछे न हटना

दड बाहुकी जुद्ध पुनि, कही पाँचवी मुष्ट ॥१२३६॥
सुनि मानी मानी दुहुन, बलके मद उमदाय[1] ।
पर पाचौ विधि मे थक्यौ, भरतै अति श्रम पाय ॥१२३७॥
तब मारन हित बाहुबल, मूठ उठाई जोर ।
समझि फेर तिहि समय मन, धिक्कार्यो मुह मोर[2] ॥१२३८॥
राज हेत राच्यौ कलह, धिक धिक जीवन हाय ।
यौ पछताय बिहाय सब, द्वेष विरागहिं पाय ॥१२३९॥
चारित लीनौ तुरत तब, तजि सब सुख ससार ।
भरत आप परि पाय पुनि, दोष खिमाए हारि ॥१२४०॥
पै थोरौ सौ अहमती,[3] रह्यो बाहुबल माँह ।
लघु भाई पग लगनमे, मन मच्छरकी छाँह ॥१२४१॥
करन लग्यौ तातै तबै, काउसग्ग तप घोर ।
पग पर दीमक घर कियो, श्रुतिमे[4] पछी ठौर[5] ॥१२४२॥
आदिनाथ लहि ज्ञान मग, बाहुबली कौ मान ।
भेजी ब्रह्मी सुदरी, बहिन बोध हित जान ॥१२४३॥
'गज तै उतरौ' तिन कह्यौ, दुहु माधवी आय ।
सुनि विस्मय व्है तिहि समै, तप तजि सोच्यौ चाय ।१२४४॥
बहु दिन बीते गज तजे, यह कैसौ गज कौन ।
मान मतग सो बूझिए, अब लौ समझौ हौं न ॥१२४५॥
हौं या गज पर चढि रह्यौ, कै यह मोपै मान ।
भ्राता पग लागन चल्यौ, तजि तिहि कान गुमान ॥१२४६॥
तिहि थल केवलज्ञान तिहि, उपज्यो लहि सुख छाँह ।
आदिनाथ पग परसि कै, बने केवलिन माहं ॥१२४७॥

---

१ उन्माद २ मोड़कर ३ अहंकार बुद्धि, ४ कान मे ५ घोंसला ।

अब श्री आदि जिनेस कौ, कहौ सकल परिवार ।
चौरासी गनधर तिते[1], साध सहस निरधार ॥१२४८॥
तीन लाख बर साधवी, श्रावक साढे तीन ।
पाँच लाख चव्वन सहस, सुभ श्राविका प्रवीन ॥१२४६॥
चारि सहस अरु सातमै, साढे पूरब जान ।
अवधिज्ञान ज्ञानी भए, नव हजार परिमान ॥१२५०॥
बीस सहस पद केवलो, लबध वयक्रीवान ।
बीस सहस छहसै भए, बहुर विपुल मतिज्ञान ॥१२५१॥
साढे छहसै अरु सहस, बारह सज्ञा सोय ।
तेतेई[2] बादी भए, साध सख्य[3] यह जोय ॥१२५२॥
साध मुक्ति पदकौ गए, वीस सहस लहि बोध ।
लह्यो साधवी हू मुकत, चालिस सहस प्रवोध ॥१२५३॥
ऐसे आदि जिनेस की, साधु सपदा मान ।
दुहु प्रकार भुव जन कहै, एक अतकृत जान ॥१२५४॥
अरु दूजी परियाँतकृत, मुकत राह निरवाह ।
रह्यौ असख्या पाट लौ, जिनवर पाछे चाह ॥१२५५॥
अब सब आउ[4] जिनेस की, कहैं सुनौ चित लाय ।
वीस लाख पूरव रहे, पद कुमार मै छाय ॥१२५६॥
त्रेसठ पूरब लाख पुनि, वरस राज पद भोग ।
त्र्यासी पूरब लाख कुल, गृह सुख भोग सजोग ॥१२५७॥
एक सहस छदमस्थ अरु, सहस ऊन इक लाख ।
पूरब केवल ज्ञान पद, पाय रहे निज साख ॥१२५८॥

---

१ उतने ही २ उतने ही ३ गिनती ४ आयु ।

आदिनाथ मोक्ष कल्यानक

चौरासी पूरब सकल, आयुमान प्रतिपाल ।
मास आठ साढे बरस, तीन इतौ[1] जब काल ॥१२५९॥
तीजे आरे के रहे, माह माह के माह ।
शुभ तिथि असित तिरोदशी, अभिजित ससिकी छाँह ॥१२६०॥
अष्टापद परबत तहा, दस हजार सँग साध ।
छह उपास पानी रहित, चौबिहार व्रत साध ॥१२६१॥
दुपहर दिन पहले लह्यो, आदिनाथ निरवान ।
कालमान भाख्यो प्रथम, महावीर लौं मान ॥१२६२॥
आदि जिनेसर जनम तैं, महावीर निरवान ।
चौरासी पूरब सहित, इनकी आयु प्रमान ॥१२६३॥
कोटि कोटि सागर अवधि, मे घट करि यह तासु ।
सहस बयालिस त्रय बरस, अरु साढे वसु[2] मासु ॥१२६४॥
ता पाछे बीते जवै, नौसै असी प्रमान ।
बरस लिख्यौ यह ग्रन्थ तव, कल्पसूत्र मो जान ॥१२६५॥

अथ थविरावली

महावीर जिन नाथ के, ग्यारह गनधर नार ।
जे चौदह पूरब निपुन, द्वादशांग गुनधार ॥१२६६॥
तिन मै द्वै कै शिष्य नहि, नव ही को विस्तार ।
नव ही गच्छ भए तहां, महावीर के बार ॥१२६७॥
ते सब मासिक वरत[3] करि, चौविहार धरि ध्यान ।
नव तिन मे जिनवर छतै, लह्यो मुकत निरवान ॥१२६८॥

---

१ इतना २ आठ ३ उपवास ।

द्वै पाछे सब के कहो, अब सुनि नाम बखान ।
इन्द्रभूति पहिले भए, गोतम गोती जान ॥१२६९॥
अग्निभूत दूजे भए, तेऊ[1] गोतम गोत ।
वायभूत तीजे तेऊ, गोतम गोत सजोत ॥१२७०॥
आर्यं व्यक्त चौथे भए, भारद्वाज सगोत ।
थविर सुधरमा पाँचवै, अग्नि गोत सुभ जोत ॥१२७१॥
पाँच्र पाँचसै साधको, पाँचौ वाचन देइ ।
द्वादशाग आगम सकल, पढै पढावै तेइ ॥१२७२॥
छठवै मडित पुत्र ते, गोतम गोती जान ।
मौरीसुत सप्तम भए, कौसिक गोत निधान ॥१२७३॥
ये द्वै साढे तीनसै, साधहि बाचन देय ।
थविर अकपति आठवै, गोतम गोती तेय ॥१२७४॥
थविर अचलभ्राता भए, हारयानि[2] जिहिं गोत ।
थविर भए मेनार्य जे, कौडिन गोत सजोत ॥१२७५॥
थविर ग्यारवै गोत शुभ, कौडिन नाम प्रभास ।
तीन तीनसै साधकै, वाचन दै अनियास ॥१२७६॥
अव क्रम करि पट्टावली, थविरन की सुनि लेय ।
महावीर के पाट पर, गोतम वैठे तेय ॥१२७७॥
महावीर की मुक्ति तै, वारह वरस वितीत ।
भए गए ते मुक्ति पद, जिहिं सव आउ प्रतीत ॥१२७८॥
भई वानवै वरस की, तव पायो निरवान ।
पुनि सुधर्म स्वामी भए, तिनके पाट सुजान ॥१२७९॥

---

१ वे भी २ हार्यायन ।

चारित बरस पचासवें, लियो बरस पुनि तीस ।
महाबीर सेवा करी, बारह गोतम कीस ॥१२८०॥
आठ बरस पद केवली, पालि पाय निरबान ।
शतजीव व्है मुक्ति पद, परम लह्यो सुज्ञान ॥१२८१॥
शिष्य नही इन दुहुन के, रहे तबै तिहिं पाट ।
जबू स्वामी तै तहा, रही धरम की बाट ॥१२८२॥
रिखभदत्त बिवहारिया, तिया[1] धारिनी तासु ।
जिनतै जनमै नाम शुभ, जबू स्वामी जासु ॥१२८३॥
सुनि सुधर्म बानी लह्यो, सब ससार असार ।
आठ तिया ताके तऊ[2], राग रहित विवहार ॥१२८४॥
इक दिन ताके सदनमै, प्रभव नाम इक चोर ।
आय पांचसै जन सहित, चोर विपुल धन जोरि ॥१२८५॥
चल्यो गेह नहि चलि सक्यौ, सासन देव प्रभाव ।
तब जबू के पग पर्यो, सो तस्कर कौ राव[3] ॥१२८६॥
कह्यो स्वापिनी[4] सीखिए, हमतै विद्या चार ।
अपनी हमै सिखाइए, थभन विद्या चारु ॥१२८७॥
तब जबू ता चोर कौ, सब चोरन के साथ ।
धरम कथा उपदेश कहि, बोधे सब मुनिनाथ ॥१२८८॥
आय आठ तिय के सहित, अरु उन के पितु मात ।
सब तस्कर मिलि पाचसै, सनाइस जन जात ॥१२८९॥
इन सब मिलि चारित लियो, अति अगिनित धनत्यागि ।
महावीरतै साठवै, बरस जबू निरबान ॥१२९०॥

---

१ गृहिणी, २ फिर भी, ३ अधिपति, ४ सुलाने वाली विद्या ।

१० बोलविच्छेद—

भए तहाँ तिहि समय तै, ये दस बोल बिछेद।
मनपरजाईज्ञान १ इक, परमावधि २ पुनि वेद ॥१२६१॥
लब्धपुलाकी ३ तीसरी, आहारक तन ४ फेर।
पुनि चारित त्रय भाँति कौ, ५ कह्यौ पाचवौ हेर ॥१२६२॥
इक परिहार विशुद्धता, ताकौ पहलौ भेद।
सम्पराय सूछम बहुर, यथाऽऽख्यात पुनि वेद ॥१२६३॥
छपकस्रेन ६ छह पुनि कही, उपसम स्रेनी ७ सात।
जिनकल्पी ८ कही आठ नव, केवलज्ञान ९ विख्यात ॥१२६४॥
दसवौ मोख १० पधारनौ, ये दस बोल बखान।
कहे भए विच्छेद ये, जिन जबू निरवान ॥१२६५॥

प्रभवआचार्य—

जिन जबू के पाट पुनि, प्रभव स्वामि थिर होय।
यौ विचार चितमैं कियो, पाट जोग नहि कोय ॥१२६६॥
तब सय्यभव विप्र इक, राजगृही के माह।
जज्ञ करत लखि तासु मै, साध जोगता छाँह ॥१२६७॥
तिहि परमोद प्रबोधिकै, सब दिज[1] कर्म छुडाय।
ससय सकल मिटायकै, आतम दरस कराय ॥१२६८॥
गुरु मुख सुनि उपदेश पुनि, चारित लीनौ जानि।

शय्यभयआचार्य—

प्रभव स्वामिके पाट पर, बैठे सो सुज्ञानि ॥१२६९॥
पाछै तिनकै सुत भयो, तिय के गर्भाधान।
ताहू कौ लघु आयु लखि, पितु परबोध्यौ जान ॥१३००॥

---

१ ब्रह्मण।

महाबीर निरबान तें, प्रभव मृत्युकौ काल ।
भयो बरस अट्ठानवै, जब बीते तिहि हाल ॥१३०१॥
पुनि सुयभव पाट पर, जिनकौं बाछस गोत ।

यशोभद्र—

जसोभद्र तुग्यायनी, गोत सूरबर जोत ॥१३०२॥
पुनि तिनके द्वै शिष्य इक, माढर गोती जोय ।
आर्य विजय सभूति पुनि, दूजे कहिए सोय ॥१३०३॥
भद्रबाहु आरज थविर, जासु गोत प्राचीन ।
थविर विजय सभूति के, थूलभद्र आधीन ॥१३०४॥
पहटनपुर द्विज पुत्र द्वै, लीनौ चारित चाह ।
भद्रबाहु तामैं अनुज,[1] अग्रज[2] मिहिर बराह ॥१३०५॥
अनुजै लख कैं जोग गुरु, दीनो अपनौ पाट ।
अग्रज अति दुख पायकैं, कियो नृपनि पै काट ॥१३०६॥
जोतिस बल जो जो कह्यो, नृपसौं मिहिर बराह ।
गुरु प्रतापतैं सब भई, झूठी ताकी चाह ॥१३०७॥
लाज पाय मरि मिहिर फिर, व्यंतर व्है दुखदाय ।
मरी करी जिन जननमैं, प्रगट निपट अधिकाय ॥१३०८॥
सो गुरु अपनी शक्ति करि, दुखहर[3] तवन बनाय ।
सते वानी जल छिरकि, दीनौं दोन मिटाय ॥१३०९॥

स्थूलभद्र

थूलभद्रकी सुभ कथा, अब सुनिए चितलाय ।
शिष्य विजय सभूतके, जिन जनकँ सुखदाय ॥१३१०॥
गोतम गोती ते भए, कहौं सुनौं ते गौन ।

---

१ छोटा २ बड़ा ३ उपसर्ग हर स्तोत्र ।

पाटलपुरमै नँन्द नृप, ताकौ मत्री जौन ॥१३११॥
नाम कह्यो सिकडाल तिहि, द्वै सुत जाके जान ।
थूलभद्र पहिले भयो, दूजै सिरिया मान ॥१३१२॥
सात सुता ताके निपुनि, श्रुतिधर[1] तिन करि सोय ।
जीत्यो पण्डित बररुची, राजसभामैं कोय ॥१३१३॥
तिन पडित सिकडालकौ, दीनो दोष जगाय ।
नृप कोप्यो तव मत्रिपै, मत्रि मर्यो विष खाय ॥१३१४॥
तव सिरियहि बोल्यो नृपति, देन मत्रिपद ताहि ।
तन अग्रजकी बात यह, जाय सुनाई चाहि ॥१३१५॥
सो हो गणिका गेह मैं, कामकोस[2] जिहि नाम ।
जाकौ जुग बीते तहाँ, फस्यौ विषय विपधाम ॥१३१६॥
साढे वारह कोटि धन, मुहर खरचि करि पाय ।
बस कीनो ही विवस व्है, सुवस वस्यो तहँ जाय ॥१३१७॥
पाय खवरि नृप चहन की, पहुच्यो राज हजूर ।
पहुचि सोचि कछु समभि पुनि, भयो विरति भरपूर ॥१३१८॥
लई विजय संभूति तै, चारित दिक्षा जान ।
सिरिया पुनि मत्री भयो, नृप आज्ञा परमान ॥१३१९॥
वोधन गणिका कोस कौ, थूलभद्र तहँ जाय ।
चतुरमास तिहि पर रह्यो, जल जलजन के न्याय ॥१३२०॥
भाख्यौ साढे तीन कर, हम तै रहिको दूरि ।
मन आवै भावै मुकर, सरस भाव रस पूरि ॥१३२१॥
तैसे ही औरो तवै, तिहि गुरुभाई तीन ।

---

१ पदानुसारिणी लब्धि २ याम विलासिनी कोशा वेश्या ।

लगे करन तप तीन थल, अप अपने मति लीन ॥१३२२॥
सिंह सदन मुख इक बस्यो, एक कूप मुख आय ।
इक अहिगृहमुख सबन यो, बरषा दई विताय ॥१३२३॥
थूलभद्र कीनौ कठिन, पै सबतै तप जान ।
खडग धार तीछन अनी, घनी बनी दुख खान ॥१३२४॥
इक बरषा रित रस भरी, घन घुमडनि चहु ओर ।
सरसनि बरसनि परसपर, कल कूकनि पिक मोर ॥१३२५॥
झमकनि चमकनि चचला, गरजनि सरजनि काम ।
मही महा आकास सब, भयो उदीपन धाम ॥१३२६॥
अरु युवती नवयोवना, भूसन वसन वनाय ।
हाव भाव दृग भौह के, अरु अनुभाव विभाव ॥१३२७॥
नृत्य नाट्य गुणगानके, तान ताल मिति मान ।
बाजनि बीन प्रवीन कर, सुर लैलीन निदान ॥१३२८॥
एते सब बाधक अधिक, साधक साधननार ।
डिग्यो न डग भरि अचल मति, थूलभद्र निरधार ॥१३२९॥
वरषा बीतै गुरु निकट, निपट विनय जुत सोय ।
ल्यायो[1] गनिका वोधि सँग, कृपा दीठ गुरु जोय ॥१३३०॥
कहो अहो दुक्कर दुलभ, तुव[2] तप यों द्वै वेर ।
एक वेर तिनसों कह्यो, तीन शिष्य तन हेर ॥१३३१॥
ते मनमै दुख पाय अति, कोप गोप मुख फेर ।
सिंघ गुफा वासी मुनी, दूजी वर्षा फेर ॥१३३२॥
उपकोस्या वेस्या सदन, पावस करन निवास ।
आस धारि मनमें चह्यो, अज्ञा वर गुरु पास ॥१३३३॥

---
१ ले भाना २ तेरा

ज्वाब न दीनौ गुरु जबै, साधुसु तब तिहि काल।
बिनुही गुरु अज्ञा गयो, गणिका गेह सभाल ॥१३३४॥
धर्मलाभ तासौ कह्यो, तिन चाह्यौ धनलाभ।
वसीकरन मोहन भर्यो, गुन मय गनिका गाभ ॥१३३५॥
चितवत ही तन मन लियो, धन बिन सर्यों न काम
नृप नेपाल सुदेश तब, गयो साध धन काम ॥१३३६॥
भरि बरषा रितु मेह मै, नेह बिबस वस काम।
नदी झील झेलत चल्यो, छल्यो छबीली वाम ॥१३३७॥
तहां जाय जाच्यो नृपनि, तिन सनमानि बुलाय।
दियो रतनकंबल सु लै, आयो तियपै धाय ॥१३३८॥
उपकोस्या वेस्या निकट, कियो निवेदन सोय।
तिन लै पगसौ पौछि पुनि, फेक्यो कादव मोय ॥१३३९॥
अरु भाख्यो ता साधसौं, अपनौ कवल देख।
देखि साध दुख पाय अति, कहन लग्यो सुविसेख ॥१३४०॥
केतो दुख सहि यह लह्यो, तुव हित लायौ जान।
सो तैं यो त्याग्यो तुरत, यह बहुमोल अजान ॥१३४१॥
सुनि गणिका लागी कहन, सुनरे मूरख मूढ।
यह कवल बहुमोल तैं, मान्यो जान्यो गूढ ॥१३४२॥
अति अमोल त्रय रत्न जे, ज्ञान दरस चारित्र।
हाथ गँवाए आपने, क्यो पछिताय न मित्र ॥१३४३॥
सुनि मनको धिक्कार करि, बिरति भयो सो साध।
छाडि राग ताको तुरति, गहि वैराग अबाध ॥१३४४॥
वेग जाय गुरु पाय परि, दोष खिमाय नजाय।
गह्यो ज्ञान पथ परमपद, लह्यो वढ्यो सुभ भाय ॥१३४५॥

गणिका समकित धारनी, कोस नाम अभिराम ।
थूलभद्र जिहि बोध दै, लाए है सो बाम ॥१३४६॥
सभा माहि नृप नन्दके, इक दिन इक रथकार ।
धनुबिद्या कर आँब फल, दियो गरब उरधार ॥१३४७॥
नृप परसस्यौ ताहि सुनि, कोश गरब के भार ।
नाची सूची अग्र पै, कण ढेरी पर धार ॥१३४८॥
देखि सभा जन तिहि समय, विस्मै मय सब होय ।
अति परससी नृप सहित, हिय हित हेत समोय ॥१३४९॥
तव गणिका बोली बिदित, यह कछु वडी न वात ।
महापुरुष ह्वैबो कठिन, कामादिक तजि तात ॥१३५०॥
सुनि यह राजा नन्द हू, वोध पाय सुख छाय ।
थूलभद्र के साथ ह्वै, भद्रवाहु पै जाय ॥१३५१॥
चारित लै पूरब पढे, दस मुख ही तै सोय ।
चारि पढे पुनि सूत्रतै, पूरव पूरे होय ॥१३५२॥
महावीर की मुक्ति तै, थूलभद्र परलोक ।
द्वै सै पद्रह वरस पर, लीजै जान असोक ॥१३५३॥
प्रभवरु सिय्यभव जसोभद्र विजय सभून ।
भद्रवाहु पुनि थूल यह, छह नुत केवल पूत ॥१३५४॥

समाचारी

(१) सतनके जे आचरण, अव सव सो सुनि येह ।
साध समाचारी सकल, अट्ठाइस गनि [1] लेह ॥१३५५॥
खानपान सचार [2] अर, रहनि चहनि दै आदि ।
अनुचित उचित विचार सौं जेते बिवहारादि ॥१३५६॥

---

१ गिनना, २ चलना फिरना,

चतुरमास बरसातमै, क्रिया विवेक विचार ।
सदाचार जे साधके, समाचार निरधार ॥१३५७॥
वरषा रितु आरभमै, छाडि सकल आरभ ।
चारि मास के नेम गहि, साध अलोभ अदभ ॥१३५८॥
रहै एक थल माहिकौं, मिति अहार बिवहार ।
सो थल निजके हित सजै, ग्रहबासी साचार ॥१३५९॥
स्वच्छ सुद्ध मृदु भूमि करि, लीपि पोति धवलाय ।
छात छौनि[1] त्रिन[2] छान[3] करि, छाय बिछौनि[4] बिछाय ॥१३६
नाल[5] प्रनालन[6] की निपट, सुचि करि गच[7] ढरवाय ।
साध साधवी कौं ग्रही, ऐसै थल पधराय ॥१३६१॥
रहै साध तिहि स्वच्छ थल, भर चौमासा छाय ।
सुमन सुबच सुभ करमकौ, स्वच्छ सुशील सुभाय ॥१३६२॥
तहा प्रथम इक मास पर, जव बीतै दिन बीस ।
भादौ सुकला पचमी, सकल तिथन मनि सीस ॥१३६३॥
आसाढी पून्यौ हि तै, दिन पचासवौं जोय ।
बढै न तामै एक दिन, घटै तो घटती होय ॥१३६४॥
ता दिन पर्व पजूसना, महावीर जिन कीन ।
गोतमादि गनधरनहू, त्यौंहि कियो प्रवीन ॥१३६५॥
त्यौ शिष्यन आचारजन, थविरनहू मिलि सर्व ।
उपाध्याय कीनौ करै, त्यौं हमहू सो पर्व ॥१३६६॥
(२) औखध अरु आहार हित, गमनागमन विचार ।
सव दिस ढाई कोस मिति, साधनको सचार ॥१३६७॥
पै निसि अपने ठौरही, आय रहै सो साध ।

---

१ पृथ्वी, २ घास, ३ छप्पर, ४ पलास्टर ५ मोरियाँ, ६ गटर, ७ चूनेकी बनावट

आन ठाउ निसि बसि रहन, होत साधको बाध ॥१३६८॥

) वहै निरतर जो नदी, जल सब काल प्रवाह ।
साध गमन आगमन तहँ, अति अनुचित अवगाह ॥१३६९॥
होय जानुतै हेठ जल, तिहि सरितामै सोय ।
वगपग डगमग माहि जिम, अध ऊरध गति जोय ॥१३७०॥
ऐसै जो जन चलि सकै, सूधो पाय उठाय ।
अल्प अ भमै साध यौ, जाय सकै तो जाय ॥१३७१॥

) ऋश जड अरु जड वक्र जे, दोय भाति के साध ।
तिनसौ गुरु जिहि विधि कह्यो, तिहि विधि वाढि उपाध १३७२॥
ग्लान[1] साध आहार अरु, ओषध हित तजि वास ।
अथवा निज आहार हित, विहरै ग्रहपति पास ॥१३७३॥
गुरु निदेसतै तनकहू, घट वढ चहै न सोय ।
लैन दैन अनुचित उचित, गुरु वचननतै होय ॥१३७४॥
ग्लान साध निज हित विहरि, वहिरावन विवहार ।
गुरु निदेसतै तनकहू, न्यूनाधिक न विचार ॥१३७५॥

) तरुन समर्थ अरोग जे, साध तिन्है इंहि काल ।
वरषा मे वरजे इते, पँच रस गुरु वच पाल ॥१३७६॥
दूध दही घी तेल गुड, पाँच विगय ये जान ।
साध खानमै उचित नहि, जौ लौ तनमै मान ॥१३७७॥

६) ग्लान दुखी हित साध जो, ग्रही गेह चलि जाय ।
लेइ तितोई[2] जो कहै, रोगी अरु जो खाय ॥१३७८॥
जदपि ग्रही[3] दे अधिक अरु कहै साध तुम लेहु ।
उवरै[4] तो तुम विहरियो, अथवा औरन[5] देहु ॥१३७९॥

---

१ विकृत प्रकृति, २ उतना, ३ श्रावक, ४ बच जाना, ५ औरोंको,

तऊ उचित नहिं साधकौ, लैनौ अधिक अहार ।
ग्लान साध हित हूं न लै, बिना कहै ग्रहधार ॥१३८०॥
(७) थबिरकल्पि श्रावक सुखद, साध सेव परबीन [१] ।
लहुड बडाई तास मै, भेद न मानै दीन ॥१३८१॥
सब साधनसौ यौं कहै, जो चाहो सौ लेहु ।
तदपि अनलखी [३] बस्तुकौ, कहै न तिनसौ देहु ॥१३८२॥
अति उदार दातार घर, जो न होय सो बस्त ।
कष्ट होय दीवौ [४] चहै, जिह किह भाँति ग्रहस्त ॥१३८३॥
पै जो अनदेखी चहै, वस्तु कृपनपै जाय ।
तौ कछु तैसौ दोष नहि, जैसौ कह्यो सुनाय ॥१३८४॥
(८) प्रतिदिन लेत आहार जो, साध निरन्तर कोय ।
एकै बार ग्रहस्त घर, करै गोचरी सोय ॥१३८५॥
पाधा [५] तपी अचारजरु, ग्लान बाल हित जोय ।
ग्रही गेह द्वै बार हूं, जाय न अनुचित होय ॥१३८६॥
व्रती इकतर जो मुनी, ताहि गोचरी हेत ।
अनुचित नहिं द्वै वार जो, जाय ग्रही ग्रह खेत ॥१३८७॥
एकै बिहरन माहि सो, जो जानै संतोष ।
धोय पौंछिकै पात्र फिर, चहै न जाचन दोष ॥१३८८॥
नाही तो ते पात्र सब, अनधोए ही फेर ।
लै ग्रहस्त घर जायकै, जाचै दूजी वेर ॥१३८९॥
द्वै उपास साधन करै, जै पारन दिन सोय ।
दोय वेर जाचै तऊ, अनुचित तिन्है न होय ॥१३९०॥
साधक तीन उपास के, ग्रही गेह त्रय वार ।

---

१ देशकालज्ञ २ छोटाई-बड़ाई ३ विनदेखी ४ देना, ५ उपाध्याय,

जाचै तो अनुचित नही, एही क्रम निरधार ॥१३९१॥
पाच सात दिन पाखके, बास करै जो कोय ।
तिन्है नेम नहि जब चहै, चहै ग्रही घर सोय ॥१३९२॥
पै मद माया कोप अरु, लोभ मान तजि साध ।
ग्रही गेह मै गोचरी, विधिवत करै अबाध ॥१३९३॥
(९) नित मितभोजी साधकौ, सब विधिकी जो बार ।
विधिवत ले अनुचित नही, यौ भाख्यौ निरधार ॥१३९४॥
एकतर वासी तपी, त्रय विधिकौ जल लेय ।
कर धोवन अरु पात्रकौ, भात मॉड पुनि जेय ॥१३९५॥
तिल तुस जव धोवन सलिल, तीन भाति को जोय ।
दोट [1] उपासी साधको, उचित कहावै सोय ॥१३९६॥
तीन उपासी साधकौ, तीन भाति कौ वार [2] ।
काजी माडरु उष्ण जल, पीवै उचित विचार ॥१३९७॥
तीन वास तै अधिक तप, करै जहा लौ साध ।
तिन हू कौ केवल उचित, उष्णोदकै [3] अबाध ॥१३९८॥
सीत [4] चिकनई [5] रहित जल, तीन उवालि उवालि ।
तीन वार तिहि छानि पुनि, स्वच्छ पात्रमै ढालि ॥१३९९॥
अधिक नूनता करि रहित, मित जल ऐसो जोय ।
साध यमी [6] नियमी व्रती, इह विधि साधै सोय ॥१४००॥
(१०) ग्रही वशीके पात्र मै, दे अहार तिहि काल ।
कौर गिरै कौ सीत इक, दात नाम सो हाल ॥१४०१॥
ऐसै जौलौ पात्रसै, टूटै नहि जल धार ।
एक बूद वा घूट इक, सो जल दात विचार ॥१४०२॥

---

१ दो उपवासी २ पानी ३ गर्म पानी ४ ठडा ५ चिकना ६ पाच महाव्रती

भोजन जलके दात को, नेम करै नित साध ।
चार पाच तै अधिक नहिं, अनजल दात अबाध ॥१४०३॥
नेम करै तेतौ[1] चहै, न्यून अधिक नहि होय ।
भूख रहै तौ साध फिर, जाय न जाचन सोय ॥१४०४॥
(११) विवाहादि सुभ काज मै, जहाँ मिलैं नरनारि ।
भीड होय तासौ कहै, सखड[2] नाम बिचारि ॥१४०५॥
सो सखड पोसाल तै, सात सदन के माहि ।
होय जहाँ तो तिहि सदन, उचित न साधै जाहिं ॥१४०६॥
(१२) जिनकल्पी करपातरी[3], साध मेहके माहि ।
उचित नही आहार हित, ग्रही गेह ते जाहि ॥१४०७॥
गमनान्तर अथवा तहाँ, विहरन समै अहार ।
जो बरसै बरसातमै, नान्ही बडी फुहार ॥१४०८॥
काँख कूख तर हाथ सौ, ढापि अहार छिपाय ॥
छानि छात छित रुहतरै, जाय बचाय सुखाय ॥१४०९॥
थविरकल्पि जे पात्रधर, ते बरखा रितु माहिं ।
कामरि चादरि ओटि ते, अल्पवृष्टि मै जाहिं ॥१४१०॥
ग्रही गेह मै पहु चि जौ, बरसत खुलै न मेह ।
तहा न रहनौ साधको, उचित विना सदेह ॥१४११॥
आन थान वा वृक्ष तर, वा अपने थल आय ।
रहै रहै नहि पै तहाँ, साध ग्रही ग्रह छाय ॥१४१२॥
जो कदाचि थिति थानमै, करै रसोई कोय ।
अरु विहरावै साधकौ, भाव पूरवक सोय ॥१४१३॥
साध पहु चि पहिलैं जितौ, जो अनसीझ्यो होय ।

---

१ उतना, २ प्रीतिभोज (जौनार) ३ हाथ में आहार लेने वाला

सोई बिहरै अरु न ले, पाछै सीझ्यो सौय ॥१४१४॥
अरु जो बिहरनकाल मैं, खुलै न क्यौ हू मेह।
पहर पाछलै जायकै, खाय तहा पुनि तेह ॥१४१५॥
धोय पौंछिके पात्र तब, रबि रहतै घर आय।
रहै रहै नहि रात तहँ, ग्रही गेह मै छाय ॥१४१६॥
(१३) मेह अछेह न देह जौ, जान साधकौ आय।
ग्रही गेह ते तौ तहा, ठाढौ रहै सुभाय ॥१४१७॥
एक साध इक साधवी, कै द्वै कै इक दोय।
त्यौंही साधरु श्राविका, मिलि नहिं ठाढे होय ॥१४१८॥
सग बाल वा बालिका, जऊ पाचवौ होय।
तऊ एक थल मिलि रहन, अनुचित जानौ सोय ॥१४१९॥
जो वा घरके दर[1] वहुत, अरु बहु नरकी दीठ[2]।
निकट वृद्ध वृद्धा किधौ, तो नहि अनुचित डीठ[3] ॥१४२०॥
पै तिहि घर निसि नहि वसै, उठ आवै निज गेह।
साँझ समय लौ राह लखि, वरसै मेह अछेह ॥१४२१॥
(१४) खान पान स्वादिम असन, चारि भाँति आहार।
आन साध हित हेत जो, साधै साध विहार ॥१४२२॥
ताकी रुचि पहिचानिकै, पूछि सुभाव विचार।
तातै अधिक न ऊन[4] सो, विहरै साध आहार ॥१४२३॥
(१५) तन कौ तनके अग सब, जौ जल भीजे होय।
भोजन चार्यौं[5] भाति कौ, साध न करै कोय ॥१४२४॥
तिन मै तन मैं सात ये, अग प्राय जहँ वार।
चिर थिर रहि नहिं सूकई, ताकौ अधिक विचार ॥१४२५॥

---

१ द्वार, २ दृष्टि ३ देखना, ४ कम, ५ चारो,

कर कररेखा दोय ये, नख नखसिखा सुचार ।
भौह अधर अरु वोठ ये, सातौ जल आधार ॥१४२६॥

(१६) प्रान नील बीजरु हरित, फूल अँडज ये नेह ।
उबर तेऊ बारि ये, आठौ सूछम देह ॥१४२७॥

प्रान जीव सूछम जिते, बिद्री तिद्री देह ।
पाँच रगके जिन कहे, ते अब सब सुनि लेह ॥१४२८॥

नील पीत सित श्याम अरु, अरुन बरन बपु जोय ।
तिनमे सूछम कथुआ, उबरै जाय न सोय ॥१४२९॥

चालन हालन तासु कौ, नजर न आवै कोय ।
ग्यानदीठ लहि नजर लखि, साध उधारै सोय ॥१४३०॥

पात्र आदि उपगरन सब, यातै बारबार ।
झारि पौछि पडलेह करि, राखे साध बिचार ॥१४३१॥

नील सूछमी जीव सब, त्यौही पचरग जान ।
पडलेहै उपगरन सब, जैनी धरम निधान ॥१४३२॥

त्यौ अन्नादिक बीजमै, सब रग सूछम जीय ।
जानि ज्ञान दृग साध तिहि, लहि पडलेहन कीय ॥१४३३॥

हरित जीव सूछम जिते, पचरग भुवरग होय ।
तिनहूतै उगरन सबन, पडलेहन सुभ सोय ॥१४३४॥

फूल जीव सूछम सकल, पचरग हू तिहि रीत ।
उपगरनादिक थल सकल, पडलेही करि प्रीत ॥१४३५॥

पुनि पिपीलिका आदि के, सूछम अड जितेक ।
तिनहूतै पडलेहिये, उपगरनादि तितेक ॥१४३६॥

लैन सूछमी जीव जे, भवमै करै निवास ।

तिनहू तैं पडलेहिये, पात्र वास[1] अरु बास[2] ॥१४३७॥
नेह जीव सूछम कहे, हिमकर काहल ओस ।
इनतै पडलेहन विना, लगत जैन मत दोस ॥१४३८॥

पाच समिति—

सुमत पाच जे जिन कही, तामे ईर्या एक ।
मग पग धरिबे माहि जो, रच्छा जीव विवेक ॥१४३९॥

ईर्यासमिति—

साध एक बरदत्त तिहि, ईर्या सुमति पिछानि ।
लेन परिच्छा सुरग ते, सुर आयो इक जानि ॥१४४०॥
द्वै उपजाई मेडकी, पग मग अगमन आय ।
पाछै द्वै गज होय कै, प्रेरन कीनौं धाय ॥१४४१॥
करिन पकरि कर सौ लयो, साध उठाय अकास ।
फिर भुव पटक्यो तउ न सो, भूल्यो जीव विनास ॥१४४२॥
तब मनके परनाम लहि, सो सुर सिर पग नाय ।
गयो आपने सदनकौ, सव अपराध खिमाय ॥१४४३॥

भाषासमिति—

सुमति दूसरी जिन कही, भाखा सुमति बखान ।
वाक विवेक विचार जिहि, भाषत सुमति सुजान ॥१४४४॥
तहा एक दृष्टात नृप, पुर घेर्यो रिपु आय ।
साध एक तिहि नगर तै, वाहर निकस्यो धाय ॥१४४५॥
कटक लोग तासौं लगे, पूछन मुनो सुजान ।
या पुरमै केतिक कटक, हमसौं कहो बखान ॥१४४६॥

---

१ कपडा २ स्थान या उपाश्रय ।

सुनि मन अनुचित जानकै, बोलनि बोल्यो सोय ।
कटक सुभट पूछ्यो जिनन, तिनके सनमुख होय ॥१४४७॥
सुननहार देखत नही, लखै सुनै नहिं तेह ।
सुनै लखै बोलै न ते, कहि गुप कियो अछेह ॥१४४८॥
जानि बावरौ ताहि तब, लोगन तज्यो निदान ।
वाक विवेकी साधकी, भाषा सुमति पिछान ॥१४४९॥

एषणासमिति—

तीजी कहिए एषणा, साध भक्ति चित धार ।
घिन जिनके मन सहि रहै, सुमति ईषणा सार ॥१४५०॥
नदषेन द्विज सुवन तिन, साध समागम पाय ।
चारित लै तप आदर्यो, अमर एक तहँ आय ॥१४५१॥
लैन परिच्छा साधकी, मनम कपट बढाय ।
साध रूप अनुरूप तिन, धरे देह द्वय चाय ॥१४५२॥
इक रोगी बनि रहि तहा, दूजहिं प्रेर्यो जाय ।
कही बात नन्दसेनसौ, ताकी विथा सुनाय ॥१४५३॥
सो सुनि सग अहार लै, वनमै पहुच्यौ जाय ।
धरि सनमुख सो साधकै, बोल्यौ विनय सुनाय ॥१४५४॥
पूज ! नगरमै आइयै, सेवा नीकै होय ।
उन भाखी मो पग न मग, सकै चलन गति खोय ॥१४५५॥
नन्दसेन सो साध तब, लीनी कंध चढाय ।
मारगमै मलमूत करि, दीन्हौ ताहि न्हवाय ॥१४५६॥
नदसेन मन तनक हूं, मान्यौ नाहि सुखेद ।
तनमै चदन लेप तैं, जान्यौ आन न भेद ॥१४५७॥

धन्य भाग्य निज जानि अरु, तन पवित्र अनुमान ।
अमर ग्यान करि जानि धरि, दिव्यरूप सुखदान ॥१४५८॥
नदषेनके पाय परि, सब अपराध खिमाय ।
जस गावत भावत चल्यौ, सुरपुर पहुच्यौ जाय ॥१४५९॥

आदाननिक्षेपसमिति—

चौथी सुमति निखेवनी, वधन सहत प्रतिकूल ।
करी साध पडलेह पै, गयो समय तहाँ भूल ॥१४६०॥
जब घनतै निकस्यौ लख्यौ, रवि तब जानी चूक ।
फिर पडिलेहन शिष्यको, कह्यौ पूजनै[1] कूक ॥१४६१॥
शिष्य बक्र बोल्यौ कहा, झोली मै है सापि ।
सुनि सहि चुप रहि मौन गहि, रहे ओठ मुख ढाँपि ॥१४६२॥
शिष्य गोचरो हेत जब, झोली लई उठाय ।
दोय साँप तामै लखे, रह्यो चकित मै पाय ॥१४६३॥
करन गुरनके वचनकौ, साचौ सासन देव ।
झोलोमै द्वै अहि असिन, उपजाये तव खेव ॥१४६४॥
पर्यो पाय गुरुराय कै, वार वार पछताय ।
प्रति दोनता दिखायकै, लोने दोष खिमाय ॥१४६५॥

उच्चारपासवण—

अब उच्चार सुपासवन, सुमति पाचवी जोय ।
भेद न चौथी सुमति तै, होय तु किंचित होय ॥१४६६॥
सुभूत नाम गुरु शिष्य सौं, पात्र मारजन[2] हेत ।
कह्यो सह्यो नहि तिन कह्यो, उलटि निरट अनुचेत ॥१४६७॥

---

१ आचार्य या गुरु २ देखना या साफ करना ।

नितप्रति कैसो मारजन, कहा ऊट ढवजोय ।
गुरु गुरुता करि सुनि रहे, सासन सुर लहि सोय ॥१४६८॥
ऊट बुलायो पात्रमैं, गुरु बच सत्य निमित्त ।
शिष्य देखि भय पायकै, गुरु महिमा धरि चित्त ॥१४६९॥
पाच सुमति येई कही, साध साधवी जोय ।
तिन्हे उचित ऐसी रहनि, सहनि चहनि बर सोय ।१४७०॥

(१७) साध गोचरी कै लियै, ग्रही गेह जौ जाय ।
विन अग्या गुरु जनन के, क्यो हू आय न जाय ॥१४७१॥
दिक्षागुरु वयगुरु वहुर, विद्यागुरु जे होय ।
तिनको विधिसौ जाय अरु, नहि तौ जाय न सोय ॥१४७२॥
उचितरु अनुचित साधके, सब जानै गुरुदेव ।
यातै तिनके विनु कहै, चहै न एकौ टेव ॥१४७३॥
खानपान जपतप सकल, मलमूत्रादिक कर्म ।
जैसौ जिहि थल काल जो, नितो कहै गुरु मर्म ॥१४७४॥

(१८) खानपान मलमूत्र कै, तप दर्शन के हेत ।
अनत[1] गमन चाहै कियो, साध तजै निज खेत[2] ॥१४७५॥
आन साध थल माहि जो, पाछै रहै निदान ।
ताहि सौंपि उपगरन सब, पाछै करै पयान ॥१४७६॥
जो पूजी पट पात्र दै, आदि अनेरी वस्त ।
कहै अनेरे साधसौं, रहियो लखत समस्त ॥१४७७॥
जब वह भाखै वैन करि, हम लखिहै तुम जाउ ।
तब अपने थल तज कहू, जाय न आन उपाय ॥१४७८॥

---

१ और स्यान-स्थानातर, २ उपाश्रय ।

(१९) चौकी पीढा तखत जे, आसनादि तिहि साध ।
साध ग्रही अग्या विना, बर्तें नही अबाध ॥१४७९॥
बर्तें तासौ पूछिकै, जाकी है सो वस्त ।
झाडै पोछै धूपदै, राखै ताहि समस्त ॥१४८०॥
विंन पडलेहे जौ पडै, खटमल आदिक जीव ।
त्यौ त्यौ सजम नहिं पलै, लागै दोष अतीव ॥१४८१॥
यातैं नाही अति वडे, नहिं अति छोटे लेय ।
तखत आदि पडिलेहियै, सहजे माही जेय ॥१४८२॥
(२०) मलमूत्रादिक त्याग कौ, चतुरमास मैं साध ।
नेम करै थल कौ तहा, निस दिन माहिं अवाध ॥१४८३॥
तीन तीन मडल करै, स्वच्छभूमि दिन देखि ।
तँह त्यागै मल मूत्र कफ, साध साधवी लेख ॥१४८४॥
(२१) साध साधवी मूत्र मल, कफ त्यागनकै काज ।
तीन पात्र राखै निकट, अपने अपने साज ॥१४८५॥
(२२) साध सीस गोलोमके, मान न राखै केस ।
रहै लोच कीने सदा, यही साधु कौ भेस ॥१४८६॥
जो न सकै तो मास प्रति, कतरैं प्रतिद्व मास ।
मुडन करि छह मास प्रति, करै लोच आयास ॥१४८७॥
छठे मास हू जो व्रती, सकै न करने लोच ।
करै अवश्य पजूसना, माहि लोच तजि सोच ॥१४८८॥
(२३) रोस न राखै साध मन, भनै न बोल कुबोल ।
क्रोध विरोध करै न कछु, काहूसौं अनतोल ॥१४८९॥
जो कौनहु सजोग नहि, काहूसौं दुख पाय ।
रोस आन उपजै नउ, तातैं वेह मिनाय ॥१४९०

बारह मास रु दुगुन पख, दिवस तीनसै साठ।
कह्यौ सुन्यौ कीन्यौ जु कछु, होय दोष कौ ठाठ ॥१४६१॥
सो सब अपनी चूक कहि, सबसौ ह्वै कर जोरि।
करि निहोर सिर ढोरिकै, ले खिमाय निज खोरि ॥१४६२॥
भादौं सुकला पचमी तदनतर जो कोय।
साध साधवी श्राविका, श्रावक जिनमत होय ॥१४६३॥
तजै न मन बच कायतै, क्रोध विरोध विचार।
अनाचारि तासौ कहै, तजि तासौ विवहार ॥१४६४॥
जैसे चड प्रद्योत तै, उद्दायन नर राय।
खिमत खामना रीति करि, लीने दोष खिमाय ॥१४६५॥
सो अब कछु सछेप करि, वरनो सुनिये सोय।
उपनय सुन करि मनस्तल-की कलिमल कौ धोय ॥१४६६॥

उद्दायनकथा—

सिंधुदेस सौवीरमै, नगर वीतिभय नाम।
रानी उदयन नृपतिकी, प्रभावती गुणधाम ॥१४६७॥
तहाँ देस गधारतै, श्रावक आयो एव।
दुखी पर्यो सो आइकै, कीन्ही कुब्जा सेव ॥१४६८॥
व्है अरोग गुटिका दए, व्है दासी को एव।
गुणी गुणीपर गुण करै, सुख देवै ततखेव ॥१४६९॥
एक भखै तो नारिकी, होय कुरूप सुरूप।
दूजै इष्ट अभिष्ट तिहि, मिले अदोप अनूप ॥१५००॥
यह कहि सो श्रावक गयो, दै गुटिका निज देस।
तामै दासी खाय इक, भई कनक रग भेस ॥१५०१॥
ता दिन तै ताकौ पर्यौ, सुवरन गुटिका नाम।

नृपति चडप्रद्योत पुनि, चित मै चिंति सुवाम ॥१५०२॥
दूजी गुटिका हूं भख्यौ, मनमै होय सकाम ।
आयो चढि गज अनल गिर, सो नृप ललित ललाम ॥१५०३॥
तिन्ह दासी निसि अपहरी, गयो लेय निज देस।
अति हर्षित मनमोद भरि, चडप्रद्योत नरेस ॥१५०४॥
नृपति उदायन जानि सो, कोपि सैन लै संग ।
चढ्यौ कढ्यौ पुर तै बढ्यौ, रढ्यौ क्रोध अंग अग ॥१५०५॥
उततै चडप्रद्यौत नृप, चढि धरि धायो आय ।
मारग मै सनमुख दुहू, मिले परस्पर धाय ॥१५०६॥
मच्यौ युद्ध अति घोर करि, सोर सुभट दुहु ओर।
लरे मरे पै नहि मुरे, जुरे जग करि जोर ॥१५०७॥
अत उदायन जै लही, सही पराजय आनि ।
जीवत लीनौ बाँधि नृप, चडद्योत वलवानि ॥१५०८॥
विजय धुजा फरकाय तहा, फिरे आपने देस ।
मगमै वरषा काल के, रितुकौ भयो प्रवेस ॥१५०९॥
छौनि छावनी सौ छई, कटकि अटकि तिहि ठौर।
जसकर लसकर परिगयो, जाय छयो छति छौंर ॥१५१०॥
तहाँ पजूसन पर्व नृप, चाहो करन उपास ।
असन हेत वोलन गयो, लोग चडनृप पास ॥१५११॥
उन विच सका भीति करि, कही जननसौ वात ।
मै हू कीनौ आज वृत, भूलै भखौ न भात ॥१५१२॥
नृप उद्दायन सुनि सुवच, तिहि साधर्मी जान ।
खिमत खामना सुद्ध मन, करि कीनौ तजि मान ॥१५१३॥
पग तै निगड छुडाय तिहि, भूषन वसन पिन्हाय ।

नव निधि रिधि सिधि सग दै, दीनौ देस पठाय ॥१५१४॥
ऐसैं श्रावक श्राविका, साध साधवी जोय ।
छाँडि कपट मिल परसपर, दोख खिमावै सोय ॥१५१५॥
गुरुजन हू तै शिष्यप्रति, दोष खिमावै जान ।
ताहूको दृष्टात अब, सुनि लीजै दैकान ॥१५१६॥
सो कौसवी नगर जहँ, समोसरे भगवान ।
चद सूर आए तहा, चढि निज मूल विमान ॥१५१७॥
मृगावती अरु चदना, सुभग साधवी सार ।
जे जिनबानी सुनि तहाँ, चलि आई पग धार ॥१५१८॥
चद सूर निज थल गए, प्रथम साझ तै सोय ।
मृगावती जिनवचन करि, मेहिरही तहँ जोय ॥१५१६॥
गई गेह निज चदना, रही जाय तहँ सोय ।
मृगावती हू चेति पुनि, गई तहा तिहि जोय ॥१५२०॥
कह्यो भली कीनी न तैं, रही तहाँ चित लाय ।
सुनि सो सहि निज चूक कहि, लीनी खोरि खिमाय ॥१५२१॥
तातै ततछिन तासुकौं, उपज्यो केवलज्ञान ।
लख्यो चदना निकट अहि, तिमिर माहिं तिहि थान ॥१५२२॥
लगी निवारन ताहि तव, पूछ्यो चदनवाल ।
काहि विडारत को निकट, कह्यो भयानक व्याल ॥१५२३॥
ऐसै निविड तमिश्रमैं, पर्यो कौन विधि दीठ ।
भाख्यो केवलज्ञान करि, क्यो पायो सो ईठ ॥१५२४॥
दोपारोपन तुम कियो, विना दोप हू मोहि ।
यो सहि कहि निज चूक कर, जौरि खिमायो तोहि ॥१५२५॥
ताहीते पायो परम, पद यह केवलज्ञान ।

सुनि चदना खिमाय पुनि, तिनहू लह्यौ निदान ॥१५२६॥
ऐसैं कीजे सुद्धमन, खिमत खामना सार ।
कपटकूड नहिं राखिये, ज्यौ गुरु शिष्य कुम्हार ॥१५२७॥
कुभकार ढिग साधकौ, बाल शिष्य इक जाय ।
नित फोडे घट तासु के, कुभकार दुख पाय ॥१५२८॥
बरजै तरजै तासुकौ, पै नहिं हारै सोय ।
नित्त खिमावै दोष पुनि, नित अपराधी होय ॥१५२९॥
ऐसो कपट खिमायवो, कौन काम कौ होय ।
सासु जमाई ज्यो कियो, त्यो मिलि कीजै सोय १५३०॥
इक तिय विधवा लोभिनी, कृपनि बडी धनवत ।
तिहिं सतत एकै सुता, व्याही सुदर कत ॥१५३१॥
जमी जमाई निधिन सो, कृपन जमाई हेत ।
तनिक लेसहू देय नहि, बडी प्रकृत की प्रेत ॥१५३२॥
लोगन बहू दोषी तवे, एक दिना धरि धीर ।
आमन्त्र्यो जम आय है, जानि जमाई वीर ॥१५३३॥
खीर खाँड तिहिं परसि पुनि, घीउ तनक सो डारि ।
आप गई कछु काज कौ, तिन लीनौ सब ढारि ॥१५३४॥
आय सास दुख पाय लखि, बैठी जैवन मग ।
आप अपने मनमैं दुह , भरे कपट रस रग ॥१५३५॥
सास कहे जामात सौं, वलि मो वेटी हेत ।
कवहु वसन भूपन न तुम ल्याये करि हित हेत ॥१५३६॥
कहत जात यो वात अरु, खेचै घृत निज ओर ।
वह ऊ ऐसो वात कहि, निज दिस नेर बहोर ॥१५३७॥
तुम काहू तिहिवार मै मोहित ल्यौनी माय ।

यो कहि खैंचै दुऊ घृत, निज निज कहि दिस चाय ॥१५३८॥
जामाता तब समझिकैं, लीनै दोष खिमाय ।
अलिया गलिया कहि दयो, सिगरो घीय मिलाय ॥१५३९॥
खीर खाँड घृत एक करि, थाली सुकर उठाय ।
गयो पीय मुह तकि रही, सास हिये पछिताय ॥१५४०॥
ऐसैं जिहि किहि भाँति करि, कपट छाँडि तजि क्रोध ।
अलिया गलिया करि तजे, कै तब कूड बिरोध ॥१५४१॥
(२४) तैसैं ही गुरुदेव तैं, शिष्य खिमावै दोष ।
थविर साध तै साधलघु, त्यौ ही लेय सतोष ॥१५४२॥
खिमै खिमावै और सौ, करै न क्रोध विरोध ।
सहै उपसमै सबन सौं, जिनवर बचन प्रबोध ॥१५४३॥
(२५) तीनकाल पोसाल निज, पूजै करि पडलेह ।
दोय बार पूजै तहाँ, जाय साधके गेह ॥१५४४॥
(२६) दिसविदिसन कौ जान जौ, साधहिं होय जरूर ।
आन जातीहिं जताय तव, जाय निकट कै दूर ॥१५४५॥
क्यौकि कदाचित साध सो, तप करि निर्बल देह ।
कै रुजकर मग मैं गिरै, सोधि साध सो लेह ॥१५४६॥
(२७) काहू काज विशेप करि, वैद होत जो साध ।
जाय थान तजि अवधि तिहिं, जोजन पाँच अवाव ॥१५४७॥
तहा जाय आवै वहुर, अपने ही थल फेर ।
जौ न सकै मग में रहै, व्हाँ न रहैं निस वेर ॥१५४८॥
(२८) समाचारि ये जे कही, सत्ताइस तिन माह ।
जे विचार आचार सव, कहे धरमकी छाँह ॥१५४९॥
सूत्र अर्थ जिनवर बचन, जिहिं विधि कियो वखान ।

आप आचरै और जे, तिनहि करावै जान ॥१५५०॥
दुहू लोक सोभा लहै, महिमा बढै अपार ।
अन्त मुक्ति तद भव लहै, करै सुद्ध विवहार ॥१५५१॥
दूजै वा तीजै सुभव, अधिक सात तै नाँह ।
करम बंध सब तजि लहै, परम मुक्तिकी छाँह ॥१५५२॥
ऐसे जिनवर श्रीश्रमन, महावीर भगवंत ।
राजग्रही नगरी जहाँ, सिगरी सभा सुसंत ॥१५५३॥
साध साधवी श्राविका, श्रावक देवी देव ।
साध सभा सुभ सजि तहा, बैठे जिनवर एव ॥१५५४॥
धर्म पजूसन पर्वके, अरु ताके आचार ।
ज्ञातपुत्र महावीर जिन, यौ भाखे विस्तार ॥१५५५॥

कल्पसूत्र रचना काल

वीतराग जिननाथ जे, चरम तिथंकर सार
महावीर भगवंत जिन, तिनकौ यह अधिकार ॥१५५६॥
तिन पायो निरवान पद, तब तै काल प्रमान ।
नवसै अस्सी वरस जब, भये वितीत निदान ॥१५५७॥
भयो पुस्तकारूढ यह, कलपसूत्र सो जान ।

प्रशस्ति—

वरस पाचसै दस तबे, विक्रम नृपके मान ॥१५५८॥
जो संवत अब आज लौं, विक्रम नृप अवनीन ।
भये अठारहसै वरस, अरु तापर अडतीन ॥१५५९॥
दोय सहस अरु तीनसै, आठ वरस परमान ।
महावीर निरवान तै भयो आज लौं जान ॥१५६०॥
कलपसूत्रको मूल यह प्राकृत वानी मा[illegible] ।

लोक असस्कृत ताहि पढि, क्यो हू समझै नाह ॥१५६१॥
तैसी टीका सस्कृत, भई न समझन जोग ।
अरु अनेक ता पर करे, टब्बा जिन जन लोग ॥१५६२॥
एक देसकी भाष सो, गुरजर देसी जान ।
आनदेसके जन तिन्हैं, समझि न सकै निदान ॥१५६३॥
यातै यह भाषा करी, जिहिं सब देसी लोग ।
सुखसौ सब समझै पढै, बढै पुन्य सुख भोग ॥१५६४॥

प्रेरक—

ऐसी मति उर आनि श्रीजिनजन कुल परसस ।
गोत गोखरू जैनमत, ओस वस अवतस ॥१५६५॥
सभाचद नरराय कै, अमरचन्द वर राय ।
तिनके सुत कुलचद नृप, डालचन्द सुखदाय ॥१५६६॥
सुघराई के सुघर अरु, सौहृद सुहृद सुवान ।
सुभ सौभाग्य सुभाग्य अरु, सुठ सौजन्य सुजान ॥१५६७॥
गुनगाहक गुनवान पै, निर्गुन ग्यान निवान ।
समी दमी नियमी यमी, हमी तमी भ्रम भान ॥१५६८॥
दानद सनमानद सुखद, आनद यानद पीन ।
नरमानद मै मगन मन, परमानँद लय लीन ॥१५६९॥

कवि परिचय—

तिन जिनजन सुखहेत अरु, धर्म उद्योत विचार ।
कह्यो रायचदहि चतुर, उपकारी मत धार ॥१५७०॥
कलपसूत्र कलिकलपतरु, भाषाटीका हेत ।
सो अनुसरि जिनयश बचन, सिर धर लई सहेत ॥१५७१॥
निजमति अनुमित करि रच्यौ, वच्यौ न एक प्रकार ।

जैसौ कछु समझ्यो सुन्यौ, पढ्यौ चढ्यौ चितसार ॥१५७२॥
जिनआगम मरमग्य जे, सद्‌गुन सुहृद सुजान ।
करत बीनती दीन व्है, तिनसौ हौ अनजान ॥१५७३॥
न्यूनाधिक गुनदोष जो, पडै पढत कहु दीठ ।
लीजै चूक सुधारि धरि, हियै न हसियै ईठ ॥१५७४॥
हौ न हौहु कवि औंर मुहि, कविताकौ नहि जोम ।
यह लहिकै कीजै कृपा, जे जन मन सम सोम ॥१५७५॥
सवत ठारहसे बरस, सरस और अडतीस ।
विक्रमनृप बीतै भई, टीका प्रगट बुधीस ॥१५७६॥
चैत चादने पाखकी, सुभ नौमी अभिराम ।
पुष्य नखत धृत जोग वर, मगल वार ललाम ॥१५७७॥
जनम सुपारसपरसथल, पुरी बनारस नाम ।
जनम भूमि या ग्रथकी, भई छई सुखधाम ॥१५७८॥
पढै सुनै नरनारि जे, परव पजूसन माँह ।
पाप ताप सताप तजि, लहै मुकत पद छाह ॥१५७९॥
कलपसूत्र कलिकलपतरु, आदिनाथ जिहि मूल ।
जाके जिन वाईस वर, कध साख दल फूल ॥१५८०॥
महावीर वर जस जहा, सुफल फल्यो फल रूप ।
जामै माधुरता सरस, सुरस शांत रस भूप ॥१५८१॥
भाषाटीका सुगम यह, कलपभाष्य जिहि नाम ।
ता तरुकी छाया सुखद, जिनजन मन विश्राम ॥१५८२॥
भवतापातप दुसह दुख, चह्यौ निवारन जोय ।
सो जन ऐसी छाह कै, माँहि रहे सुख सोय ॥१५८३॥

कल्पभाष्य अर्थात्

कल्पसूत्र भाषा समाप्त

परिशिष्ट—संख्या १. सातबोल की चौवीसी

श्रीजिनवाणी सरस्वती, प्रथम करू सुप्रणाम ।
गाऊ जिन चौवीस गुण, उपजे मन आराम ॥१॥
मात-पिता-लक्षण-नगर, देहमान-नाम आय ।
सात बोलसे समरिए, श्रीजिनवर सुखदाय ॥२॥

नाभि पिता, मरुदेवी माय, लक्षण वृषभ, ऋषभ जिनराय ।
धनुष पच सय, वनिता ठाय, चौरासी लखपूरव आय ॥३॥
अजित, अयोध्या, जितरिपु तात, गज लक्षण विजया तस मात ।
लाखबहत्तर पूरब आय, धनुष चारसय साढे काय ॥४॥
सभवजिन, सावत्थी पुरी, धनुष चारसय, लक्षण तुरी ।
पिता जितारथ, सेना माय, साठलाखपूरव जिन आय ॥५॥
सवर पिता, सिधार्थी माय, अभिनदन, वनिता, कपि पाय ।
साढे धनुष तीनसय काय, लाखपचास पूरव जिन आय ॥६॥
सुमतिनाथ नगरी कोसला, मेघ तात, माता मगला ।
क्रोच चिन्ह, तीनसय धनु देह, चालीस लाख पूरव थिति एह ॥७॥
धरनृप तात सुसीमा माय, कमलचिन्ह, कसुभी राय ।
पद्मप्रभ, ढाइसय धनु देह, तीसलाख पूरव थिति जेह ॥८॥
वाराणसी, प्रतिष्ठित तात, स्वामि सुपारस, पुहवी मात ।
धनुष दोयसय, पग साथियो, वीसलाख पूरव थिति जियो ॥९॥
माँ लक्ष्मणा, महसेन नरिद, चद्रपुरी, लक्षण जिनचद ।
चद्रप्रभ पूरव दश लाख, आयु डेढ सय तनु, धनुभाख ॥१०॥
रामा सुग्रीव, सुविधि जिनराय, चिन्ह मगर, काकदी सुठाय ।

धनुष एकसय ऊंची काय, दोय लाख पूरब जिन आय ॥११॥
दृढरथ नृप, श्रीनदा माय, भद्दिलपुर, श्रीवत्स जिनराय।
नव्वेधनुष शीतलतनुमान, एकलाख पूरब थिति जान ॥१२॥
जनकविन्हु, विश्ना जिन मात, साहपुरी श्री अश विख्यात।
खगलक्षण, तन अस्सी धनुष, आयु वर्ष चौरासीलक्ष ॥१३॥
श्रीवसुपुज नृप, माँ जिन जया, चम्पानगरि वासुपूज्य थया।
सत्तर धनुष, महिष पग दाख, आयु वर्ष बहत्तर लाख ॥१४॥
पिता ब्रह्म, सेना तस मात, कपिलपुर, जिन विमल, विख्यात।
साठ धनुष, लक्षण वाराह, वरस साठ लख थिति जग नाह ॥१५॥
तात सिहरथ, सुजसा माय, अनतनाथ, नगरी अयोध्याय ।
धनुष पचास, सिंचाना पाय, तीसलाख वरस थिति आय ॥१६॥
भानुभूप, राणी सुव्रता, धर्म जिनेंद्र, रतनपुर हुता।
लक्षण वज्र धनुष पैताल, वरस लाखदस, आयु, दयाल ॥१७॥
विश्वसेन, अचिराके नद, हथिनापुर, श्रीशाति जिनंद।
लक्षण हरिण, धनुष चालीस, वरस लाख थिति पूरी ईस ॥१८॥
सूरपिता, माता जससिरी, लक्षण छाग, पुरी गजपुरी।
कुथु, पेतिस धनुष विचार, आयु वर्ष पचानवे हजार ॥१९॥
राजा सुदर्शन, देवी नार, जिन अरनाथ, गजपुर अवनार।
तीस धनुप, नदावर्त पाय, वर्ष सहस्र चौरासी आय ॥२०॥
मिथिलानगरी, कुभ नरिंद, प्रभावती मां, मल्लीजिनद।
लक्षण कलश, धनुप पचवीस, सहस पचावन आयु जगीस ॥२१॥
सुमति पिता, पोहमा मा नाम, राजग्रही मुनिसुव्रत स्वाम।
वीस धनुष तनु, लक्षण कूर्म, तीस सहस्र वरस थिति, धर्म ॥२२॥
विजय राय वप्रा घर सती, मिथिला नगरी नमि जिनपति।

पद्रा धनुष नीलोत्पल काय, दस सहस वर्ष थिति थाय ॥२३॥
समुदविजय, सोरीपुर, राय, अरिष्टनेमि शिवादेवी माय ।
लक्षण शख, धनुष दस काय, सहसबरस स्वामी सुखदाय ॥२४॥
अश्वसेन, वामासुत, पास, अहिलक्षण, बाराणसिवास ।
देही प्रभु नव हाथ प्रमाण, बरस एकसय आयु बखाण ॥२५॥
राय सिधारथ, त्रिशलानद, कुदनपुर श्रीवीर जिनद ।
सात हाथ, लक्षण तनु सिह, आयु बरस बहत्तर जिह ॥२६॥
तात-मात-जिनवरके नाम, देहमान लक्षण थिति ठाम ।
याहि प्रभाते भणता सदा, ताहि ज्ञान पावे सपदा ॥२७॥
उपकारी की कीर्ति सदा, पुण्य सुफल पावत धन तदा ।
सबके सफल मनोरथ करो, आपद दुखको दूरहि हरो ॥२८॥

चौवीस जिनवर सहित सुखकर समरताँ सुखपाइए,
इम जाणि प्राणी भावआणी, गुण औ सुजस वखाणिए ।
गच्छ श्री धर्मसिह राजे जिनशासन शृगार ए ।
कृपा तेहनी स्तवन कीधो भविक जन हितकार ए ।
अब्द नद मुनिद रिसि ससि उदय कार्तिक मासए,
वर्धमान सिस कहत दीपू कुलथपुर चौमास ए ॥२९॥

संख्या २. पाँच बोलकी चौवीसी

सकल जिनेसर प्रणमू पाय, सरस्वति स्वामिनि द्यो मतिमाय ।
हिवडे समरू श्री गुरु नाम, ज्यो मनवछित सीझे काम ॥१॥
चौविस जिनवर मात पिता, नामठाम लक्षण जे हता ।
पाच बोलसू करु प्रणाम, करू स्तवन तजकर अभिमान ॥२॥
पहले प्रणमु ऋषभ जिनद, नाभिराय, मरुदेवी नद ।

ऊची काय धनुष पाचसय, वृषभलक्षण, विनीता वसे ॥३॥
बीजा अजित, अयोध्या ठाम, गजलक्षण प्रणमु अभिराम।
जितशत्रु, विजयाके पूत, जिन जोते सब कर्म कसूत ॥४॥
तोजा सभव सुखदातार, सावत्थी नगरी अवतार ।
पिता जितारथ, सेना माय, हयलक्षण, कचनमय काय ॥५॥
चौथा चहुँगति गजन स्वाम, विनीत नगरी जेहनो नाम।
समर पिता, सिद्धार्था माय, कपिलक्षण, अभिनदन राय ॥६॥
समरू सुमति जिनेश्वर देव, लक्षण कौच करू तस सेव।
नगरी जास भली कोशला, मेघ पिता, माता मगला ॥७॥
कोसबी नगरी, धर राय, राणी सुसीमा, जेहनी माय ।
पद्मप्रभ छठवे जिनराय, पद्मलक्ष्म, रक्तोत्पल काय ॥८॥
स्वस्तिक लक्षण, स्वामिसुपास, जपै तो टले गर्भावास ।
पेठ नरेश्वर, पृथ्वी माय, वाराणसी नगरी वर ठाय ॥९॥
शशिलक्षण, चद्रप्रभ देव, चौसठ इन्द्र करे जन्न सेव ।
महसेन पिता, माता लक्ष्मणा, नगरी चारु चन्द्रायणा ॥१०॥
काकदी नगरी अभिराम, लक्षण मगर सुविधि जिन नाम।
पिता सुग्रीव, माता यशरामा, पुष्पदत वीजो तस नामा ॥११॥
शीतल सहजे सुखदातार, भद्दिलपुर स्वामी अवतार ।
दृढरथ राजा नन्दा माय, श्रीवत्सलक्षण प्रणमु पाय ॥१२॥
श्रीश्रेयाँस कहिये ग्यारमो, खड्गलक्ष्म तस भावे नमो ।
सिहपुरी राजा श्रीवीन, माता जेनी सुषिग, वीन ॥१३॥
चम्पापुरी वसुपूज्य राय, जयादेवी राणी तस माय।
वासुपूज्य जिनवर वारमो, महिप लक्षण मुनि भावे नमो ॥१४॥
कपिलपुर राजा कृतवर्म, श्यामाराणी नमा सुकर्म ।

वराह लक्षण श्रीस्वामि विमल, ध्यावत पावे पदवी अमल ॥१५॥
पुरी अयोध्या उत्तम ठाम, अनन्तनाथ स्वामी शुभ नाम ।
मुक्तिपुरीका सीधा साथ, वज्र लक्ष्म वदौ धर्मनाथ ॥१६॥
शाँतिनाथ सोलमा जिनद, जास प्रससा करत सुरिन्द ।
मृगलक्षण, गजपुर सुखठाम, वत्ससेन, अचिरा मा नाम ॥१७॥
कुथुनाथ जगमे सुप्रसिद्ध, ध्यावे पावे अविचल ऋद्धि ।
सुरराजा, माता यशसिरी, लक्षण छाग पुरी गजपुरी ॥१८॥
गजपुर नगर, सुदर्शन राय, देवीराणी छै तस माय ।
लक्षण नद्यावर्त प्रधान, तीस धनुष स्वामी अर जान ॥१९॥
मिथिलानगरी महिमा घणी, राजा कुभ पुत्री तेह तणी ।
प्रभावती राणी तस माय, कलश चिन्ह मल्ली सुखदाय ॥२०॥
राजगृही राजा सौमीत, पदमावति मातानो पुत्र ।
मुनिसुव्रत लक्षण कछवा, प्रणमु भावे जिन वीसवा २१॥
वप्रा राणी राजा विजय, मिथिला पुरी रूप जिन अजय ।
नीलोत्पल लक्षण तस चग, श्रीनमि प्रणमू धर आनद ॥२२॥
सोरीपुर, स्वामी श्रीनेम, मुक्तिवधू परणी जिन क्षेम ।
समुदविजय, शिवदेवी नद, शख लक्षण प्रणमू आनद ॥२३॥
अश्वसेन, वामा तस माय, वाराणसी लक्षण नागराय ।
तेइसमां श्रीजिनवर पास, प्रगट प्रभावे पूरित आस ॥२४॥
श्रीसिद्धारथ त्रिशला माय, कुडिनपुर लक्षण मृगराय ।
वर्धमान जिन चौवीसमो, कर जोडी शुध भावे नमो ॥२५॥
चौवीसो जिनवरके नाम, जो बोले सुधरे तस काम ।
भव भव मागू एहिज देव, बोधबीज साँची जिनसेव ॥२६॥

तपोगच्छ जयदेव सुरिंद, तसपाटे विजयसिंह मुनिंद ।
वाचक भानुचद सुखकार, विवेकचद कह्यो सुविचार ॥२७॥

आलोचनात्मक चौवीसी संख्या ३.

श्रीआदिनाथ करो मा सनाथ, धरो सीस हाथ, रहू चरणसाथ ।
गले नाख फदा है जम फेर घेरे, तुम्हारी सदा भक्ति दो कठ मेरे ॥१॥
तमा नर्क माही महात्रास जेती, वही मै अनती सही सीस केती ।
अब शरण आयो तुम्हारी अजित, तिहू लोकमे देव तुमसो न मीत ।२।
जले थभ केई महा अग्नि के ही, वहा ले चपेका जले सारि देही ।
कही तेल उकालो उडेलो है सारो, अब नाथसभव सहारो तिहारो ।३
कही घाल धाणीनमैं अग पेल्यो, कही नाख ऊचासु तिरसूले झेल्यो ।
कही मार सोटानसू प्राण शके, अब शरण आयो अभिनन्दन के ।४।
कही खड्गसु ले किये फकफका, कही नाग लागे वडे फनफनंका ।
कही अगमे लेय चावे है गुप्ति, अव शरण आयो तुम्हारी हे सुमति ।५
कहू ही क हस्तीनके दत चूरे, कही सार खीलैं दिये वद शूले ।
कही कठफदा गलायो कदम्म, अव शरण आयो तुम्हारी पदम्म ।६।
कही गगन ऊचेनते छिट्टकायो, कही भरके प्याले तप्यो रांग पायो ।
कही सोरमे ले उडायो आकाश, अव शरण आयो तुम्हारी सुपास ।७।
कही जीभ तोडी जमीकद खायो, कभी सीस ले सीतलाकों चढायो ।
दुखी जान काढो प्रभु कालफदा, अव लाज मेरी रखो देव चदा ॥८॥
कही अग मेरा वसोलेसे कटा, कही घाव मेल्यो भरी लूण बांटा ।
कही पेट जमधर दिया आप हाथ,अव लाज रखियो प्रभो सुविधिनाथ ९
कही पांव पकडे शिला पर पछाडा,कही परसु ले हाथ पग जडमे उखाड
कही वाघने गात मुखते विदार्यो, अव शरण सीतल तुम्हारो विचार्यो १

भ्रमत चार गतिमे रुल्यो जीव डोले, गले कालफदा कहो कौन खोले।
जम आय घेरे जबहि जीव धडके, अब शरण आयो श्रेयास वरके ॥११॥
कही जन्मता दु ख जननी कू दीनो, कही अग मेरो सभी काट लीनो।
महा गर्भ के त्रासमे जीव धूजै, अब लाज मेरी तुम्हे वासुपूजै ॥१२॥
कभी मै दरिद्री घरन जन्म लीनो, तहाँ जनक जननोने है काढ दीनो।
वहाँ के दुखनकी सुने कौन गाथा, अब लाज रखियो प्रभु विमलनाथा १३
कभी गलित कुष्टी भई सर्वदेही, जहाँ किलविले कीट वहु जाति के ही।
'महावास दुर्गंध नाख्यो एकात, इस त्रास मे से उवारो अनत ॥१४॥
कही मै पचेद्रीनकी घात कीनी, कभी नगर वन ग्राममे अग्नि दीनी।
दयाहीन होकर किये पाप कर्म, अव लाज मेरी तुम्हे देव धर्म ॥१५॥
कही वाद विकथा विषयभोग भाए, कही आपने दोप परको लगाए।
कही लोभमे झूठ वोल्यो निचत, अव लाज मेरी तुम्हे देव शात ॥१६॥
कही टोलावादी वन्यो द्वेष कीनो, कही धर्म मे क्लेश आवेश लीनो।
कही प्रेम औ शातिको कीनो मथु, अब शरण पाई तेरी देव' कुथु ॥१७॥
भरे आठ मद दुर्मति वुद्धि छाई, विषय मे रच्यो नार ताकी पराई।
जलसारकी नारके सग खायो, अव देव अरनाथकी ओट आयो ॥१८॥
दिनरैन तृष्णा रही अंग छाई, दशो दिश फिर्यो नाथ समता न आई।
धरो जीवएती भर्यो मेरु वाथ, अव लाज मेरी तुम्हे मल्लीनाथ ॥१९॥
सव पाप के वोल कहिये अठारा, करे पाप सव कुछ नही एक टारा।
कभी धर्म अगे न कीनो मुकतजी, अव लाज मेरी तुम्हे मुनिसुव्रतजी २०
सभी सात दुर्व्यसन मैने थे धारे, किए पाँच इद्रीनके भोग भारे।
जव मैं रुला पाँच थावर न साथ, अव लाज मेरी तुम्हें नमिनाथ ॥२१॥
कभी मैं मिथ्यातीनको धर्म पकर्यो, जहाँ मोक्ष कर्मोने झट आके जकर्यो।
भयो मैं असन्नीनमे कर्मकीटं, अव लाज मेरी तुम्हे श्रीअरिष्ट ॥२२॥

मरते जन्मते काल बीत्यो अनंता, अहो देव! को लेसके तास अंता ।
प्रभु पार्श्व एती कृपा अब तो कीजे, भवजलमे डूबेको अब काढ लीजे २३
सहे कष्ट नीगोदके देव! जानो, भ्रमा लाख चौरासी तुमसे न छानो ।
अब हाथ जोडू प्रभु पाय ढोकू, महाभक्ति दीजे महावीर मोकू ॥२४॥

शुद्धि पत्र

पृष्ठांक	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	२४	१	२
१८	१	कोडाकोड	कोडकोड
१८	६	नाजा	तीजो
२५	१	अरि त	अरिहत
२७	२४	मनाहर	मनोहर
४२	२१	मुनि	पुनि
,,	२२	फिरि अरुनोदय समय सुहायो । भयो द्विजन मिली शोर मचायो ॥ ३८७ मे आगे---	
४६	१२	सुनि	मुनि
५६	१८	दिनत	दिनतै
६४	१	वदना	चदना
७५	१५	किनो	कीनो
८५	१	सातव	नानवं
९०	२२	आर	और
१००	४	आठ	नाठ
१०५	९	कहौ	कहो
,,	१३	वद्रप्रभ	चद्रप्रभ
१४०	१२	मनग	मनमं

श्री सूत्रागम प्रकाशक समिति की ओर से प्राप्तव्य साहित्य

सुत्तागम प्रथम अंश	मूल्य	२५)	डाक व्यय	२॥)
,, अलग अलग	,,	,,	,,	,,
सुत्तागम दूसरा अंश	मूल्य	२५)	,,	,,
कल्पसूत्र हिंदी कवितामय	,,			
कश्मीर से कराची	,,	१०॥)	,,	१॥)
वीर स्तुति	,,	३।)	,,	१)
गल्पकुसुमाकर	,,	१)	,,	॥)
गल्पकुसुमकोरक	,,	॥)	,,	=)
दीक्षाविधान	,,	।)	,,	,,
बारामासा नेमिराजुल	,,	=)	,,	,,
शांति प्रकाश	,,	,,	,,	,,

नोट— इतना ध्यान अवश्य रहे कि मूल्य पहले भेजने वालोको ही ग्रंथ भेजे जाते हैं। वी. पी. द्वारा भेजनेका नियम नही है, अत: सूत्रप्रेमी महानुभाव शीघ्रता करें।

निवेदक— मंत्री—श्री रामलाल जैन,

प्रधान—मास्टर दुर्गाप्रसाद जैन B. A. B. T.